मासिक

शिविरा पत्रिका

वर्ष : 52 मई-जून, 2012 अंक : 11-12

प्रकाशन तिथि : 2 मई, 2012

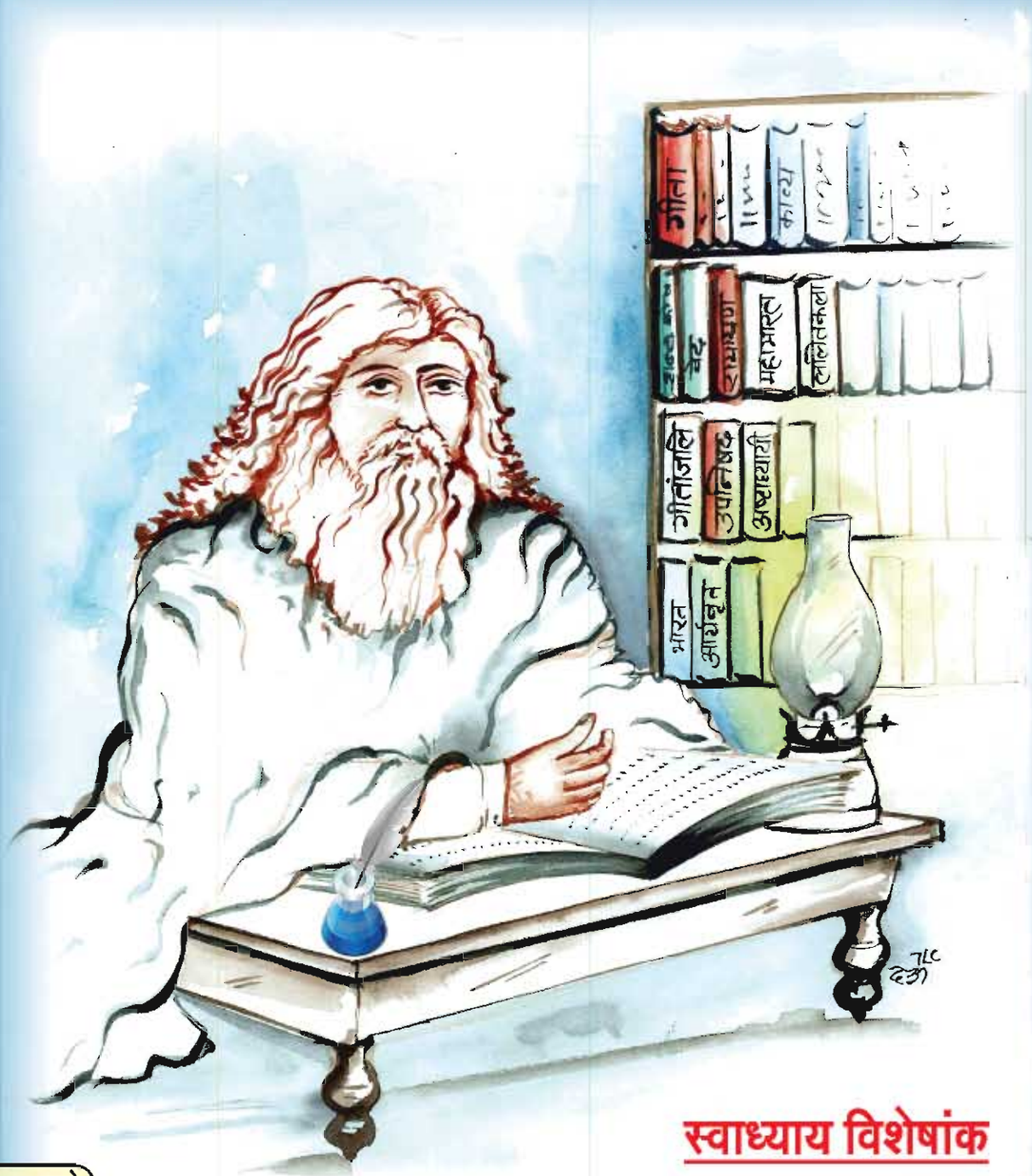

स्वाध्याय विशेषांक

मूल्य : 10 रुपये

बैठक : राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के अन्तर्गत चल रहे कार्यों की समीक्षात्मक बैठक दिनांक 20 अप्रैल 2012 को शिक्षा संकुल, जयपुर में सम्पन्न हुई। (चित्र में) जिला परियोजना समन्वयकों एवं अतिरिक्त जिला परियोजना समन्वयकों को सम्बोधित करते हुए राज्य परियोजना निदेशक (रा.मा.शि.अ.) एवं निदेशक माध्यमिक/प्रारम्भिक शिक्षा श्री हर सहाय मीणा।

उदयपुर : जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, गोवर्धन विलास में स्थापित ऑडियो विज्युअल लेब का एक दृश्य।

सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र गुवाहाटी (आसाम) में पारम्परिक सांस्कृतिक वेशभूषा में प्रस्तुति देता राजस्थान का शिक्षक दल।

जोधपुर : राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में राजस्थानी भाषा, साहित्य, शोध व शिक्षा क्षेत्र में योगदान के लिए राजकीय उ.मा. विद्यालय, परलीका के व्याख्याता डॉ. सत्यनारायण सोनी को सम्मानित करते मुख्य अतिथि नेपाल के पूर्व प्रधानमंत्री झलनाथ खनाल एवं विख्यात गायिका श्रीमती आशा भोंसले।

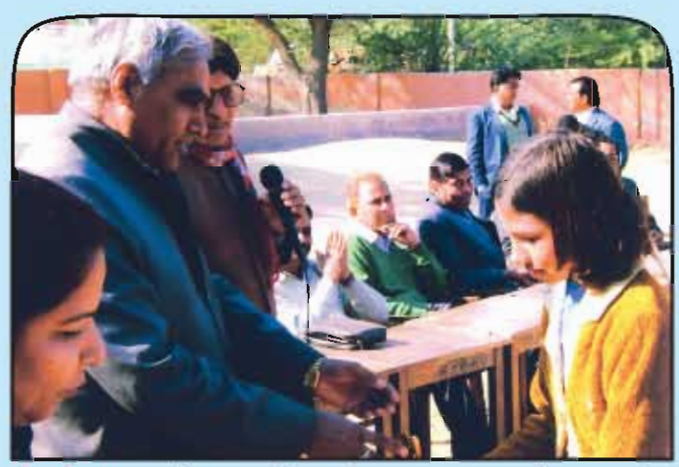

बीकानेर : राजकीय माध्यमिक विद्यालय, बम्बलू में शिक्षकों व कर्मचारियों का स्नेहमिलन समारोह आयोजित किया गया। इस अवसर पर एक बालिका को सम्मानित करते हुए तत्कालीन संयुक्त निदेशक (कार्मिक) श्री शिवजीराम चौधरी। पास खड़े हैं प्र.अ. श्री जेठमल सांखला।

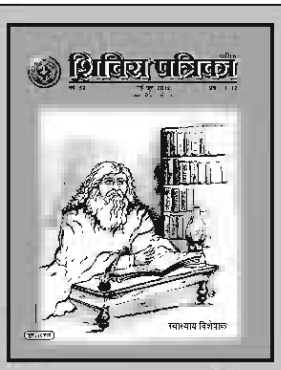

शिविरा पत्रिका

प्रारम्भिक एवं माध्यमिक शिक्षा का समाचार-विचार मासिक

वर्ष : 52 अंक : 11-12

मई-जून, 2012

प्रकाशन तिथि : 2 मई, 2012

प्रधान सम्पादक
हर सहाय मीणा

●

वरिष्ठ सम्पादक
ओमप्रकाश सारस्वत

●

सहायक
लक्ष्मी नारायण शर्मा
मुकेश व्यास

- एक प्रति 10 रु.
- वार्षिक चंदा
  - शिक्षकों/लिपिकों के लिए 50 रु.
  - संस्थाओं/अन्य व्यक्तियों के लिए 100 रु.
- मनी ऑर्डर/बैंक ड्रॉफ्ट **निदेशक, माध्यमिक शिक्षा राजस्थान, बीकानेर** के नाम देय है।
- पोस्टल ऑर्डर/चैक स्वीकार्य नहीं हैं।
- कृपया पूर्ण पता मय पिन कोड लिखें।

पत्र व्यवहार हेतु पता
वरिष्ठ सम्पादक, शिविरा पत्रिका
माध्यमिक शिक्षा, राज. बीकानेर-334 011
दूरभाष : 0151-2528875
E-mail : teacher.today@yahoo.com

शिविरा पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने विचार होते हैं। अभिव्यक्त विचारों से शिक्षा विभाग राजस्थान का सहमत होना आवश्यक नहीं है। –व.सं.

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते
श्रीमद्भगवद्गीता 4/38

इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निःसंदेह कुछ भी नहीं है।
In this world there is no purifier as great as knowledge.

इस अंक में

स्वाध्याय एवं सृजन की वेला	5	**दिशाकल्प**
भीतर के पट खोल	6	**डॉ. के.के. पाठक**
न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते	9	**चतरसिंह मेहता**
झोला पुस्तकालय - 10		
शिक्षक क्या पढ़ें - क्यों पढ़ें?	13	**शिवरतन थानवी**
बापू की सीख - 12		
विद्याभ्यास	16	**मो.क. गाँधी**
स्वाध्याय : सकल सुखाय	17	**डॉ. दाऊदयाल गुप्ता**
स्वाध्याय की ताकत और व्यावसायिक निपुणता	18	**डॉ.(श्रीमती) प्रेम जैन**
पढ़ै सो पंडित होइ	19	**भगवती प्रसाद गौतम**
स्वाध्याय और व्यवहारगत परिवर्तन	22	**विद्या पालीवाल**
प्राचीन भारतीय साहित्य में 'स्वाध्याय'	31	**पुना राम**
स्वाध्याय आज की आवश्यकता	32	**रूपनारायण काबरा**
स्वाध्याय ज्ञान संपादन की कुंजी है	33	**द्वारकेश भारद्वाज**
स्वाध्यायान्मा प्रमदः	34	**अमर सिंह पाण्डेय**
स्वाध्याय प्रगति का आवश्यक मंत्र है	36	**शिवचरण मंत्री**
स्वाध्याय की ताकत	36	**बजरंग प्रसाद मजेजी**
स्वाध्याय आत्मा की खुराक	37	**महेश कुमार चतुर्वेदी**
स्वाध्याय की नाव में जीवन की गंगा यात्रा	38	**पंकज कुमार शर्मा**
स्वाध्याय से निकलती न्यूनताएँ	39	**राजेन्द्र प्रसाद जोशी**
प्रतिध्वनि		
तेरा तुझको अर्पण	50	**ओमप्रकाश सारस्वत**

शिविरा विचार मंच

बरखा थानवी - 40/दीपचंद सुथार - 41/महेन्द्र पाण्डे - 41/सुरेश चन्द्र खटीक - 42
हरीश कुमार वर्मा - 42/ गिरधारी लाल सेन - 43/ अपर्णा दवे - 44/ भारत दोसी - 45
शकुन्तला सोनी - 45/ पूनम - 46/ मुरारीलाल कटारिया - 47/ अलका सक्सेना - 48
गायत्री शर्मा - 49

स्थाई स्तम्भ

पाठक पीठ - 4/आदेश परिपत्र 23-30

मुखावरण

देवीलाल परिहार, प्राध्यापक (चित्रकला)
राजकीय उ.मा.विद्यालय, रायसिंह नगर (श्रीगंगानगर)

पाठक पीठ

शिविरा पत्रिका माह अप्रैल, 2012 का अंक विविध लेख-आलेख एवं ज्ञानवर्द्धक जानकारियों से परिपूर्ण मिला। दिशाकल्प में हमारे नए निदेशक महोदय का संदेश स्वयं के जीवन परिचय के साथ प्रेरणास्पद है। वास्तव में वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान शिक्षा में ही निहित है, शिक्षा जीवनदायिनी एवं कष्ट विमोचनी है। शिक्षक आज के इस तकनीकी युग में स्वयं चरित्रवान रहकर अपने आपको अपडेट रखकर ज्ञान बाँटेंगे तब जाकर गुणवत्तापूर्ण कार्य निष्पादन हो सकेगा, समयबद्धता, अनुशासन, कर्तव्यपरायणता, प्रामाणिक स्वाध्याय स्वच्छता और अनुशासन से ही राष्ट्र और समाज सुन्दर एवं ताकतवर बन सकता है। निदेशक महोदय का बहुत-बहुत आभार !

–रमेश चन्द मीणा, रावल (सवाईमाधोपुर)

'शिविरा' अप्रैल 2012 का अंक विविध अकादमिक एवं प्रशासनिक जानकारियों से भरा प्राप्त हुआ। हमारे नए निदेशक श्री हर सहाय मीणा ने दिशाकल्प में जिस आत्मीयता का वर्णन किया है, वह मन को छू गई। स्वयं को प्रशासक से पहले शिक्षक बताकर आपने हम लाखों शिक्षकों का मान बढ़ाया है। ऐसे उदार विभागाध्यक्ष को कोटि-कोटि वंदन। शिविरा ने एक वर्ष में जो ऊँचाइयाँ ग्रहण की है; उन्हें देखकर मन प्रसन्न हो जाता है।

–महेन्द्र कुमार चौधरी, 40 जीबी, गंगानगर

'शिविरा' अप्रैल 2012 अंक में प्रकाशित सभी आलेख एवं आदेश-परिपत्र महत्त्वपूर्ण एवं सामयिक है। मुखपृष्ठ अत्यन्त आकर्षक एवं शिक्षाप्रद है। माननीय निदेशक महोदय ने अपने दिशाकल्प में कार्य की जो प्राथमिकताएँ एवं कार्यप्रणाली का संकेत किया है, वह हमारे लिए मननीय एवं करणीय है। पेंशन के बारे में प्रकट विचार उनकी संवेदनशीलता को प्रकट करते हैं। नए निदेशक महोदय का स्वागत एवं अभिनन्दन।

–आनन्द नायर, मा.शि., बीकानेर

शिविरा का माह अप्रैल, 2012 का अंक प्राप्त हुआ। 'पैगम्बर मोहम्मद साहब' लेख के माध्यम से लेखिका ने मोहम्मद साहब से सम्बन्धित सारगर्भित तथ्यों को रखा है आपने दुनिया का सच्चा मार्ग प्रशस्त किया। अपने मार्ग में आपको अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। आपके सिद्धांत शाश्वत सर्वमान्य और सर्व कल्याणकारी हैं।

–महेन्द्र कुमार शर्मा, भवानीखेड़ा, अजमेर

माह अप्रैल, 2012 का शिविरा का अंक प्राप्त हुआ। इस अंक में सम्मिलित सभी आलेख उपयोगी एवं संग्रहणीय है। निदेशक महोदय ने कार्य की संस्कृति के प्रति अपने भाव प्रकट कर हमारा मार्गदर्शन किया है। हमें उनके भाव के अनुरूप कार्य कर शिक्षा विभाग का गौरव बढ़ाना चाहिए। सांस्कृतिक धरोहर वाहिनी योजना के बारे में प्रकाशित आलेख जानकारी एवं शिक्षाप्रद है जिसके लिए धन्यवाद।

–शान्तिलाल शर्मा, गंगाशहर

अप्रैल माह 2012 का अंक आकर्षक मुखावरण सहित प्राप्त हुआ। अपने संदेश में श्रीमान् निदेशक महोदय ने शिक्षकों में जो विश्वास प्रकट कर शिक्षकों का मान-सम्मान बढ़ाया है। इस हेतु निदेशक महोदय का हार्दिक आभार ! राजकीय विद्यालयों में कार्य दिवसों का ह्रास रोका जाकर शैक्षणिक एवं पाठ्येत्तर सहगामी प्रवृत्तियों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

–महेश प्रकाश व्यास, बीकानेर

माह अप्रैल 2012 की शिविरा पत्रिका के 'दिशाकल्प' में निदेशक महोदय माध्यमिक शिक्षा ने शिक्षा को सर्वांगीण विकास के लिए आधार माना। शिक्षकों को आह्वान किया कि मानवीय गुणों को विद्यार्थियों में विकसित कर राष्ट्र सेवा की भागीदारी निभावें। शिक्षा ही जीवन के आधार की रीढ़ है। शिविरा पत्रिका में विभिन्न शैक्षिक गतिविधियों के चित्र प्रकाशित करने की योजना से परिश्रम करने वाले बालक-बालिकाओं की कार्य के प्रति रुचि बढ़ती है।

–सालगराम परिहार, बालोतरा

शिविरा पत्रिका माह अप्रैल, 2012 के मुखपृष्ठ में 'गागर में सागर' भर दिया है, सांस्कृतिक धरोहर, पर्यावरण व वैज्ञानिक चिंतन का समन्वय किया गया है। दिशाकल्प में सुन्दर समाज एवं सुदृढ़ राष्ट्र का आधार शिक्षा है, इसमें अपने विभाग की समस्त गतिविधियों पर चिन्तन किया गया है। आदेश परिपत्रों से नवीन जानकारी प्राप्त हुई। विद्यालय में शारीरिक शिक्षक की भूमिका लेख अच्छा लगा। 'बच्चे कहना क्यों नहीं मानते' में बच्चों के मनोविज्ञान को अच्छी तरह स्पष्ट किया गया है। 'कर्तव्यों की होली पर अधिकारों की दीवाली' लेख में वर्तमान स्थिति की वास्तविकता को उजागर किया गया है। शैक्षिक समाचार, चतुर्दिक, भामाशाह आदि कॉलम भी अच्छे लगे।

–डॉ. सुरेशचन्द गोयल, भवराना, उदयपुर

चिन्तन

कुछ लिख के सो
कुछ पढ़ के सो
तू जिस जगह जागा सवेरे
उससे कुछ आगे बढ़के सो।

–भवानीप्रसाद मिश्र

सत्यमेव जयते

हर सहाय मीणा, आई.ए.एस.
निदेशक, माध्यमिक शिक्षा

"अवकाश को लेकर मेरा दृष्टिकोण कुछ अलग है। अवकाश विराम का नहीं, आराम से कुछ नया सृजन करने का समय है। अवकाश ठहराव का नहीं, विकास और विस्तार का समय है। स्वाध्याय का सुअवसर है अवकाश ! शिक्षकों को चाहिए कि वे समय रहते उन कार्यों का भलीभाँति नियोजन करें जिन्हें उनके द्वारा किया जाना है।"

दिशाकल्प

स्वाध्याय एवं सृजन की वेला

मई माह की 17 तारीख से स्कूल शिक्षा के विद्यार्थियों को डेढ़ माह का ग्रीष्मावकाश हो रहा है। शिक्षकों को भी यह अवकाश रहेगा तथापि इस अवधि में आयोज्य सेवारत शिक्षक प्रशिक्षणों एवं विभाग/प्रशासन द्वारा सौंपे गए कार्यों में उन्हें उपस्थित होना होगा। कुल मिलाकर औपचारिक दैनन्दिन कार्यक्रमों का बंधन नहीं रहेगा इन दिनों। अवकाश को लेकर मेरा दृष्टिकोण कुछ अलग है। अवकाश विराम का नहीं, आराम से कुछ नया सृजन करने का समय है। अवकाश ठहराव का नहीं, विकास और विस्तार का समय है। स्वाध्याय का सुअवसर है अवकाश !

शिक्षकों को चाहिए कि वे समय रहते उन कार्यों का भलीभाँति नियोजन करें जिन्हें उनके द्वारा किया जाना है। इसमें मुख्यतः तो कक्षागत शिक्षण ही है, फिर भी पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं के रूप में क्रीड़ा, सांस्कृतिक, सामाजिक व सेवा सम्बन्धी गतिविधियों के प्रभारी भी वे हो सकते हैं। ये गतिविधियाँ बालकों के व्यक्तित्व का निर्माण करने वाली हैं। शिक्षकों को चाहिए कि वे आगामी सत्र 2012-13 में उनके द्वारा पढ़ाए जाने वाले विषयों की भरपूर तैयारी अभी से करें। आपने ऐसे शिक्षक जरूर देखे होंगे, जिन्हें किसी किताब की जरूरत नहीं होती थी। वे स्वयं पुस्तक होते थे। उनकी उपस्थिति अनुशासन व व्यवस्था की पर्याय होती थी।

सत्रपर्यन्त किए कार्यों की ईमानदार समीक्षा वे ही व्यक्ति कर सकते हैं जो पूर्ण सजग रहकर अपना कार्य सम्पादन करते हैं तथा अपने स्वयं के प्रतीमान तय कर उन्हें हासिल करने के लिए कठोर परिश्रम करते हैं। उन्हें इस बात की परवाह नहीं होती कि कोई उन्हें देखें व सराहें। वे स्वयं, स्वयं के निरीक्षक और समीक्षक होते हैं। एक निर्धारित चक्र (जैसे शिक्षा सत्र) के पूरा होने के पश्चात् अगले चक्र का सुनियोजन कर वे फिर से चल पड़ते हैं– सेवा का एक नया अध्याय लिखने। शिक्षकों के लिए यही स्वाध्याय है। वे खूब पढ़ें, खूब चिन्तन करें और खूब लिखें लेकिन खूबसूरती के साथ।

बालक-बालिकाओं को भी ग्रीष्मावकाश के दौरान सृजनात्मक गतिविधियों से जोड़ा जाना चाहिए। वे अवकाश में अपने अभिभावकों के साथ दर्शनीय स्थानों पर भ्रमण के लिए भी जा सकते हैं। अभिभावकों को चाहिए कि इसके लिए उचित व्यवस्था अपने संरक्षितों के लिए वे करें। दर्शनीय स्थानों पर भ्रमण के दौरान बालक-बालिकाएँ उनका ब्यौरा डायरी में लिखें तथा लौटकर आने पर उसका वृतांत लिखें और अपने साथियों को सुनाएँ। इससे उनकी लेखन व अभिव्यक्ति की क्षमता बढ़ेगी जो निश्चय ही शिक्षा का अहम् उद्देश्य है।

मई माह में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं महाराणा प्रताप की जयन्तियाँ हैं। शब्द व शौर्य के शिखर पुरुष हैं ये महानुभाव। जून में भामाशाह जयन्ती है। वे देशभक्ति के पर्याय हैं। मैं इन तीनों महापुरुषों को प्रणाम करते हुए शिक्षकों से अपील करना चाहूँगा कि वे इन महानुभावों का जीवन चरित्र स्वयं पढ़ें, औरों को पढ़ाएँ तथा उनके जीवन से शिक्षा लेकर टैगोर, प्रताप व भामाशाह की एक नई पीढ़ी तैयार करने में अपना योगदान दें।

शुभकामनाओं के साथ,

(हर सहाय मीणा)
hsmeena2001@yahoo.com

भीतर के पट खोल

❑ डॉ. के.के. पाठक

डॉ. के.के. पाठक भारतीय प्रशासनिक सेवा के अत्यन्त ऊर्जस्वी व गतिमान युवा अधिकारी हैं। आप उच्च कोटि के चिन्तक, लेखक एवं उद्‌भट विद्वान हैं। आपने लगभग दो दर्जन पुस्तकें लिखी हैं जिनमें धर्म की विज्ञान यात्रा (दो भाग), प्रेम : एक वैज्ञानिक अध्ययन, नकारात्मक सोच : महानता का सूत्र, गाँधीगिरी का मैनेजमेंट, गाँधीवाद और मार्क्सवाद, भारतीय संस्कृति के आधार स्तम्भ, मृत्युपथ : अमृत की तलाश आदि प्रमुख हैं। आपके व्यक्तित्व एवं कृतित्व में गाँधी जी के सहज ही में दर्शन होते हैं। अपनी प्रशासनिक कार्य कुशलता के लिए विख्यात डॉ. पाठक माध्यमिक शिक्षा निदेशक एवं शिविरा पत्रिका के प्रधान संपादक रहे हैं। वर्तमान में आप राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर में सचिव पद पर कार्यरत हैं।

पाठकजन !

ज्ञान के मूल और फूल की तलाश में हम सदा से भटकते रहे हैं। विश्व के निरन्तर वर्द्धमान ज्ञान-विज्ञान की चुनौतियों का सामना करने के लिए राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का गठन हो चुका है। सर्व शिक्षा अभियान की अलख माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच चुकी है और उच्च शिक्षा के द्वार पर दस्तक देने वाली है। हर वैभवशाली अपना विश्वविद्यालय शुरू करने में समर्थ हो गया है और पब्लिक स्कूल से कोचिंग इंस्टीट्यूट तक के करोड़ों के कारोबार में लाखों लोग संलग्न हैं। चौदह सवाल में करोड़पति बनाने का जवाब देने व ख्वाब दिखाने वाले प्रबंधन के बाजार में प्रशासन येन-केन प्रकारेण स्वयं को संतुलित करने का प्रयास कर रहा है। आज के जिज्ञासु के हाथ में गुरुमंत्र व समिधा नहीं, गूगल व विकीपीडिया है। वह स्लेट व कॉपी पर लिखने की बजाय टैबलेट पर कॉपी-पेस्ट करने में अधिक सिद्धहस्त है। प्रतिपल नए यक्षप्रश्न उठ रहे हैं और प्रायः लगता है कि हम उत्तर तलाशने की जगह उत्तरदायित्वों से पलायन का मार्ग बनाने में व्यस्त हैं। क्या पता, 'स्वाध्यायान्मा प्रमदितव्यम्' की पुरातन सूक्ति में मैं भी खरा रह पाऊँगा या नहीं।

गुरुजन !

स्वाध्याय का शाब्दिक अर्थ है– स्वयं अध्ययन करना। कभी बुद्ध ने 'आत्म दीपो भव' कहा था, तब उसका भी भावार्थ यही था। मुझे पुरानी सूक्ति स्मृत हो आई है– **सबसे अच्छा गुरु वह है, जो जीवन भर छात्र बना रहे व सबसे अच्छा छात्र वह है, जो स्वयं अपना गुरु बन जाए।** अनंत ज्ञान को हम चाहें भी तो कितना पढ़ व पढ़ा सकते हैं। पढ़ाने से समझ आ जाए, तो पढ़ाना सुफल हो जाता है, मगर पढ़ने की अलख जग जाए, तो गुरुत्व सफल हो जाता है। इसीलिए दानियों को सलाह दी जाती है कि अन्न का दान करें, मगर बीज का दान करना कहीं भूल न जाएँ।

सहभागीजन !

पढ़ना अच्छा है, काम का पढ़ना भी अच्छा है, लेकिन बस काम के लिए पढ़ना अच्छा नहीं। फिर हम ज्ञान की पिपासा ही नहीं, उसके अमृतत्व से भी चूक जाते हैं, चाहे कितना ही 'विद्ययाऽमृतमश्नुते' क्यों न दुहराते रहें। यदि मुक्त मन से विद्यार्जन न किया जाए, तो 'सा विद्या या विमुक्तये' भी चरितार्थ नहीं हो पाता। **जब भी पढ़ें, यह ध्यान रखें कि वह समय काटने के लिए पढ़ा जा रहा है या फिर समय से आगे बढ़ने के लिए।** वैसे भी कभी जॉर्ज लिचनबर्ग ने कहा था– दुनिया में किताबों से ज्यादा अजनबी कुछ भी नहीं। यह प्रायः उन लोगों द्वारा छापी जाती है, जो उन्हें पढ़ते नहीं, उन लोगों द्वारा बाँधी-बेची जाती है, जो उन्हें पढ़ते नहीं, उन लोगों द्वारा आलोचित की जाती हैं, जो उन्हें पढ़ते नहीं और प्रायः उन लोगों द्वारा ही लिखी भी जा रही है, जो कभी पढ़ते नहीं।' यह घोर अति है। हर पढ़ा-लिखा पढ़ता नहीं और हर लिखा पढ़ने लायक नहीं। तभी तो 'मसि कागद छुयौ नहिं, कलम गही नहिं हाथ' कहने वाले कालजयी हो जाते हैं और काल के कलाकार बस बासी अखबार की तरह बिसरा दिए जाते हैं।

आचार्यजन !

अच्छी किताबों के लिए मार्क ट्वेन ने कहा था– इन्हें रखना तो सभी चाहते हैं, मगर पढ़ना कोई नहीं चाहता। यह क्या सच नहीं है ! आदमी में किताबों से दुराव से ज्यादा अच्छी किताबों से दुराव पैदा हो गया है। हैरी पॉटर करोड़ों की संख्या में बिक कर अरबों की कमाई दे जाती है और कार्ल मार्क्स को उनके जीवन में प्रायः जीविका के लिए भी दूसरों पर निर्भर रह जाना पड़ता है। इतिहासकार कहते हैं– **'जानवर रह जानवर गया, क्योंकि उसने अपना जीवन वहीं से शुरू किया, जहाँ से उसके पिता ने शुरू किया था, मगर आदमी जानवर से आदमी बन गया, क्योंकि उसने अपना जीवन वहाँ से शुरू किया, जहाँ उसके पिता ने खत्म किया था।'** अब एस.एम.एस. व फेसबुक की दुनिया में उलझी रहने वाली पीढ़ी के लिए अच्छाई की पढ़ाई कराने वाली किताबों के खत्म हो जाने का खतरा कई गुना हो गया है। तब आचार से शिक्षा देने वाले आचार्यजन की भूमिका और गुरुतर हो जाती है, क्योंकि वे ही तो भावी कर्णधारों के सूत्रधार और दिग्दर्शन के आधार हैं।

सुधीजन !

फ्रांसिस बैकन ने दो सदी पहले ही कहा था– **'ज्ञान ही शक्ति है और केवल यही चिरंजीवी**

शक्ति है।'(Knowledge is power and only lasting power. ***-Francis Bacon)*** फिर मैं इतना दुर्बल क्यों हो रहा हूँ ? ज्ञान इतना द्वंद्वग्रस्त क्यों है ? मेरा ही मन मुझ पर ही संशय क्यों उठाए जा रहा है ? मैं आधुनिक युग का चिंतनशील मानव हूँ और इसीलिए चिंतन को अस्तित्व का आधार बनाने वाले रेने देकार्त की तरह मान लेता हूँ कि **संदेह से ही सच्चे ज्ञान का जन्म होता है।** (Cogito orgo sum. ***–Descartes)*** पर जब मैं इसके विपरीत ज्ञान को संदेह में बदलते देखता हूँ, तो अचानक ही सत्य को शक्ति देने के लिए अपनी राह बदल लेता हूँ। आज पता चला कि इस दुनिया को बदलने वाला ज्ञान कम क्यों है और दुनिया देखकर बदल जाने वाले ज्ञानी अधिक क्यों हैं।

अन्वेषीगण !

मैं 'सत्यमेव जयते' की उद्घोष करने वाली परम्परा में पला हूँ और प्रतिदिन सत्य को पराजित होते देखने का साक्षी भी रहा हूँ। सूक्तियाँ सच रही होती, तो इन्हें इतने दुहराने की जरूरत कहाँ पड़ती। शायद इसी कारण इमर्सन ने कहा था– मुझे सूक्तियों से नफरत है, क्योंकि दुनिया को बताने वालों से ज्यादा अपनाने वालों की जरूरत है। **टॉलस्टाय कहते हैं कि झूठ की छप्पर बड़ी कमजोर होती है, पर सच यह है कि इसकी नींव बड़ी मजबूत होती है।** इसीलिए तो नीत्शे को कहना पड़ा– 'आदमी सच के सहारे नहीं जी सकता, उसे जीने के लिए झूठ चाहिए।' ठीक ही है– 'सच या तो सत्वव्रतों को मारकर जीता है या स्वयं ही मर जाता है।'

प्रबुद्धगण !

सत्य दुर्बल क्यों है? कारण बड़े साधारण हैं। साइमन वेल ने बहुत पहले कहा था– **'इस संसार में सत्य के पक्ष में खड़े होने वाले कम हैं और सत्य को अपने पक्ष में खड़ा करने वाले अधिक।'** अल्पमत में बने रहने का अभिशाप लिए सत्य को जीवनदान भला कौन देगा, जब सफलता ही उसकी कसौटी बन जाए। ज्ञान प्रयोगों से आगे बढ़ता है, फिर भला वह असफलताओं से इतना सशंकित क्यों हो? लोग सहमे हुए हैं? क्योंकि उन्हें सच का सच पता है। वे जानते हैं– सच जीते, यह जरूरी नहीं, किन्तु जो जीतता है, वह जरूर सच मान लिया जाता है।

विद्वज्जन !

विश्व में ज्ञान की अभीप्सा सभी को है और सभी को इसकी महत्ता का अहसास भी है। मैंने इसकी आँच में लोगों को तपते और निखरते देखा है, साथ ही उन्हें पकते और बिखरते भी देखा है। किसी को हाथ का सोना बनकर खनकने का सौभाग्य मिलता है, तो कुछ को बस सुनहरी रेत की तरह मुट्ठी से फिसलने की नियति स्वीकार करनी पड़ती है। मुझे न कड़वे घूँट से लगाव है, न ही मीठे सच की अपेक्षा, किन्तु मेरी प्रार्थना है– **ज्ञान जब कला बने, तो सत्य से दूर न हो और जब विज्ञान बने, तो भी शिवत्व का सौंदर्य लिए रहे।**

मनीषीगण !

विज्ञान का विराट संसार हमारा स्वागत कर रहा है और मैं उसके द्वार पर खड़ा पदचिह्न तलाश रहा हूँ। यहाँ सूचना के अधिकार के लिए प्रतिदिन सौ बार इसकी साँकल खटकती है और मुझे यह खटकता है कि 'शिक्षा आपके द्वार' के समय क्यों मुझे इन्हीं के दरवाजों पर सौ बार दस्तक देनी पड़ती है। कहते हैं आदमी जब अधिकार माँगने के लिए अपने हाथ बढ़ा रहा होता है, तब दरअसल वह कर्तव्यों की ओर से अपने कदम भी पीछे खींच रहा होता है। किन्तु मैं यहाँ कर्तव्य बनाम् अधिकार पर तर्क-वितर्क करने नहीं आया हूँ, बल्कि अपने ज्ञान के लिए कर्म का आधार तलाशने आया हूँ। **हमारे ज्ञान की सबसे बड़ी विडंबना ही यह है कि वह कर्तव्य तो सदियों से बना हुआ है, किन्तु उसमें कर्तृत्व लाने में अभी सहस्राब्दियाँ शेष हैं।**

ज्ञानीजन !

हम अधकचरे ज्ञान से बहुत डरते हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि नीम-हकीम खतरे जान होता है। पर कम ही लोग जानते हैं कि ज्ञान कभी पूरा नहीं होता। इसीलिए जिन्होंने वेद को ज्ञान माना, उनसे मुझे आपत्ति नहीं है, किन्तु उन पर आपत्ति जरूर होती है; जो वेद को चार मानकर वेदांत का ब्रह्मकोष करने लगते हैं। जिन्होंने वेदाध्ययन को भी स्वाध्याय कहा, उनसे मुझे आपत्ति नहीं है; किन्तु उन पर आपत्ति जरूर होती है, जो वेदमात्र को सम्पूर्ण स्वाध्याय कहने लगते हैं। मैं तो चकित होता हूँ कि आज 'पूर्णमदः पूर्णमिदम्' का वृंदगान करने वाले भला किस तरह 'नेति-नेति' कह पाते होंगे। मन में यह प्रश्न उठता है कि नए अर्थ में जब हमारे ज्ञातृपुत्र निर्ग्रंथ हो जाएँ और जब हमारे बुद्ध भी प्रश्नों को अव्याकृत कहकर टालते रहें, तब भला निर्बुद्धों को प्रबुद्ध करने का बीड़ा कौन उठाए?

बुद्धिजीवीगण !

ज्ञान तो योग है, वह हममें बहुत कुछ जोड़ देता है। किन्तु ज्ञान की अपनी मीमांसा भी है, जो हममें से बहुत कुछ छाँट कर काट भी देती है। शायद इसीलिए संसार के अधिकांश महान व्यक्तित्व कोई बहुत बुद्धिमान व्यक्तित्व नहीं रहे। ऐसे में प्रायः ऐसा लगता है कि हमारी शिक्षा के जो वैशेषिक मानदण्ड हैं, वे न्यायोचित नहीं रह गए हैं। **इसी कारण गोबल्स को कहना पड़ा कि बुद्धिमत्ता चरित्र के लिए संकट है। ज्यादा पढ़ने वाले प्रायः औरंगजेब बन जाते हैं, जबकि कम पढ़े-लिखे अकबर हो जाते हैं।** ज्ञान अगर वाकई सब कुछ दे देता, तो 'सा विद्या या विमुक्तये' कहने वाले क्यों 'चरैवेति-चरैवेति' कहकर भटकते रहते और 'ढाई आखर प्रेम का पढ़ने वाले' गहरे डूब कर मोतियाँ कैसे ला पाते।

मनस्वीजन !

संसार को समझाना तो दूर उसे समझना भी दूभर है। जब सुकरात जैसे लोग 'ज्ञान ही सद्गुण है' का उपदेश देते हैं, तो वह उन्हें विष देता है और जब जीसस जैसे लोग 'अज्ञान ही सौभाग्य है' का संदेश देते हैं, तो उन्हें भी सलीब पर चढ़ा दिया जाता है। जो लोग कहते हैं कि संसार अच्छों के लिए अच्छा और बुरों के लिए बुरा है, तो वे आधा सच ही बोल रहे हैं। पूरा सच यह है कि संसार अच्छों के लिए बुरी जगह तथा बुरों के लिए अच्छी जगह भी है। इसीलिए इस विश्व को श्रेष्ठतम बताने वाले लाइबनित्ज और निकृष्टतम बताने वाले शॉपेनहावर– दोनों सही हो जाते हैं। यही सच है और **सच केवल कहने के लिए ही नहीं, सहने के लिए भी बना है।**

चिन्तकगण !

ज्ञान की खोज दर्शन में प्रायः ज्ञान के स्रोत की बजाय स्वरूप की खोज बनती रही है। सदियों तक अनुभववादी और बुद्धिवादी अपने-अपने तर्कों के साथ इस मसले पर टकराते रहे हैं। देकार्त संशय को ज्ञानमय बना रहे होते हैं, तो ह्यूम ज्ञान को संशयमय। इमैनुअल कांट दोनों से जुड़ते और दोनों मतों को जोड़ते हैं, किन्तु उनकी मोहनिद्रा नहीं टूटती। जब वे ज्ञान की तलाश में अंततः मान्यता का पोषण करने लगते हैं, तब ऐसा लगता है कि ईश्वर सरलतया सद्बुद्धि भले देता हो, पर हर बार बुद्धि नहीं देता। प्रबुद्ध कांट पर भी कटाक्ष करने का साहस रसेल इस कारण कर पाए, क्योंकि उन्होंने कहा था– हमारे संसार की विडम्बना यह है कि मूर्ख प्रत्येक विषय में निश्चित होता है और बुद्धिमान हर विषय में संदेहशील।

तत्वदर्शीगण !

बसंत आ गया है। मानव जीवन के बोधिवृक्ष में रोज नई शाखाएँ फूट रही हैं। लाल कोपलों और पीले फूलों के बीच वह माली मुस्कुरा रहा है, जिसे बरसात से पहले इस बियाबान में बिरवाई लगाई थी। अपने नाजुक तन पर दो पत्ते सँभाले वे पौधे अब पूरी तरह तनकर खड़े हो गए हैं। अचानक मुझे एक लकड़हारा आता दिखा और मैंने बागवान को सतर्क करने हेतु आवाज लगाई। लकड़हारा हँसकर बोला– 'भलेमानस ! मैं जंगल से सूखे पेड़ काटता हूँ, ताकि नए पेड़ों के लिए जगह बन सके। क्यों नहीं तुम भी अपने ज्ञान से उन ठूँठों को हटा देते, ताकि नये तरु सरलतया पनप सकें।' तब मुझे इलहाम हुआ– ज्ञानकुंज में मालियों की ही नहीं, लकड़हारों की भी जरूरत है।

निर्णायकगण !

ज्ञान कभी खत्म नहीं होता, लेकिन मेरे ज्ञान के खत्म होने की बेला आ गई है। इस तमिस्र होती गोधूलि के धुँधलके में मुझे आने वाली उषा का आलोक दिखाई पड़ रहा है। दूर से कहीं सांध्य स्वर लहरी फूट रही है– 'कल और आएँगे, नगमों की खिलती कलियाँ चुनने वाले, मुझसे बेहतर कहने वाले, तुमसे बेहतर सुनने वाले।' कल के कलकल निनाद में मेरी आँखें झँपी जा रही हैं, पर मेरा सपना है– नई सुबह का आगाज आज की आवाज सुनाने वालों के हाथों हो। प्रातः जब इस ज्ञान गंगा की लहरों में जलतरंग बजेगा, मैं पहला यजमान बनूँगा, जिनके हाथों नए युग का शंखनाद होगा। तथास्तु, शिवम् भवतु, इत्यलम्।

आयुक्त की पाती शिक्षकों के नाम

स्वाध्याय से बनें तेजस्वी शिक्षक

प्रिय शिक्षक भाइयो/बहिनो,

- स्वाध्याय और चिन्तन भारतीय दर्शन के सर्वाधिक दो महत्त्वपूर्ण उपागम हैं। गुरुकुल व्यवस्था में शिक्षा पूर्ण कर प्रस्थान करने से पूर्व दीक्षा संस्कार के समय गुरु जो महत्वपूर्ण शिक्षा अपने शिष्यों को देता है, उनमें एक **स्वाध्याय में प्रमाद मत करना** भी सम्मिलित है।
- विगत कुछ समय से लगता है जैसे स्वाध्याय की आदत में कमी आ रही है। शिक्षक तो स्वाध्याय का पर्याय होना चाहिए। कदाचित इसके पीछे एक कारण टेलीविजन संस्कृति रही है, जो भी हो कुछ न कुछ पढ़ना लिखना तो चलता ही रहना चाहिए। भवानी प्रसाद मिश्र ने कहा है–

कुछ लिख के सो
कुछ पढ़ के सो
तू जिस जगह जागा सवेरे
उससे कुछ आगे बढ़के सो।

- स्वाध्याय के लिए युवाओं को प्रेरित करने के लिए जापान ने वर्ष 2010 को राष्ट्रीय अध्ययन वर्ष के रूप में मनाया और इस अवधि में पुस्तक एवं पुस्तकालय संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए वर्ष पर्यन्त कार्यक्रम किये। यह पढ़ने के प्रति चिन्ता व चिन्तन का उनका उदाहरण है।
- अपने-अपने व्यवसाय में दक्षता हासिल करने के लिए हर व्यक्ति यत्नशील रहता है। क्या वकील, क्या इंजीनियर, क्या डॉक्टर और क्या वैज्ञानिक..... इस हेतु वे अपने व्यवसाय सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाएं मँगवाते हैं और तत्विषयक प्रशिक्षणों में अपने व्यय पर भाग लेने जाते हैं। जरा विचारें, क्या आप भी ऐसा ही करते हैं ?
- शिक्षक के लिए तो हर समय अध्ययनशील बने रहना आवश्यक है। वह तो शिक्षक होने से पहले शिक्षार्थी भी है। मैंने निरीक्षणों व शिक्षकों से बातचीत में यह महसूस किया है कि वे स्वाध्याय के प्रति आमतौर से उदासीन हैं। एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली, शिक्षा विभाग व अन्य अभिकरणों से कई पत्रिकाएँ प्रकाशित की जाती हैं। इनमें शिविरा एवं नया शिक्षक प्रमुख हैं।
- शिविरा के वर्तमान में व्यक्तिगत शिक्षक ग्राहकों एवं निजी संस्थाओं की संख्या लगभग तीन हजार ही है। इससे निराशा होनी स्वाभाविक है। मैं चाहता हूँ कि सभी शिक्षक कम से कम शिविरा तो पढ़ें ही। पढ़ें भी और उसमें लिखें भी। आखिर शिविरा है किसकी ? आपकी ही तो है– ***Shivira is a Magazine of the teachers for the teachers and by the teachers.***
- आइये, हम शिविरा के ग्राहक बनकर हमारे स्वाध्याय यज्ञ में आहुति दें। इस स्वाध्याय यज्ञ में अपनी आहुति स्वरूप मैं प्रधान सम्पादक होने पर भी निजी तौर पर सदस्यता शुल्क जमा करवाकर शिविरा का सदस्य बन रहा हूँ।

आइये, शिक्षक दिवस के पावन अवसर पर महान मनीषी, उद्भट विद्वान, प्रबुद्ध चिन्तक एवं शिक्षक डॉ. राधाकृष्णन् को नमन् करते हुए उन्हें श्रद्धा-सुमन अर्पित करें और तेजस्वी शिक्षक बनने का संकल्प ग्रहण करें।

शुभकामनाओं के साथ,

(भास्कर ए. सावन्त)

श्री भास्कर ए. सावन्त द्वारा शिक्षा आयुक्त रहते शिक्षकों के नाम लिखी यह पाती निःसंदेह एक अमूल्य दस्तावेज है। पाती में उल्लेखित भावों की रक्षा करने के लिए इसे यथावत (as it is) दिया जा रहा है। आप वर्तमान में हमारे शासन सचिव हैं। –व.सं.

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते

❑ चतरसिंह मेहता

श्री चतर सिंह मेहता शिक्षा विभाग के मूर्धन्य विद्वान हैं। आप निदेशक (प्रौढ़ शिक्षा) के पद से सेवानिवृत्त हुए हैं; दर्जनों पुस्तकों के लेखक, कमेटियों के चेयरपर्सन/सदस्य, समीक्षक, प्रशिक्षक हैं। बावजूद इन सबके, आप स्वयं को विनम्र विद्यार्थी मानकर सतत अध्ययन-अधिगम में संलग्न हैं। आप शिविरा पत्रिका के सम्पादक रहे हैं।

पिछले वर्ष से शिक्षा विभाग राजस्थान की मुख पत्रिका 'शिविरा पत्रिका' ने आलेखों को नये अर्थ व रूप में देना आरम्भ किया है, तभी से एक मूल वाक्य सभी अंकों में भीतरी पृष्ठ पर प्रमुख स्थान पा रहा है। यह वाक्य है जीवन से सम्बन्धित श्रेष्ठ ग्रन्थ गीता से, जो भगवान श्रीकृष्ण के मुख से उच्चारित हुआ है– *'इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निःसंदेह कुछ भी नहीं है।'* शिक्षा विभाग विद्यालयों का संचालन करता है। इन विद्यालयों के सभी स्तर के शिक्षक विद्या व ज्ञान के वाहक कहे जाते हैं। शिविरा पत्रिका में इस मार्गदर्शक उक्ति को लगातार प्रमुखता से देते रहने के निश्चित ही कुछ निहितार्थ है, गूढ़ अर्थ है जिसे समझना व हृदयंगम करना जरूरी है।

ज्ञान और पवित्रता– ज्ञान से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है। आज विद्यापीठ में कई विषय पढ़ाये जाते हैं– इतिहास, भूगोल, भौतिकी, रसायन शास्त्र आदि कई विषय। इन विषयों की तो जानकारियाँ हैं। जो बाहर मिल जाता है, वह सूचना मात्र है। इन विषयों की विषयवस्तु को याद कर लेना और वेद, गीता, शास्त्र को दोहरा देना, कंठस्थ कर लेना, वापिस सुना देना ज्ञान नहीं है, वह तो केवल जानकारी मात्र है, केवल याददाश्त है, स्मृति है, रटाई है। ज्ञान तो वह है जो भीतर जगता है, जो आत्मा से निखरता है। जिसे हम आज तक ज्ञान समझते रहे हैं वह ज्ञान नहीं है, मात्र सूचनाएँ हैं और उसे सूचना की तरह से समझें तो कोई खतरा नहीं। खतरा तो तब होता है जबकि जानकारियों को, सूचनाओं को ज्ञान मान लेते हैं।

महावीर ने ज्ञान की बड़ी सुन्दर परिभाषा की है– *जेण रागा विरज्जेज्ज, जेण सेए सुरज्जदि। जेण मित्ती पभावेज्ज, तं जाणं जिणसासणे॥*

जिससे जीवराग विमुख होता है, यह कसौटी दी है महावीर ने ज्ञान की। महावीर कहते हैं कि बहुत जान लिया परन्तु वह जाना हुआ यदि राग से विमुख नहीं करता तो वह जाना हुआ थोथा है, धोखा है, उधार है। इससे तो यह जानना बेहतर है कि हम नहीं जानते हैं।

ज्ञान से ज्यादा पवित्र करने वाला कुछ भी नहीं है। पवित्र करने की क्षमता कहें, स्वच्छ करने की शक्ति कहें, रूपान्तरित करने की शक्ति कहें, एक ही बात है। पवित्रता का विपरीत है अपवित्रता। कभी-कभी विपरीत को समझने से बात ज्यादा अच्छी तरह समझी जा सकती है। अपवित्रता क्या है? मनुष्य कौनसा कचरा ढो रहा है जिससे अपवित्र है, कौनसी गन्दगी प्राणों पर भारी है, कौन बीमार, अस्वस्थ किये हुए है। महावीर के अनुसार राग को अपवित्रता कह सकते हैं। राग का अर्थ है– किसी भी वस्तु, किसी भी व्यक्ति के साथ ममत्व का भाव बाँधना, कहना– मेरा। जब साँस भी मेरी नहीं, एक साँस भी ज्यादा लेना हाथ में नहीं, यह देह भी मेरी नहीं, वह भी बाहर से बनती है और बाहर ही खो जाएगी। ज्यों-ज्यों गहरे जाएँगे, लगेगा मेरा कुछ भी नहीं। ममत्व की भावना के साथ मन में उठने वाली कामना, वासना भी हमें अपवित्र करती है। वासना यदि सफल हो जाए तो भी विषाद उत्पन्न करती है और असफल हो जाएँ तो भी विषाद। एक बड़े पागलखाने में एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन करने पहुँचा। एक कोठरी में एक पागल बन्द था। हाथ में एक तस्वीर और रो रहा था। चिल्ला रहा था। चिकित्सक ने मनोवैज्ञानिक को बताया कि वह इस स्त्री से प्रेम करता था परन्तु वह नहीं मिली इसलिए यह व्यक्ति पागल हो गया। दूसरी कोठरी में दूसरा पागल। वह अपने बाल नौंच रहा था, छाती पीट रहा था। चिकित्सक ने बताया कि इसको वह स्त्री मिल गई जिसे वह चाहता था, यह उसकी वजह से पागल हो गया। चाहा हुआ मिल जाए तो भी पता चलता है– कुछ भी नहीं मिला। चाहा हुआ न मिले तो चित्त दुःखी और पीड़ित होता ही है।

ज्ञान स्वच्छ करता है राग से, वासना से, और तृप्त करता है उससे जो है। दौड़ाता नहीं उसके पीछे जो नहीं है। मन स्वच्छ हो जाता है। इसीलिए श्रीकृष्ण कहते हैं, ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निःसंदेह कुछ भी नहीं है। इस जगत में दो ही छोर हैं– अज्ञान और ज्ञान। एक ओर अज्ञान का छोर है जहाँ हम अपने को नहीं जानते। जो अपने को नहीं जानता व बाकी सब कुछ जानता है तो वह जानने का धोखा है। जो अपने को जान लेता है उसके लिए जानने को कुछ शेष ही नहीं

रहता। अपने को जान लिया, सबको जान लिया, यही ज्ञान की परिभाषा है। अज्ञानी के हाथ में सारे जगत का ज्ञान दे दें तो खतरा ही है। विज्ञान ने अज्ञानी को जानकारियाँ दे दी तो परिणाम नागासाकी व हिरोशिमा पर अणु विस्फोट हो गया। अज्ञानी के हाथ में ताकत आये तो यही परिणाम होता है।

श्रीकृष्ण किसी भी हालत में उस ज्ञान की बात कर ही नहीं सकते जिसे हम किन्हीं विशेष विषयों की जानकारी कहते हैं। इन जानकारियों से मनुष्य की पवित्रता का कोई सम्बन्ध जोड़ा ही नहीं जा सकता चाहे वह इतिहास हो, भूगोल हो, भौतिकी हो या कोई अन्य। श्रीकृष्ण जिस ज्ञान की बात कर रहे हैं वह विषयगत ज्ञान नहीं, आत्मगत ज्ञान है। स्वयं का ज्ञान ही मूल ज्ञान है और यदि स्व-स्वभाव ठीक से समझ लिया जाए तो निश्चित ही पवित्रता लाई जा सकती है, स्वच्छता आ सकती है। इसी से जीवन का संताप, दुःख दूर होकर व्यक्ति कलुषित चीजों से मुक्त हो सकता है। ज्ञान वही जो अनुभव से आये। बाकी सभी सूचनाएँ (इनफोरमेशन)।

ज्ञानी के लक्षण– श्रीकृष्ण ने गीता के बारहवें अध्याय में ज्ञान को प्राप्त ज्ञानी के लक्षण बताए हैं। वे कहते हैं– *अमानित्वमदम्भित्वम हिंसा क्षान्तिरार्जवम्।/आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रह॥7॥/इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च।/जन्ममृत्युजराव्याधिदु खदोषानुदर्शनम्॥8॥*

और हे अर्जुन श्रेष्ठता के अभिमान का अभाव, दंभाचरण का अभाव, प्राणीमात्र को किसी प्रकार नहीं सताना, क्षमाभाव, मन-वाणी की सरलता, श्रद्धा, भक्ति सहित गुरु की सेवा उपासना, बाहर भीतर की शुद्धि, अन्तःकरण की स्थिरता, मन और इन्द्रियों सहित शरीर का निग्रह तथा इस लोक और परलोक के सम्पूर्ण भोगों में आसक्ति का अभाव और अहंकार का भी अभाव एवं जन्म, मृत्यु, जरा और रोग आदि में दोषों का बारम्बार दर्शन करना ये सब ज्ञान के लक्षण हैं।

ज्ञान के साथ शीघ्रता से श्रेष्ठता का भाव पैदा होता है, मैं जानता हूँ और दूसरे जानते नहीं हैं, मैं ज्ञानी हूँ, दूसरे अज्ञानी हैं। श्रेष्ठता के रोग से बचना, इस अभिमान से बचना ज्ञानी का प्रमुख लक्षण है। ज्ञान के साथ विनम्रता भी बढ़नी चाहिए। विनम्रता भी दिखावे की नहीं, आरोपित नहीं बल्कि स्वस्फूर्त। ज्ञानी यह जानता है कि जगत एक प्रतिध्वनि है, जैसा मैं करता हूँ, वैसा ही लौटता है– प्रेम तो प्रेम, घृणा तो घृणा, मुस्कुराहट तो मुस्कुराहट। किसी को दुःख दूँगा तो मुझे दुःख देने के लिए आमंत्रण दे रहा हूँ अतः ज्ञानी किसी को सताता नहीं। श्रीकृष्ण कहते हैं कि ज्ञानी क्षमावान होता है, वह जानता है कि आदमी कमजोर होता है, दुविधा में होता है, उसे दोषी क्या ठहराना, भूल स्वाभाविक है अतः क्षमा का भाव उसमें होता है। सरलता का सीधा अर्थ है– जैसा भीतर है, वैसा बाहर है। श्रीकृष्ण आगे कहते हैं कि ज्ञानी का लक्षण यह भी है कि जब भी वह दुःख पाता है तब वह अपना ही दोष देखता है जिसका कि वह फल भोग रहा है। जरूर कोई बोया होगा जिसे अब काट रहा है। अज्ञानी अपने दुःख के लिए दूसरों को दोषी मानता है और ज्ञानी अपने दुःख के लिए स्वयं को। वह अपनी भूल, अपना कोई दोष खोजता है। इन लक्षणों से ज्ञानी धीरे-धीरे मन्दिर की ओर बढ़ने लगता है।

श्रेय और प्रेय– कठोपनिषद् के अनुसार नचिकेता जब यम से मृत्यु का रहस्य जानने गया तो यम ने उसे कहा– *श्रेयश्च प्रयेश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्व विविनक्तिधीरः।/श्रेयो हि धीरोऽमि प्रेयसो नृणी वे प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वर्णीते॥ 2॥*

'श्रेय और प्रेय दोनों ही मनुष्य के सामने आते हैं। बुद्धिमान मनुष्य उन दोनों के स्वरूप पर भलीभाँति विचार करके उनको पृथक करके समझ लेता है और वह श्रेष्ठ बुद्धिमान उस परमज्ञान के साधन को ही भोग-साधन की अपेक्षा श्रेष्ठ समझ कर ग्रहण करता है। परन्तु मंद बुद्धि वाला लौकिक योगक्षेम की इच्छा से भोगने के साधन रूप प्रेय को अपना सकता है।' ये दो शब्द बड़े अर्थ के हैं– प्रेय और श्रेय। श्रेय का अर्थ है जो श्रेष्ठ है, वह जो सत्य है। और प्रेय का अर्थ है जो प्रिय है, प्यारा है, जिससे वासना फलवती होती है। मन को लगता है– मजा आया, लेकिन आता कभी नहीं। मृगमरीचिका है। मन प्रेय से प्रसन्न होता है और आत्मा श्रेय से प्रसन्न होती है। साधारणतः जो अज्ञान में डूबा है, वह प्रेय में अनुरक्त रहता है। जिसमें ज्ञान उतरता है, वह कहता है, जो श्रेय है, वही करूँगा। जो सत्य है, शुभ है वही करूँगा। महावीर ने कहा है– 'जेण रागा विरज्जेज्ज, जेण सेए सुरज्जदि'– जिससे श्रेयस सधे वही ज्ञान है। 'जेण भित्ती प्रभावेज्ज' और जिससे मैत्री बढ़े, प्रेम बढ़े, वही ज्ञान है।

विद्या व अविद्या– यम श्रेय व प्रेय की बात समझाने के बाद कहते हैं– 'हे नचिकेता मैं तुमको विद्या का ही अभिलाषी मानता हूँ, तुम उस बन्धन में नहीं फँसे जिसमें अविद्या में रहते हुए अपने आप को बुद्धिमान एवं विद्वान मानने वाले लोग फँस जाते हैं व भटकते हुए ठोकरें खाते रहते हैं।' विद्या व अविद्या ये दो शब्द समझने जैसे हैं। अविद्या का अर्थ अज्ञान नहीं है जैसा कि शब्दकोश बताते हैं। अविद्या का अर्थ होता है, ऐसा ज्ञान जिससे प्रेय मिले और विद्या का अर्थ होता है जिससे श्रेय मिले। विद्या हम उसे कहते हैं जिससे आत्मा मिलती है। विद्या उसे कहा जाता है जिससे व्यक्ति प्रिय का मोह छोड़ देता है, शुभ की खोज करता है, सत्य की खोज करता है।

यम ने बड़ी अनौखी बात कही। कहा– अपने को बहुत बुद्धिमान, पंडित मानने वाले मूढ़ लोग भटकते हैं, ठोकरे खाते हैं और कष्ट भोगते रहते हैं। वे कहते हैं, बुद्धिमान, पंडित लोग अपने को ज्ञानी मानते हैं पर उनका सारा ज्ञान अविद्या का है। हमारे आज के विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय इन अर्थों में विद्यालय नहीं है क्योंकि वहाँ जो भी सिखाया जा रहा है उससे प्रेय की उपलब्धि हो रही है, वह भी पूरी नहीं। यदि विचारकों, संतों, ज्ञानियों से पूछें तो वे कहेंगे विद्यालय गलत नाम दिया है क्योंकि विद्यालय तो वह होता है जहाँ व्यक्ति को स्वयं को पाने, सत्य को पाने, जीवन को पाने की कला सिखाई जाती है। इंजीनियर, डॉक्टर, प्रोफेसर, दुकानदार, कारीगर, कलाकार, चित्रकार जो भी जानते हैं वह विद्या नहीं है। वे जो जानते हैं उससे प्रेय को पाया जा सकता है, उससे जीवन चलता है, श्रेय को पाने का कोई उपाय ही नहीं है। श्रेय को प्राप्त

करने की कला जानें तो ही उसे विद्यालय कहा जाना चाहिए। श्रेय की कला जाने बिना जो भी अपने को बुद्धिमान मानता है, उसके बारे में यह नचिकेता को कहते हैं– वे बुद्धिमान-मूढ़ हैं। वे खुद तो भटकते ही है, दूसरों को भी भटकाते हैं।

सा विद्या या विमुक्तये– भारतीय चिन्तन के अनुसार विद्या वही है जिससे मुक्ति का अहसास हो– अर्थात् भौतिक, दैहिक, आर्थिक, सामाजिक, आध्यात्मिक समस्याओं से मुक्ति मिले– 'सा विद्या या विमुक्तये'। ज्ञान की परिभाषा भी वही है कि जो मुक्त करे वही ज्ञान है, वही विद्या है। जिस विद्या से, जिस ज्ञान से मुक्ति का, आनन्द का अहसास न हो तो उसे अविद्या, अज्ञान ही कहा जाना चाहिए। विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि हुई है। दावा है कि वे ज्ञान के स्रोत हैं और ज्ञान में वृद्धि कर रहे हैं। दरअसल सूचनाएँ व जानकारियाँ बढ़ती जा रही हैं जिन्हें हम भूलवश ज्ञान कह रहे हैं, दूसरी ओर मनुष्यता घटती जा रही है। मनुष्य मुक्त होता दिखाई नहीं दे रहा है वह तो दुःखी होता जा रहा है, विशृंखलता बढ़ रही है, समाज जुड़ने के स्थान बँटता जा रहा है। एक ओर बुद्धि विकसित हो रही है, तर्क विकसित हो रहे हैं परन्तु दूसरी ओर मनुष्य के हृदय का भाव व आत्मा टूटती हुई मालूम पड़ती है। अज्ञान के कारण दुःखों में वृद्धि हो रही है, व्यक्ति मुक्त नहीं हो रहा। श्रीकृष्ण की देवशना कि ज्ञान पवित्र करने वाला है, इसे समझना चाहिए और विद्या व विद्यालय के सही अर्थ को भी।

ज्ञानी व पंडित का भेद– जनक के दरबार में ब्रह्मज्ञान पर चर्चा चल रही थी। अष्टावक्र के पिता भी दरबार में सभा में सम्मिलित थे। विवाद हो रहा था। अष्टावक्र को पिता से कुछ काम आ गया। वह पिता से मिलने राज-दरबार पहुँच गये। ब्रह्मज्ञान पर सभा चल रही थी। जैसे ही उसने प्रवेश किया, लोग हँसने लगे। अष्टावक्र आठ जगह से टेढ़े-मेढ़े थे। जनक को भी हँसी आ गई। अष्टावक्र ने चारों तरफ देखा और वह भी खिलखिला कर हँसा। उसके हँसने से दरबार में सन्नाटा छा गया। किसी ने सोचा भी न था कि वह भी हँसेगा। जनक ने कहा, हम क्यों हँसे, यह तो साफ है पर तुम क्यों हँस रहे हो। अष्टावक्र की उम्र बहुत कम थी। उसने कहा कि मैंने सुना था, पंडितों की सभा है, ब्राह्मणों की, ब्रह्मज्ञानियों की, पर यहाँ तो सब चमार इकट्ठे हैं। जिनको चमड़ी दिखाई देती है, वे चमार हैं। इसमें आत्मा किसी को दिखाई नहीं देती। मेरा शरीर आठ जगह से झुका है, यह सही है। लेकिन इन सबमें एक भी ब्रह्मज्ञानी नहीं है। इन मूढ़ों के साथ समय खराब किया जा रहा है। यदि इनमें एक भी ब्रह्मज्ञानी होता तो वह 'मुझे' देखता, मेरे शरीर को नहीं देखता।

बात सही थी। ज्ञानी कहीं सभाओं में शास्त्रार्थ के लिये इकट्ठे होते हैं? क्या वे विवाद करने या प्रतियोगिता में भाग लेने आते हैं? ज्ञानी को क्या पुरस्कार की आवश्यकता होती है? अज्ञानियों को ही दिखाई पड़ता है कि जनक के पास देने को है। अष्टावक्र तो सभा से चले गये पर जनक के मन में बहुत बातें छोड़ गये। अष्टावक्र का पीछा किया जनक ने और जनक की जिज्ञासाओं से एक महान ग्रन्थ का निर्माण हुआ– अष्टावक्र, जनक संवाद। ज्ञानी की आँख गहरे देखने की होती है पर पंडित का ज्ञान ऊपरी-ऊपरी, उधार होता है। जनक की सभा में उधार ज्ञान के पंडित एकत्रित थे। अष्टावक्र ने असली ज्ञान दिया– ज्ञानी होते तो मुझे देखते, मेरे शरीर को नहीं।

विद्वान व ज्ञानी– चीनी संत लाओत्से ने कहा, जो दूसरों को जानता है, वह विद्वान और जो स्वयं को जानता है, वह ज्ञानी। दूसरों को जानना तो बहुत आसान है क्योंकि दूसरों को इन्द्रियों के द्वारा जाना जाता है– आँख, कान और हाथ से। ये इन्द्रियाँ स्वयं को जानने के काम में नहीं आती। स्वयं के सम्बन्ध में हम कुछ जानते भी हैं तो दूसरों के द्वारा जानते हैं, दूसरे जो हमारे बारे में राय रखते हैं, वही भर हम जानते हैं। यह उनके आँख की खबर होती है जो प्रायः सही नहीं हो पाती। जो दूसरों की जानकारी है– चाहे वह वस्तु, विचार व व्यक्ति की है– वह विद्वता है। विद्वान होना कठिन नहीं है। शास्त्रों से शब्द इकट्ठे किये जा सकते हैं, स्मृति सजाई जा सकती है। बाहर से इकट्ठा किया हुआ यह ज्ञान बाहर को ही प्रभावित कर सकता है। परन्तु ज्ञानी के पास जो ज्ञान है वह बाहर से न आकर भीतर से आता है। वह तो निर्विचार की स्फुरण होती है, जहाँ सब इन्द्रियाँ शान्त होती हैं, मन समेत। इससे सुनने वाले की पहचान नहीं होती अतः इसे वे ठीक से समझ नहीं पाते। संसार में विद्वानों को कोई तकलीफ नहीं हुई। ज्ञानियों को जीते जी बहुत तकलीफ झेलनी पड़ी, चाहे वे महावीर हों, ईसा हों, मंसूर हों या सुकरात। हम कृष्ण, महावीर, बुद्ध, नानक, कबीर को विद्वान नहीं कह सकते, वे ज्ञानी हैं। ज्ञानी अनुभूति के तल पर जीता है और विद्वान तर्क पर।

ज्ञान की प्यास– महात्मा बुद्ध एक गांव में ठहरे हुए थे और एक व्यक्ति ने सुबह-सुबह आकर कहा– आप इतने दिनों से, इतने वर्षों से लोगों को समझा रहे हैं– परमात्मा के लिए, आत्मा के लिए, मोक्ष के लिए– लेकिन कितने लोगों को परमात्मा उपलब्ध हुआ है। बुद्ध ने कहा, तुम्हारा यह पूछना ठीक है कि मेरे उपदेशों से लोगों को मोक्ष या परमात्मा का अनुभव हुआ? तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर दूँ, इसके साथ यह भी जानना चाहूँगा कि इस गांव में जाकर तुम लोगों से पूछो कि कितने लोग परमात्मा को चाहते हैं। कितने लोगों की आकांक्षा है? कितने लोगों में प्यास है?

गांव छोटा सा था। वह व्यक्ति गया। उसने सुबह से शाम तक लोगों से पूछा। थोड़े से लोग थे। उसने सारे लोगों की सूची बनाई। कोई धन चाहता था, कोई पद चाहता था, कोई कुछ वस्तुएँ, पर परमात्मा की चाह किसी ने नहीं बताई। वह व्यक्ति लौटा। बुद्ध ने कहा– यदि कोई परमात्मा को चाहता ही नहीं हो तो परमात्मा थोपा नहीं जा सकता। हमारी माँग सांसारिक चीजों की होती है। क्रिया की जाती है कुछ पाने के लिए लेकिन स्वयं को पाना हो तो सारी बाहरी क्रियाएँ छोड़नी पड़ती है। यह भीतर प्रवेश का अटपटा व मुश्किल कार्य है। जो स्वयं को पा ले उसे और किसी को पा लेने का कोई मूल्य नहीं होता। यही सार्थक कार्य होता है और हर सार्थक कार्य कठिन लगता है।

प्यास यों भी नहीं जगती क्योंकि विश्वविद्यालय के प्रमाण-पत्र को ही लोग ज्ञान समझने लग जाते हैं इसलिए असली ज्ञान के खोज की कोई जरूरत ही मालूम नहीं पड़ती। विद्वान भी ज्ञान तक तभी पहुँच सकता है जबकि वह अज्ञानी होने का साहस जुटाए। इसीलिए तो ईशावास्योपनिषद् में कहा गया है– *अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽ विद्यानुपासते। तयो भूय इव ते*

तमो विद्यायां रताः। अर्थात् जो अविद्या की उपासना करते हैं, वे घोर अन्धकार में प्रवेश करते हैं और जो विद्या में रत हैं वे मानो उससे भी अधिक अंधकार में प्रवेश करते हैं। अज्ञानी तो अंधकार में हैं ही परन्तु जो अपने को ज्ञानी समझ लेते हैं– वे उससे भी ज्यादा घोर अन्धकार में हैं। बात बड़ी विचित्र है पर सत्य है। जिसे ज्ञानी होने का भ्रम होता है वह महान् अन्धकार में होता है। इसलिए कि उसके लिए प्रकाश के सभी दरवाजे बन्द हो जाते हैं, प्यास ही नहीं रहती।

ज्ञान सब में विद्यमान– श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है– *धूमेनाव्रियते वहिर्यवादर्शो मलेन च। यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम्॥* अर्थात् जैसे धुएँ से अग्नि व मल से दर्पण ढक जाता है (तथा) जैसे स्निग्ध झिल्ली से गर्भ ढका हुआ है, वैसे ही उस काम के द्वारा ज्ञान ढका हुआ है। ज्ञान ऐसा नहीं है कि आज हमारे पास नहीं है और कल हम उसे पा लेंगे। अध्यात्म यह मानता है कि जो हमारे पास है, केवल उसे ही हम पा सकते हैं। बुद्ध को जिस दिन ज्ञान हुआ, लोगों ने उनसे पूछा, कि आपको क्या मिला? तो बुद्ध ने कहा, यह मत पूछो कि क्या मिला, पूछो कि मैंने क्या खोया? लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। बुद्ध ने कहा– वही पाया जो मिला हुआ ही था और सिर्फ वही खोया जो मेरे पास था ही नहीं लेकिन मुझे एहसास होता था कि मेरे पास है। जो नहीं था, उसे खो दिया और जो था उसे पा लिया। इसे यों भी समझा जा सकता है कि यदि आग धुएँ से ढकी हो और धुआँ अलग हो जाए तो आग प्रकट हो जाती है। जैसे सूरज बदलियों में छिपा हो और बदलियाँ दूर हो जाए तो सूरज प्रकट हो जाता है। ऐसे ही ज्ञान अप्रकट है, कल प्रकट हो सकता है। इससे यह भी अर्थ निकलता है कि अज्ञानी भी उतने ही ज्ञान से भरा हुआ है जितना परमज्ञानी। उसके पास भी आग है पर धुआँ ज्यादा है। अज्ञानी के पास काली बदलियाँ ज्यादा हैं जो सूरज के प्रकाश में बाधक हैं। यहाँ अज्ञान का अर्थ ज्ञान का अभाव नहीं है। अर्थ इतना ही है कि आग धुएँ से ढकी हुई है। यह धुआँ क्या है, इसे पहचानने की जरूरत है। पहचान होते ही ज्ञान की आग स्वतः ही प्रकट हो जाएगी।

जब भी श्रेय की बात आती है, शिखर की ओर रुख की बात होती है तो मन बड़ी चालाकी का खेल खेलता है। वह कहता है हम तो सामान्य व्यक्ति हैं, श्रेय पर टिके रहना, ऊँचाई प्राप्त करना तो असाधारण लोगों का काम है। असल में कोई मनुष्य सामान्य नहीं है, हम अपने मन से ही अपनी हैसियत कम करते हैं। यह तो पता तब तक नहीं चलता जब तक कि बोध जागना शुरू न हो जाए। हर शिक्षक, हर बालक, हर व्यक्ति में सभी संभावनाएँ मौजूद हैं। कोई बात किसी की हैसियत के बाहर नहीं है, ये सब मन के बहाने होते हैं। जरूरत है, सही सोच की। सौ साल अंधेरा रहा हो और यदि दीया जलाया जाए तो एक क्षण में अंधेरा विलीन हो जाता है। ऐसा नहीं है कि सौ साल दीया जलाने पर सौ साल पुराना अंधेरा जाएगा।

ज्ञान दूसरा नहीं दे सकता– ज्ञान कोई दे नहीं सकता। मार्ग बताया जा सकता है पर चलना तो स्वयं को ही पड़ेगा। मंजिल मार्ग बताने से नहीं मिलती, मार्ग जान लिया इससे भी नहीं, मार्ग पर चलने से ही मिलती है। विज्ञान का जो ज्ञान है, वह एक दूसरे को दे सकता है। एक व्यक्ति ने खोज ली बिजली, बेतार का तार या कुछ भी तो दूसरों को खोजने की आवश्यकता नहीं, जानने की जरूरत नहीं, उपयोग कर लेंगे। विज्ञान का ज्ञान बाहर की चीज है, हस्तान्तरणीय है। परन्तु जिसने जो अन्तरतम में जाना है, उसे हस्तान्तरित करने का उपाय भी नहीं है, कोई किसी को दे भी नहीं सकता। यह तो स्वयं पाने की चीज है। ज्ञान पाया जा सकता है, दिया नहीं जा सकता। शब्द तो दिये जा सकते हैं पर ज्ञान नहीं। पिता की बाह्य सम्पत्ति तो प्राप्त की जा सकती है, वसीयत हो सकती है पर पिता ने जो जाना था– अन्तरतम में, उसे वसीयत के रूप में प्राप्त नहीं किया जा सकता। पिता भी बेटे को नहीं दे सकता जब तक कि बेटा स्वयं ही प्राप्त न कर ले। ज्ञानियों की बात सुनने योग्य होती है, समझने योग्य होती है पर मानने योग्य तभी होती है जब तक वह स्वयं के अनुभव में न आ जाए। सिद्धान्तों को याद कर लेने, बोल देने से ज्ञान का भ्रम होने लगता है। ज्ञान तो तभी है जब वह अनुभव से आए, स्वयं से आए।

निहितार्थ– ज्ञान-अज्ञान, पवित्रता-अपवित्रता, विद्या-अविद्या आदि श्रीकृष्ण एवं अन्य संतों, ज्ञानियों की ये बातें सभी व्यक्तियों, विशेषकर शिक्षकों के लिए कई प्रश्न उभारती हैं। प्रश्न बेकार, यदि उत्तर न मिले और उत्तर भी स्वयं से, किसी दूसरे से नहीं, बाहर से आए उत्तर नहीं, भीतर से आए वही, भीड़ के उत्तर नहीं, मौन से प्राप्त उत्तर, पांडित्य के उत्तर नहीं, प्रज्ञा से प्राप्त उत्तर। बुद्ध का आखिरी वचन इस पृथ्वी से विदा होते हुए स्मरण योग्य है। यह वचन है 'अप्प दीपो भव' अपने दीये खुद बनो। अपने दीये खुद बनने के लिए बाहरी प्रयत्न नहीं, भीतरी प्रयत्न ही काम के हैं– स्व-चिन्तन, स्व-विश्लेषण व स्व-निर्णय। स्व-चिन्तन के विषय हो सकते हैं– (1) शिक्षा के क्या उद्देश्य हैं जिनकी विद्यालयों में परिणिति होनी चाहिए। (2) जानकारी व ज्ञान में क्या अन्तर है? (3) ज्ञान व्यक्ति को किस प्रकार पवित्र कर सकता है? (4) विद्यार्थियों को ज्ञान की दिशा की ओर कैसे प्रवृत्त किया जा सकता है? (5) हमारे विद्यालय असली रूप से 'विद्या' के घर कैसे बनें? (6) प्रेय व श्रेय हमारे लिए क्या व क्यों? (7) तकनीकी युग में जानकारियों (विषयगत) के स्रोत विद्यालय ही नहीं रहे, ऐसे में शिक्षक अपना गौरव व वर्चस्व कैसे बनाये रखे, क्या करें? कई इस प्रकार के प्रश्न चिन्तन माँगते हैं। गीता के चौथे अध्याय में अट्ठाइसवें श्लोक में श्रीकृष्ण ने 'स्वाध्याययज्ञानायज्ञश्च' कहा है अर्थात् ज्ञान यज्ञ के साथ स्वाध्याय यज्ञ को जोड़ा है। स्वाध्याय में दो शब्द हैं– स्व और अध्ययन। स्वाध्याय है स्व का अध्ययन। स्वाध्याय का अर्थ यदि अध्ययन ही होता तो स्वाध्याय कहने की कोई आवश्यकता ही नहीं थी। शास्त्र का अध्ययन फिर शास्त्र में जो पाया उसे स्वयं में खोजें तब स्वाध्याय। अपने अन्तस से स्वयं परिचित हों, स्व से साक्षात्कार करें, साथ ही अपने घावों को भी देखें। इसीलिए इसे यज्ञ की संज्ञा दी। स्वयं का सही साक्षात्कार हो तब ही वह अपने बदलाव की प्रक्रिया बन सकती है। स्वाध्याय से पता चल जाए कि यह मुझसे क्या हो रहा है तो फिर वैसा होना कठिन है। बुद्ध का साथ दीपो भव और श्रीकृष्ण का स्वाध्याय यज्ञ एक ही बात है। स्वचिन्तन, स्वयं विश्लेषण करें और स्वयं ही निर्णय पर पहुँचे तभी हम श्रीकृष्ण के उपदेश को सार्थक कर सकेंगे कि ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निःसंदेह कुछ भी नहीं है।

– 2/192, कुड़ी भगतासनी
हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, जोधपुर

झोला पुस्तकालय-10

शिक्षक क्या पढ़ें - क्यों पढ़ें?

❑ शिवरतन थानवी

श्री शिवरतन थानवी सेवानिवृत्त संयुक्त शिक्षा निदेशक हैं। आप शिविरा के वरिष्ठ सम्पादक रहे हैं। आपके कार्यकाल में शिविरा व नया शिक्षक के अनेक उपयोगी व संग्रहणीय विशेषांक प्रकाशित हुए, शिविरा का यश अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुँचा। आप अनेक पुस्तकों के लेखक एवं समीक्षक हैं। सतत् स्वाध्यायी श्री थानवी का पसीना शिविरा की अनमोल विरासत है।

हर अच्छी पुस्तक, हर अच्छी पत्रिका, ज्ञान की खान होती है। रुचि होनी चाहिए। न हो तो कीमती से कीमती हीरा भी पत्थर है। घोड़ा अड़ा क्यों और पान सड़ा क्यों, क्योंकि फेरा न था। पान को पलटा क्यों नहीं और घोड़ा घुमाया क्यों नहीं, यह हम अपनी कक्षाओं में कई बार पढ़ा चुके हैं, किन्तु खुद अपने जीवन में इसे उतारने का कष्ट नहीं करते। क्यों? क्या हमको प्रगति प्यारी नहीं?

ऐसा तो कोई नहीं कहेगा कि उसे प्रगति प्यारी नहीं, लेकिन आलस्य हमें आगे नहीं बढ़ने देता है। आलस्य त्यागें तो जरूर हम यह जान सकते हैं कि शिक्षक के रूप में हमारे पेशे को उन्नत बनाने के लिए हमें क्या पढ़ना चाहिए और क्यों पढ़ना चाहिए।

थोड़ा विचार करें। रास्ता साफ है। कदम आगे बढ़ाने भर की देर है। कितनी-कितनी मूल्यवान और प्रेरणादायक पुस्तकें और पत्रिकाएँ आपकी प्रतीक्षा में तैयार बैठी हैं। ध्यान दीजिए। वे आपको ज्ञान से भर देंगी।

आपको दो तरह से विचार करना होगा। एक तो वे पुस्तकें और पत्रिकाएँ जो आपको अच्छा शिक्षक बनने में मदद करें और दूसरी वे पुस्तकें व पत्रिकाएँ जो आपके व्यक्तित्व को निखारें, उन्नत बनाएँ और सामान्य ज्ञान से समृद्ध करके एक व्यापक विश्वदृष्टि देते हुए आपको एक अच्छा जागरूक नागरिक बनाएँ।

अच्छा शिक्षक बनने के लिए आपको अच्छा शिक्षा-दर्शन चाहिए। यह जिन-जिन पुस्तकों व पत्रिकाओं में मिलता हो, उन्हें आप ढूँढ़ते रहिए। अपने खजाने को नित नया बनाते रहिए। खजाने में कालजयी पुराने लेखकों की कृतियाँ भी शामिल करें तो भी वह 'नित नया' कहलाएगा। एक किताब मैंने पढ़ी थी 1957 में एक हायर सैकंडरी स्कूल के पुस्तकालय में। नाम था Ye Who Teach, मुझे अभी दस-पंद्रह वर्ष पहले तक लेखक का नाम भी याद था, अब भूल गया हूँ, लेकिन इतना जरूर याद है कि इस पुस्तक ने एक शिक्षक की दृष्टि से मुझे तब बहुत ताकत दी थी। उसे पाने-पढ़ने को मैं आज भी कम व्यग्र नहीं। तरसता हूँ। मिले तो मेरा सौभाग्य। पचास वर्ष से भी अधिक हुआ, उसे पुनः-पुनः ढूँढ़ने की बहुत कोशिशें कीं। उस स्कूल के लाइब्रेरियन को लिखा कि ढूँढ़े, यह भी लिखा कि हो तो वहीं आकर पढ़ूँगा, किन्तु उनका उत्तर आया कि बहुत ढूँढ़ा, नहीं मिली।

दूसरी ओर आपके लिए एक शुभ समाचार, कि उन्हीं दिनों एक शिक्षाप्रेमी बुजुर्ग शिक्षाधिकारी से मुलाकात हो गई जिन्होंने अपने निजी पुस्तकालय से ए.एस. नील की तीन ऐसी पुस्तकें दीं मुझे पढ़ने को जिनसे मेरे शिक्षक-जीवन की दिशा ही बदल गई, शिक्षा और शिक्षण सम्बन्धी मेरा सोच एकदम नया हो गया। उन तीनों का निचोड़ है 'समरहिल' जो पहले अंग्रेजी में छपा और अब यह हिन्दी में 'एकलव्य प्रकाशन' भोपाल से उपलब्ध है। तब इन तीनों का नाम था That Dreadful Child, That Dreadful Teacher और That Dreadful Parent, जिनका भाव था कि हम ध्यान से बच्चे को देखें और शिक्षक और माँ-बाप के रूप में खुद को भी निहारें। बच्चे को हम भयंकर कहते हैं, सो तो हमारी भूल है, किन्तु हम यह भी देखें कि हम खुद अपने बच्चों के प्रति कितने भयंकर हैं ! उन तीनों पुस्तकों के भाव को व्यक्त करते हुए और बाद के नए-नए अनुभवों को जोड़ते हुए 'समरहिल' पुस्तक तैयार की उन्होंने जिसे हम आज नित नियमित रूप से थोड़ा-थोड़ा पढ़ने को सिरहाने रख सकते हैं। वे बच्चों को इतनी अधिक स्वतंत्रता देते थे कि बच्चे उनके मुख पर उनकी हँसी उड़ाने वाला 'नील नील संतरे छील' जैसा गीत गा दिया करते थे। उनके विद्यालय में लोकतंत्र का ऐसा सक्रिय रूप था कि पुरे विद्यालय की महासभा ही विद्यालय प्रबंध के तमाम निर्णय लेती थी। उनकी पत्नी व बच्चों द्वारा चलाया जा रहा इंग्लैंड का वह 'समरहिल' स्कूल आज भी वहाँ की सरकार के लिए सिरदर्द बना हुआ है। सरकार ने उनके स्कूल को चेतावनी दे दी है कि वे सरकारी पाठ्यक्रम लागू करें, नहीं तो उनका स्कूल बंद कर दिया जाएगा। 'समरहिल' में पाठ्यक्रम ऊपर

से नहीं, नीचे से आता है। बच्चों की जो मर्जी हो पढ़ने की, और पूरी स्कूल की जो आमसभा तय करे, वही उनका पाठ्यक्रम होता है। सरकार ने पिछले सत्तर सालों में सौ बार डराया होगा, 'समरहिल' टस से मस नहीं होती। ऐसी अद्भुत, अद्वितीय पद्धति है इस स्कूल की। पढ़िए आप 'समरहिल' और जान जाइए कि माजरा क्या है।

मारिया मोन्तेस्सोरी के जीवन और शिक्षादर्शन पर आप विस्तार से पढ़ चुके हैं, इसी स्तम्भ में फरवरी 2012 की शिविरा में। बच्चों को आजादी उन्होंने दी, बच्चों को निर्भीक उन्होंने बनाया और नए-नए अनुभवों की कल्पना उनके शिक्षण के लिए करने को उन्होंने शिक्षक समुदाय को प्रेरित किया। संजीव मिश्र की वह किताब जरूर पढ़ने योग्य है।

मोन्तेस्सोरी से प्रेरणा लेकर गुजरात के अमर शिक्षक गिजुभाई बधेका ने जो पुस्तकें लिखीं शिक्षकों व माता-पिताओं के लिए, उन सभी को राजलदेसर (चूरू, राज.) की 'मोन्तेस्सोरी बाल शिक्षा समिति' ने 'गिजुभाई ग्रन्थमाला' की 17 पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया है। न पढ़ा हो तो जरूर पढ़ें। उस माला की एक पुस्तक है 'दिवास्वप्न' जो उपन्यास शैली में है और जिसे 'नेशनल बुक ट्रस्ट' दिल्ली ने भी प्रकाशित किया है। उस पुस्तक से स्व. गिजुभाई का पूरा जीवन, जीवनदर्शन और उनका शिक्षा-दर्शन – सब हमारी आँखों के सामने जीवंत रूप में उपस्थित हो जाते हैं। 'गिजुभाई ग्रन्थमाला' में कुछ पुस्तकें माता-पिताओं के लिए हैं जैसे– 'माँ-बाप बनना कठिन है' और 'माता-पिता के प्रश्न' आदि। इन पुस्तकों की यह विशेषता है कि घरों में बच्चों के जीवन को स्वस्थ, सुखी और समृद्ध बनाने की प्रेरक और मार्मिक चर्चा है, ऐसी मधुर शैली में कि कई जगह तो हम उसे 'रसीली' भी कह सकते हैं। इस ग्रंथमाला में जो पुस्तकें विशेष तौर से शिक्षकों के लिए हैं उनमें बाल-जीवन और बाल-शिक्षण के विविध अंगों की विशद चर्चा की गई है। जैसे– 'मोण्टेसोरी पद्धति', 'यदि आप शिक्षक हैं', 'कथा-कहानी का शास्त्र' और 'बाल-शिक्षण जैसा मैं समझ पाया' आदि।

गिजुभाई के जीवन और कृतित्व पर 'दिवास्वप्न' से आगे कोई गवेषणात्मक सर्वांगसुन्दर पुस्तक पढ़नी हो तो पढ़िए 'गिजुभाई का शिक्षा में योगदान' जिसे गिजुभाई के विशिष्ट अध्येता भावनगर के शिक्षक-प्रशिक्षक व विद्वान् लेखक भाई भरतलाल पाठक ने गुजराती में लिखी है और जो हिन्दी में इस विषय की एकमात्र श्रेष्ठ पुस्तक है। भाई रामनरेश सोनी ने इसका हिन्दी में अनुवाद, किया है और बीकानेर के 'कृष्ण जनसेवी प्रकाशन' ने इसे प्रकाशित किया है। गिजुभाई के महत्व को समझना आसान हो जाएगा यदि आप इस पुस्तक को पढ़ेंगे। प्रत्येक शिक्षक को चाहिए कि वह गिजुभाई को अपना आदर्श बनाएँ। वह इसलिए कि पता चले हम विद्यार्थियों को कैसे पढ़ाएँ, कैसे उन्हें पढ़ने के लिए प्रयत्नशील करें, कैसे उन्हें कल्पनाशील बनाएँ, और कैसे यह सब करने की विद्या देने वाले ग्रंथ पढ़-पढ़कर स्वयं को तैयार करें– सतत अपने आपको तैयार करते रहें।

शिक्षा सम्बन्धी पुस्तकों व पत्रिकाओं को पढ़ना तो हमारे लिए जरूरी है ही, उनकी चर्चा हम आगे और करेंगे, किन्तु कुछ और अन्य पहलुओं से भी अपने आपको समृद्ध करते रहना भी कम जरूरी नहीं है। कई शिक्षक कई दृष्टियों से कमजोर होते हैं तो कई शिक्षक कई दृष्टियों से मजबूत भी होते हैं। स्वाध्याय दोनों को बल देगा। साधन कई हैं। पहले केवल पुस्तकें थीं, फिर पत्रिकाएँ आईं। अब तो फिल्में, टी.वी., सी.डी., डी.वी.डी. और इंटरनेट आदि भी कई नए इलेक्ट्रॉनिक साधन हो गए हैं। सबसे सुगम और सबसे सशक्त माध्यम पुस्तकें और पत्रिकाएँ ही हैं और रहेंगे। ये इंटरनेट पर भी उपलब्ध होते हैं, किन्तु उतनी सहजता और सुगमता से नहीं जितना बिना बिजली वाले गांव के झोंपड़े में भी सिरहाने रखी पुस्तकें और पत्रिकाएँ उपलब्ध रहती हैं। इंटरनेट उपयोग करें तो कोई हर्ज नहीं किन्तु व्यसन हो तो छपी किताबों व पत्रिकाओं का ही हो। सहजता-सुगमता की कमी को छोड़ नेट से और भी कई नुकसान हैं– शारीरिक, मानसिक आदि भी। समय का उसमें लाभ तो है पर नुकसान भी कम नहीं।

न्यूनतम अपेक्षा हम स्वयं से कितनी और क्या रखें, इस प्रश्न का उत्तर मेरी समझ में यह है कि एक तो हम डिक्शनरी देखें और दूसरे हम एटलस देखा करें। डिक्शनरी हिन्दी की भी रखें और अंग्रेजी की भी रखें। भाषा, साहित्य, अपना विषय ज्ञान और सामान्य ज्ञान हमारी न्यूनतम आवश्यकता है। ललित कलाओं और लोक कलाओं में रुचि रखें तो और भी अच्छा। संगीत और चित्रकला में भी, कुछ रुचि होगी तो हमारे व्यक्तित्व में पूर्णता आएगी। सामान्य ज्ञान में राजनीति, साहित्य, अर्थशास्त्र, पर्यावरण और सामाजिक-सांस्कृतिक ज्ञान भी शामिल है जो पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने से बढ़ता है। जागरूक रहने की जरूरत है। जितना अधिक जागरूक रहेंगे, जितनी अधिक रुचि लेंगे, उतना ही आपका सामान्य ज्ञान समृद्ध होगा। स्थानीय भूगोल-इतिहास से विश्व के भूगोल-इतिहास तक आपकी नजर जानी चाहिए। सच्चा शिक्षक बने रहना है तो इतना तो कष्ट करना ही पड़ेगा।

अपने विषय में पारंगत होने की चिंता हो तो उससे सम्बन्धित पुस्तकें आपके पास क्या हैं और क्या लेते रहते हैं, अधुनातन बने रहने के लिए, यह भी देखिए। फिर यह भी देखिए कि शिक्षक-प्रशिक्षण सम्बन्धी पुस्तकें केवल परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए ही नहीं होती। चाहे पासबुकें हों, चाहे मौलिक ग्रंथ हों, वे देखने-पढ़ने को भी कभी समय जरूर निकाला कीजिए। असली प्रशिक्षण तो सेवाकालीन समय में ही होना चाहिए। सेवापूर्व प्रशिक्षण की शर्त अनावश्यक है। यह कुछ को धनपति बनाकर लाखों शिक्षक-प्रशिक्षुओं की गाढ़ी कमाई का या उधार का पैसा बरबाद करती है। यह शर्त तो सरकार को हटानी ही होगी।

'शिक्षा-विमर्श' पत्रिका के अध्यापक विशेषांक में मैंने इस पर विस्तार से लिखा है। (देखें मेरा यही स्तम्भ शिविरा अप्रैल, 2012 में इसी विशेषांक की विस्तृत चर्चा के लिए) आप भी इस पर विचार कीजिए और कोशिश कीजिए कि सेवापूर्व प्रशिक्षण लिया हो चाहे न लिया हो, हमारा स्वयं-शिक्षण सतत स्वेच्छा से जारी रखने में ही हमारी और हमारे देश की भलाई है। ऐसी सामग्री की खोज में रहिए जो आपको आपके विषय के शिक्षण या प्रशिक्षण की आवश्यक बातें बारीकी से बताती हो। जैसे एन.सी.ई.आर.टी. ने गणित, अंग्रेजी, हिंदी और कला-शिक्षण के आकलन की स्रोत पुस्तिकाएँ प्रकाशित की हैं। मूल्यांकन और आकलन सम्बन्धी जो-जो अच्छी पुस्तकें मिलें, देखें। शिक्षण विधियों को भी पढ़ें। मनोविज्ञान-बाल मनोविज्ञान और शिक्षा मनोविज्ञान की पुस्तकें भी पढ़ें,

उपयोगी होती हैं। ये किताबें हुई कौशलवृद्धि की। कौशलवृद्धि के साथ ज्ञानवृद्धि भी जरूरी है। ज्ञानवृद्धि की किताबों को आप उपन्यास की तरह पढ़ने की आदत डालें। इन्हें पढ़ने में रुचि लें तो रस भी आने लगेगा। कथारस बनेगा। शिक्षण कार्य व्यवसाय या धंधा ही नहीं है, मिशन भी है। हम मिशन मानें इसे तो हम सामान्य से ऊँचा उठ जाएँगे। हमारा संस्कार बनेगा। शिक्षक को शिक्षक का संस्कार कैसे मिले? मिलना चाहिए कि नहीं, सोचें हम। दृढ़ निश्चय करें। पुस्तक-संस्कृति को अपनाए बिना यह संस्कार संभव कैसे होगा ?

ज्ञानवृद्धि की पुस्तकें दो प्रकार की होती हैं। पहली वे जो हमें अच्छा शिक्षक बनने में मदद करें, और दूसरी वे जो हमारे व्यक्तित्व को निखारें, बौद्धिक रूप से हमें ऊँचा उठाएँ और हमें सामान्य ज्ञान से समृद्ध करके एक व्यापक विश्वदृष्टि भी दें। अच्छा शिक्षक बनने में मदद करने वाली पुस्तकें भी दो तरह की होंगी– एक वे जो शुद्ध शिक्षक प्रशिक्षण में काम आने वाली शिक्षण विधियों की हों या मनोविज्ञान आदि की हों, विवेक देने वाली हों, विश्लेषण-विवेचन द्वारा अंतर्दृष्टि पैदा कर शैक्षिक ज्ञान को विस्तार देने वाली हों, रचनात्मक शिक्षा साहित्य हों जैसे मौलिक शिक्षा-सिद्धान्त, शिक्षा-दर्शन, आत्मकथाएँ, अनुभव व प्रयोगों पर आधारित विश्लेषणात्मक, विवेचनात्मक ग्रंथ। ऐसे ग्रंथों में गिजुभाई के ग्रंथों का वर्णन ऊपर किया है, मोन्तेस्सोरी का किया है। अब लेते हैं अन्य ग्रंथ।

एक बात बहुत जरूरी है। उसे पहले समझ लें। सेवापूर्व प्रशिक्षण हो चाहे सेवाकालीन छोटा-मोटा प्रशिक्षण कार्यक्रम हो, वहाँ शिक्षा सम्बन्धी जो सामग्री पढ़ाई जाती है वह प्रायः पाठ्यपुस्तकीय होती है। उसका भी महत्व है। शैक्षिक विचारों की व्याख्या-परिभाषा समझने में वे सहायक हैं। कुछ सामग्री ऐसी भी होती हैं जो किसी महान् शिक्षाविद् की श्रेष्ठ कृति होती है। संभावना कम ही हैं किन्तु सहायक पुस्तक सूचियों में कभी-कभी कोई श्रेष्ठ कृति भी पड़ जाया करे। आशा है सूचियों में ही नहीं, शिक्षक-प्रशिक्षण सामग्री में भी कालजयी श्रेष्ठ शैक्षिक कृतियों का समावेश होने लगेगा कभी न कभी। जैसे जॉन डिवी, मोन्तेस्सोरी, गिजुभाई, ए.एस. नील, ईवान इलिच, पावलो फ्रेरे, जॉन होल्ट आदि। भारतीय चिंतकों में हिन्दी में कभी हमने शिक्षा पर कालूलाल श्रीमाली, हुमायूँ कबीर, काशिनाथ त्रिवेदी को पढ़ा था और अंग्रेजी में के.जी. सैयदीन, टैगोर, जे. कृष्णमूर्ति आदि पढ़े थे और आधुनिक भारतीय चिंतकों में प्रो. डी.एस. कोठारी, प्रो. यशपाल, प्रो. जलालुद्दीन, प्रो. कृष्णकुमार, प्रो. वी.वी. जॉन, प्रो. जे.पी. नायक, दयालचंद्र सोनी आदि को हमने पढ़ा है। इनकी कोई न कोई कृति हमारे प्रशिक्षण में हमें उपलब्ध हों तो कितना अच्छा? पाठ्यपुस्तकीय लेखन के बीच कोई तो मौलिक रचना पाठ्यसामग्री का अंग बने।

अब मैं आपको कुछ उन पुस्तकों के नाम बताता हूँ जो आज हमें उपलब्ध हैं और जिन्हें अपने विद्यालयों-महाविद्यालयों के पुस्तकालयों तथा सार्वजनिक पुस्तकालयों में अवश्य रखना चाहिए और जो शिक्षक स्वयं में शिक्षा व शिक्षण के प्रति गहरी अकादमिक रुचि भी पैदा कर सकें तो उन्हें अपने निजी पुस्तकालयों में भी जरूर रखना चाहिए–

प्रो. कृष्णकुमार की राज, समाज और शिक्षा, मेरा देश - तुम्हारा देश, शांति का सफर, स्कूल की हिंदी (सभी राजकमल प्रकाशन, दिल्ली), शैक्षिक ज्ञान और वर्चस्व, गुलामी की शिक्षा और राष्ट्रवाद तथा शिक्षा और ज्ञान (ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन, दिल्ली), बच्चे की भाषा और अध्यापक-एक निर्देशिका (संयुक्त राष्ट्र बाल कोष, नई दिल्ली)।

जॉन होल्ट की बच्चे असफल कैसे होते हैं, असफल स्कूल, बचपन से पलायन, शिक्षा की बजाय। संयुक्ता की सीखना– दिल से, ए.एस. नील की समरहिल, जूलिया वेबर गार्डन की मेरी ग्रामीण शाला की डायरी, माइकल डब्ल्यू. एपल और जेम्स ए. बीन की लोकतांत्रिक विद्यालय कक्षा से सीखे सबक तथा सुशील जोशी की 'जश्न-ए-तालीम' (सभी एकलव्य प्रकाशन, भोपाल)।

कमलानंद झा की पाठ्यपुस्तक की राजनीति (देखें शिक्षा-विमर्श जुलाई-अगस्त 2010), जॉर्ज डैनीसन की 'बच्चों का जीवन (देखें शिविरा जुलाई, 2000), जोनाथन कोजोल की क्रांति की बारहखड़ी, पाओलो फ्रेरे की उत्पीड़ितों का शिक्षाशास्त्र, पाओलो फ्रेरे की ही उम्मीदों का शिक्षाशास्त्र, रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रवीन्द्रनाथ का शिक्षा-दर्शन, जॉन डिवी की शिक्षा और लोकतंत्र, मरिया मांटेसरी की ग्रहणशील मन, सिल्विया एरटन वार्नर की अध्यापक, बारबियाना स्कूल के बच्चों की अध्यापक के नाम पत्र, और बीट्रीस एवॉलास की गरीब बच्चों की शिक्षा। (सभी ग्रंथशिल्पी, दिल्ली)।

नंदकिशोर आचार्य की इतिहास के सवाल (सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली), शिक्षा का सत्याग्रह (देखें शिक्षा-विमर्श, सितम्बर-अक्टूबर, 2010), आधुनिक विचार और शिक्षा, संस्कृति का व्याकरण, परम्परा और परिवर्तन (सभी वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर)।

प्रेमपाल शर्मा की पढ़ने का आनन्द (सामयिक बुक्स, दिल्ली), हरिनंदन मिश्र की शिक्षक के अनुभव-विकास की डगर पर (हरिनंदन मिश्र, 1-क-3 टीचर्स कॉलोनी, केशवपुरा, रंगवाड़ी रोड, कोटा)। (देखें शिक्षा-विमर्श, मई-जून 2011)।

संगीत में रुचि हो तो शंभुनाथ मिश्र की लिखी सुरों के साधक (प्रकाशन विभाग, भारत सरकार) में अमीर खुसरो से कुमार गंधर्व तक के संगीतज्ञों का जीवन व कृतित्व संक्षेप में दिया है। कुल 55 संगीतकारों का परिचय है। रामकिशन अडिग की दुनिया चित्रकला की (सर्जना प्रकाशन, बीकानेर)। रामनरेश सोनी की शिक्षण की वैज्ञानिकता (कलासन प्रकाशन, बीकानेर)। ये पुस्तकें हमें अच्छा शिक्षक बनने में मदद करती हैं। पत्रिकाओं में शिक्षा विमर्श (दिगंतर, जयपुर) का अध्यापक विशेषांक (नवम्बर 2011-जनवरी 2012), और गवेषणा (केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा) का अप्रैल-जून 2011 अंक जो शिक्षा पर विशेष अंक है, ये भी मनन योग्य हैं।

अब हम लेते हैं वे पुस्तकें जो हमारे व्यक्तित्व को निखारने में मदद करेंगी। राजस्थान से पद्मभूषण सम्मान प्राप्त अर्थशास्त्री प्रो. विजयशंकर व्यास की आज और आनेवाला कल (सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर) सामयिक आर्थिक-राजनैतिक और सामाजिक समस्याओं के गहन अध्ययन-विवेचन के लिए पठनीय है। ऐसे ही राजस्थान के प्रबुद्ध साहित्यकारों में

नंद चतुर्वेदी के जीवन-प्रसंगों से जुड़े संस्मरणों का संग्रह अतीत राग (राजकमल प्रकाशन, दिल्ली), अनिरुद्ध उमट के साहित्यिक लेखों का संग्रह अन्य का अभिज्ञान (सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर) तथा कवि-कहानीकार डॉ. आईदानसिंह भाटी की 'थार की गौरव गाथाएँ' (रॉयल पब्लिकेशन, जोधपुर) विशेष पठनीय व संग्रहणीय हैं।

शायद कभी आपने सुना होगा कि भारत के मूर्धन्य कवि-लेखक गजानन माधव मुक्तिबोध की एक पुस्तक 'भारत-इतिहास और संस्कृति' पर प्रतिबंध लग गया था। वर्षों बीत गए वह प्रतिबंधित ही रही। बहुचर्चित और विवादित भी रही। मध्यप्रदेश शासन द्वारा 'भद्रता और नैतिकता' के विरुद्ध ठहराई गई आपत्तियों के कारण मुकदमा चला। अब वह न्यायालय की आज्ञा से जो आपत्तियाँ निश्चित हुईं उन्हें दूर कर मूल रूप में प्रकाशित हुई है। ऐतिहासिक महत्व की यह पुस्तक जरूर पढ़नी चाहिए।

एक और पुस्तक ध्यान आती है 'मुझ पर भरोसा रखना' जो विश्वविख्यात चित्रकार विंसेंट वान गॉग द्वारा अपने भाई थियो के नाम लिखे पत्रों का संग्रह है (सीजनग्रे प्रकाशन, 6/3 एक्डलिया रोड, बालीगंज, कोलकाता 700019)। पहले कभी आपने जर्मनी के सुप्रसिद्ध कवि रिल्के की पुस्तक पत्र युवा कवि के नाम (नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली) पढ़ी होगी, जिसका हिंदी की ख्यातनामा लेखिका राजी सेठ ने अनुवाद किया था। वह छोटी सी पुस्तिका थी जेबी आकार 70 पृष्ठों की और यह विशाल थीसिस आकार का 400 पृष्ठों वाला अनेक चित्रों से सुसज्जित महाग्रंथ है मात्र 450 रुपये का। दोनों पुस्तकें पाठक को शक्ति देने वाली हैं, झिंझोड़ कर जगाने वाली हैं और जीवन-रस से सराबोर करने वाली हैं।

पुस्तकों का संस्कार जो शिक्षक ग्रहण कर सकें उनका शिक्षण कार्य और सम्पूर्ण जीवन निश्चित ही एक नया संस्कार ग्रहण करेगा। केवल कुछ का अध्ययन करने की भी ठान लें तो भी आपको कम लाभ नहीं होगा। जरूरत है इस पर बार-बार विचार करने की कि हम क्या पढ़ें और क्यों पढ़ें? और यों अपनी रुचियाँ बनाते जाएँ तथा जो जैसी रुचि बने उसके अनुसार हमारे शिक्षण कार्य को ऊँचा उठाने वाली तथा हमारे व्यक्तित्व में निखार लाने वाली पुस्तकें व पत्रिकाएँ ढूँढ़ते रहें, पाते रहें, पढ़ते रहें।

—मोची स्ट्रीट, फलोदी-342301 (जोधपुर, राज.)

बापू की सीख-12

विद्याभ्यास

❑ मो. क. गाँधी

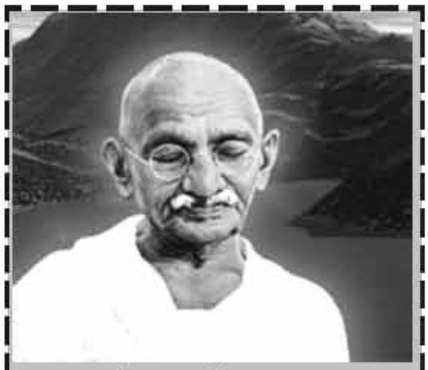

महात्मा गाँधी का व्यक्तित्व बहुआयामी था। राजनीति, अर्थनीति, समाजनीति एवं शिक्षा सभी क्षेत्रों में उनके विचार बहुत उपयोगी हैं। वस्तुतः वे एक मनोवैज्ञानिक शिक्षक थे। उनकी शिक्षा सम्बन्धी 21 रचनाएं 'बापू की सीख' नामक पुस्तक में प्रकाशित हुई हैं। शिविरा के सुधि पाठकों के लिए उन्हें शृंखलाबद्ध प्रकाशित किए जाने का निर्णय लिया गया है। आशा है पाठक इन विचारों को पठन, मनन के साथ आचरण में लाने का प्रयास करेंगे। —वरिष्ठ सम्पादक

आश्रम में कितने लोगों को वाचन-शिक्षण—पढ़ाई की तालीम—की कमी दिखाई देती है। मैं भी इस कमी को देख सकता हूँ; पर शायद वह आश्रम के साथ जुड़ी ही रहेगी। उसके कारण की चर्चा तत्काल न करूँगा।

यह कमी हमें इसलिए दिखाई देती है कि हम विद्याभ्यास का अर्थ और उस अर्थ वाला विद्याभ्यास प्राप्त करने की रीति नहीं जानते, या हमारा मन प्रचलित पद्धति ठीक है, यह मानकर काम कर रहा है। मेरी दृष्टि से प्रचलित विद्याभ्यास और उसे करने-कराने की रीति में बहुत दोष है।

सच्चा विद्याभ्यास वह है जिसके द्वारा हम आत्मा को, अपने-आपको, ईश्वर को, सत्य को पहचानें। इस पहचान के लिए किसी को साहित्य-ज्ञान की आवश्यकता हो सकती है, किसी को भौतिक शास्त्र की, किसी को कला की, पर विद्यामात्र का उद्देश्य आत्मदर्शन होना चाहिए। आश्रम में यह है। उसकी दृष्टि से हम अनेक उद्योग चला रहे हैं। ये सारे उद्योग मेरे अर्थ में शुद्ध विद्याभ्यास है। आत्म-दर्शन के उद्देश्य के बिना भी यही धंधे चल सकते हैं। इस रीति से चलें तो वे आजीविका के या दूसरे साधन हो सकते हैं, पर विद्याभ्यास न होंगे। विद्याभ्यास के पीछे समझ, कर्तव्य-परायणता, सेवा-भाव विद्यमान होता है। जहाँ समझ हो वहाँ बुद्धि-विकास होता ही है। छोटे-से-छोटा काम करते हुए शिवसंकल्प होना चाहिए। उसका कारण, उसका शास्त्र समझने का प्रयत्न होना चाहिए। शास्त्र हर काम का होता है, खाना पकाने का, सफाई का, बढ़ई के काम का, कताई का। जो हरएक उद्योग विद्यार्थी की दृष्टि से चलाता है, वह उसका शास्त्र जानता है या रचता है।

हरएक आश्रमवासी इतना समझ ले तो वह जानेगा कि आश्रम एक महान पाठशाला है, जिसमें शिक्षा के लिए कोई खास समय ही हो सो अलग बात है, बल्कि सारा समय शिक्षण-काल है। हर आदमी को आत्म-दर्शन—सत्य दर्शन—के भाव से आश्रम में बसता है, वह शिक्षक है और विद्यार्थी है। जिस चीज में वह निपुण है उसके विषय में वह शिक्षक है, जो उसको सीखना है, उसके विषय में विद्यार्थी है। जिस विषय का हमें अपने पड़ोसी की अपेक्षा अधिक ज्ञान हो वह ज्ञान पड़ोसी को बिना किसी संकोच के देते ही रहें और जिसमें पड़ोसी को अधिक ज्ञान हो उसमें उनसे बिना संकोच के लेते रहें। हम ऐसा किया करें तो हमें शिक्षकों का टोटा न पड़े और शिक्षण सहज और स्वाभाविक हो जाय। सबसे बड़ी शिक्षा चारित्र्य-शिक्षण है। ज्यों-ज्यों हम यम-नियमों के पालन में बढ़ते जाएँ त्यों-त्यों हमारी विद्या—सत्य-दर्शन की शक्ति—बढ़ती ही जाएगी।

तब अक्षरज्ञान का क्या हो? यह प्रश्न अब रहता ही नहीं। जो बात अन्य कार्यों के विषय में है वही अक्षरज्ञान के विषय में है। ऊपर के विवेचन से एक वहम् की अर्थात् शिक्षाशाला रूपी मकान और सिखाने वाले शिक्षक के भ्रम की जड़ कट जाती है। हमें अक्षर ज्ञान की जिज्ञासा हो तो हमें जानना चाहिए कि वह अपने ही यत्न से प्राप्त करना है।

'धर्म-नीति' से

स्वाध्याय : सकल सुखाय

❑ डा. दाऊदयाल गुप्ता

सीमित समय में असीमित ज्ञान की संप्राप्ति कदाचित शिक्षालयों के औपचारिक वातावरण में कतई संभव नहीं है। ज्ञान-पिपासुओं को अपनी तृषा बुझाने के लिए किसी अन्य युक्ति का सहारा लेना पड़ता है। उनके लिए सर्वथा प्रेय और श्रेय-पथ 'स्वाध्याय' ही है। इसीलिए तैत्तिरीय उपनिषद् (1/11) में अन्तेवासियों को यही सत्परामर्श दिया गया है– 'स्वाध्यायान्मा प्रमदः' अर्थात् स्वाध्याय से कभी न चूको। वस्तुतः स्वाध्याय समस्त प्रकार के तपों यथा राजसी, सात्विकी, तामसी से बढ़कर 'वाङ्मय तप' है जिससे समस्त क्लेशों का हरण तथा सकल सुखों का सहज वरण संभव है। श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 17 श्लोक 15 में यही निर्देश दिया गया है– *'अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।/स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तपउच्यते॥'*

उद्वेग-विरहित, सच्चे-हितकर व मधुर वचनों का नित्य-अभ्यास किया जाना 'स्वाध्याय', कहलाता है। इसे एक दृष्टान्त के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं– एक पक्षी-प्रेमी ने सुन्दर तोता पाला। उसे गृहस्वामी ने बोलना सिखाया। मधुर वचनों से युक्त 'सुस्वागतम्' बुलवाया। तोता किसी के आने पर 'सुस्वागतम्' बोलता तो बड़ा अच्छा लगता। सभी उसकी प्रशंसा करते। एक बार घर में जवान बेटे की मौत हो गई। तोता 'सुस्वागतम्' की रट लगाता रहा। आने वालों के कानों में उसका मधुर वचन चुभता रहा। तोता भी विवश था। विवेक शून्य था। क्या करता? बँधा-बँधाया, रटा-रटाया पाठ यही गुल खिलाता है न !

आज विद्यालयों में विद्यार्थियों की स्थिति लगभग ऐसी ही है। लगता है हम चाबी की मोटरों से बेहतर नहीं। मोटर उतनी ही चलती है, जितनी उसमें चाबी भरी हो। खिलौने से क्षणभर मन तुष्ट हो जाता है, सनातन संतुष्टि नहीं। स्वविवेक का नामोनिशान नहीं। एक अन्य घटना भी हमारी आँख खोलने का माध्यम बन सकती है। हुआ यह है कि कुछ साल पहले माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने सैकेण्डरी की पुस्तकों को नवीन पाठ्यक्रमानुसार बदल दिया। नई पुस्तकें बाजार में मिलने लगीं। विद्यार्थियों ने उत्साहपूर्वक उन्हें खरीद लिया। पर, कक्षा में अध्ययन-अध्यापन अब भी बगलें झाँक रहा था। हमने स्थिति को भाँपकर सम्बन्धित शिक्षक से प्रार्थना की कि पढ़ाई शुरू कराएँ। माननीय शिक्षक ने चौंका देने वाला जवाब दिया– सर, पुस्तकें तो आ गई हैं। पर, अभी कुंजी नहीं आई है। उसी का इन्तजार है। उत्तर सुनकर निर्वाक् रह गया। स्वाध्याय का कहीं अता-पता नहीं। नये ज्ञान के तलाशने के प्रति न उत्साह कहीं। स्वचिन्तन-मनन के लिए ललक नदारद। पहले से बना-बनाया, अन्य के विचारों से जन्माया अत्यन्त सीमित ज्ञान विकसित युग में हमें कहाँ पहुँचायेगा, यह विडम्बना ही है।

'स्वाध्याय' का निगूढार्थ है– स्वात्माध्ययन। स्वयं ही स्वयं का अध्ययन करने का अभ्यास करना होता है, इसमें। आत्म साक्षात्कार का यह प्रयास, सद्ग्रंथसेवन की दरकार रखता है। दूसरों का हित, स्वअध्ययन में अन्तर्निहित होता है। 'स्वाध्याय' सर्वथा एक ज्ञान यज्ञ है। द्रव्यमय यज्ञ में पदार्थ की प्रमुखता है, अतः वह करण सापेक्ष है। इसकी अपेक्षा ज्ञानयज्ञ में विवेक एवं विचारों की प्रधानता है, अतः यह करण निरपेक्ष है। आत्मज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान होने पर कुछ भी जानना शेष नहीं रहता। अस्तु, इस तप में निरत रहकर, ज्ञान की दृष्टि से कोई कंगाल कैसे हो सकता है।

बीस-तीस या इससे अधिक पुस्तकें पढ़कर हम शिक्षित होने का दावा नहीं कर सकते। न ही विद्यालयों में दिया जाने वाला ज्ञान यह अपेक्षा रखता है। वहाँ परिपूर्णता नहीं है। ज्ञान की अलख ज्योति जलाये रखने के लिए वहाँ तो एक चेतना है, चिनगारी है। यहाँ शिक्षा-प्राप्ति का उद्देश्य उस कौशल की व्याप्ति से है जो हमें स्वविवेक से अधिकाधिक अध्ययन करने में मशगूल रखती है। ताजे ज्ञान से नजदीकी रख पाना, स्वाध्याय से निरन्तर जुड़े रहना है। विद्यालयों में शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी को ऐसा सामर्थ्यवान बनाना है जिससे वह सद्ग्रंथों का चयन कर उनका सेवन तथा उनसे रसामृत का दोहन कर सके। अतः हमें विद्यारंभ को ही उसकी समाप्ति समझने की भूल न कर, स्वयं अपने स्तर पर अपनी गति से मनोनुकूल पठन के प्रति पहल करनी होगी ताकि स्वाध्याय के क्षेत्र में हम दृढ़तापूर्वक कदम रख सकें।

स्वयं को जानना, स्वाध्याय है। अपने को जानने का फलक अन्ततः विस्तृत है। इसमें अपना देश, अपनी संस्कृति, अपना साहित्य, अपना अतीत आदि सभी का समावेश हो जाता है। वस्तुतः विरासत की कीमत जाना पाना, ज्ञान ही तो है। 'ज्ञान बल है'– इस कहावत का अर्थ यह है कि हम अपनी हर विरासत और उपलब्धि के मूल्य को पहचानें तथा उसके प्रति पूर्ण सजग एवं सतर्क रहें। हम सांस्कृतिक धरोहर के उत्तराधिकारी तो भले ही रहें, किन्तु उसका मूल्य समझने की कोशिश करें। यदि हम अपनी वस्तु की कद्र न कर सके तो इसका लाभ वह व्यक्ति उठा लेगा जो उसका

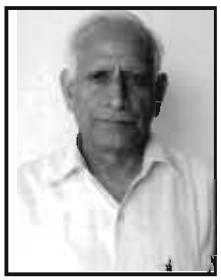

शिक्षा उपनिदेशक पद से सेवानिवृत्त डॉ. दाऊदयाल गुप्ता बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं। आप सेवारत शिक्षक प्रशिक्षणों के जादूगर हैं। आवासीय शिविरों में आपकी उपस्थिति सम्भागियों को बाँधे रखने के लिए पर्याप्त होती है। आपने अनेक पुस्तकें लिखी/सम्पादित की है। आप शिविरा के नियमित लेखक हैं।

मूल्य समझता है। महात्मा कबीर ने अत्यन्त सटीक लिखा है– *'लाल लाल सब कोई कहे, सबके पल्ले लाल।/गाँठ खोल परख्यौ नहीं, या विधि भयौ कँगाल॥*

भारत देश में स्वाध्याय के अभाव में ऐसा ही घटित हो रहा है। स्वाध्याय के अभाव में हमारा ज्ञान पहले विदेशों में पहुँच जाता है। फिर, उसे विदेशी विद्वान अपना ज्ञान बनाकर छाप लगा देते हैं। तदुपरान्त हम अपने ही अतीत के ज्ञान को विदेशी अनुसंधान मानकर अपना लेते हैं तथा गर्व का अनुभव करते हैं।

स्वाध्याय एक संस्कार है। सर्वजन हिताय, सदग्रंथ सेवन की ओर प्रवृत्त होना सुसंस्कारों से ही जनित होता है। मानव के अन्तःकरण में संनिहित दानवीवृत्ति को युक्तिपूर्वक संशोधित व परिमार्जित कर जो देवत्व का सुरभिमय एवं सुरम्य शतदल प्रस्फुटित करता है, उसे संस्कार की संज्ञा से ही ज्ञापित किया जाता है। ऐसे संस्कार की ही महती एवं सनातन प्रतिष्ठा होती है जिससे धरती धन्य हो उठती है। जीवन में स्वाध्याय एवं सत्साहित्य द्वारा सदैव सुसंस्कृत बनाए रखना, मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य है। यूँ भी वयोवृद्ध की तुलना में ज्ञान-वृद्ध कहीं अधिक श्रेयस्कर है– *न तेन स्थविरोभवति येनास्य पलितं शिरः।/वालोऽपि यः प्रजानाति तं देवाःस्थविरं विदुः॥* ***(महाभारत, वन पर्व, तीर्थयात्रा पर्व 133/11)***

जिस जगह ऐसे सुसंस्कारों से सुसंस्कृत मानव अवस्थित होते हैं शान्ति-सौभाग्यलक्ष्मी स्वयं विराजित रहती है।

एक बात और कि संसार में जितने तत्वज्ञानी, विद्वान महापुरुष हुए वे सब स्वाध्याय तथा सद्ग्रंथ सेवन के फलागम ही तो हैं। मानसकार संत तुलसीदास ने सहजतः इस तथ्य को स्वीकारा है– *'नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद्/रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।/स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा/भाषा निबन्ध मति मंजुलमातनोति॥'* **(रामचरितमानस)**

अर्थात् अनेक पुराण, वेद और शास्त्र-सम्मत तथा जो रामायण में वर्णित है और कुछ अन्यत्र भी उपलब्ध श्री रघुनाथ कथा को कविवर ने स्वाध्याय के माध्यम से आत्मसात किया तथा स्वयं को सुसंस्कृत बनाकर 'मानस' को स्वान्तः सुखाय हेतु रचना करते हुए मौलिक रूप से विस्तृत बनाया। यही स्वान्तः सुखाय परजन हिताय बना। अपने लिये किये गये स्वाध्याय का यही उज्ज्वल पक्ष है।

स्वाध्याय व्यक्ति के आत्मविकास से सम्बद्ध है। विपुल पुस्तकों का अध्ययन करना ही अभीष्ट नहीं है। बुद्धि का विकास भी हमारा लक्ष्य नहीं। स्वामी विवेकानन्द ने कहा– 'हम जन्मभर पुस्तकों का अध्ययन करते रहें और बड़े बौद्धिक हो जाएँ पर अंत में देखेंगे कि आध्यात्मिक दृष्टि से हम कुछ भी विकसित नहीं हुए। आवश्यकता है आत्मा के विकास की न केवल बुद्धि की।' कहना न होगा कि यही स्वाध्याय का आस्वाद है।

स्वाध्याय का अर्थविद्वता का प्रदर्शन नहीं है अपितु आत्मसुधार है। महात्मा कन्फ्यूशियस ने लिखा है–

'To learn without thinking is fruitless. To think without learning is also dangerous. Past scholars studied to improve themselves; To day's scholars study to impress others.'

निष्कर्षतः हम आत्मचिन्तन के साथ आत्मोत्थान के लिए, परिष्कृत जीवन जीने के उद्देश्य से ज्ञान-सागर में स्वाध्याय के संबल को साथ लेकर गोते लगाएँ तो हमें वे जीवन-मणियाँ प्राप्त होंगी जो समस्त जगत के लिए कल्याणकारी हैं। स्वाध्याय के लिए हमारे पास सुअवसर भी है तथा सुयोग के साथ अवकाश के क्षणों का सदुपयोग भी है। तब विलम्ब क्यों? किनारे पर बैठे रहकर सुफल प्राप्ति की प्रत्याशा व्यर्थ ही है– *'जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ।/हौं बौरी डूबन डरी रही किनारे बैठ॥'* **(कबीर)**

बस एक बार स्वाध्याय के लिए साहस जाग्रत हो तथा उसकी निरन्तरता बनी रहे तो सार्थकता हासिल होगी ही।

–'पुरुषोत्तमायन', दही वाली गली, ब्यानियान मौहल्ला, भरतपुर (राज.)-321001

स्वाध्याय की ताकत और व्यावसायिक निपुणता

❑ डॉ. (श्रीमती) प्रेम जैन

स्वाध्याय का अर्थ है– आर्षग्रंथों, शास्त्रों, श्रेष्ठपुस्तकों तथा इतर सत्साहित्य का सतत अध्ययन। वस्तुतः स्वाध्याय शब्द इतना विशद और व्यापक है कि इसकी अर्थ-ध्वनियाँ दूर-दूर तक जाती हैं। अध्ययनोपरान्त का चिन्तन, मनन तथा आत्मसात एवं आत्मसाक्षात्कार की सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रक्रियाएँ भी इसके अन्तर्गत समाविष्ट हैं। संस्कृत साहित्य में एक श्लोक है– 'काव्यशास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्/व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा।' मनुष्य की बुद्धिमत्ता इसी बात में निहित है कि वह अपनी चित्तवृत्तियों को श्रेष्ठतर की ओर उन्मुक्त करे। स्वाध्याय इसी ओर बढ़ता कदम है। निरन्तर अध्ययन के अध्यवसाय से अन्तस में 'निर्जरा' का अधिवास होता है। सद्विचारों का आगमन तथा कुविचारों का निष्क्रमण– यही परिवर्तन होता है, स्वाध्याय से। वेद, उपनिषद् रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत तथा गीता जैसे ग्रंथों का सान्निध्य मनुष्य को ऊँची भावभूमि पर लाकर खड़ा कर देता है, जहाँ 'गर्हित' विचारों का टिकना असंभव है। एक बार स्वाध्याय की ओर कदम बढ़ाने के बाद व्यक्ति पीछे मुड़कर नहीं देखता– ज्ञान और विवेक का दीपक उसके अन्तर्बाह्य को उद्दीप्त कर देता है। इसके तार एक डोर अध्यात्म से जुड़े हैं तो दूसरी ओर नैतिकता से।

व्यक्ति का व्यक्तित्व गुरु-गंभीर हो उठता है, विचारों में उदात्तता का समावेश होता है, आत्मविश्वास संपुष्ट होता है और संशयात्मकता का विनाश होता है। बुद्ध और महावीर के विचारों से भला कौन प्रभावित न होगा? आख्यान, उपाख्यान से संश्लिष्ट भारतीय मनीषा का कोई भी तूणीर खाली नहीं जाता।

स्वाध्याय के चलते जब व्यक्ति का अन्तर रिद्धित्व को प्राप्त हो जाता है, तो बाह्य जगत में भी प्रकाश का ज्वार फैल जाता है और जीवन में सफलताओं के द्वार खुल जाते हैं। व्यक्ति जहाँ भी है, जिस किसी व्यवसाय में उसकी प्रभान्विति बढ़ जाती है और साथ ही प्रभावान्विति भी।

मान लीजिए कोई शिक्षक है, सौभाग्य से वह स्वाध्यायी है, तो उसे कभी पराभव का मुख नहीं देखना पड़ेगा। अन्तर एवं बाह्य का सम्यक् समन्वय उसे व्याख्यान को विशिष्ट बना देगा। शब्दकोश का बाहुल्य, आख्यान, उपाख्यानों, घटनाओं, प्रसंगों, उक्तियों एवं उद्भाव-सम सन्दर्भों का उद्धरण देकर जो अध्यापन/व्याख्यान होगा, उसमें रोचकता, सदाशयता, उदात्तता, नीतिमत्ता और प्रेरणात्मकता का ऐसा संगुफन होगा कि शिक्षार्थी-विद्यार्थी जिज्ञासा भाव से यह सब ग्रहण करेगा।

सम्प्रेषणीयता-अध्यापकीय व्यवसाय का प्राण है। इसकी गुणवत्ता अध्ययन की प्रवृत्ति पर निर्भर है। जो अध्यापक रोजगार प्राप्ति के पश्चात् अध्ययनवृत्ति को विदा दे देते हैं वे कभी अपने क्षेत्र में कोई तीर नहीं मार सकते और न ही इन्हें सच्ची संतुष्टि प्राप्त होती है। सफलता और सार्थकता का स्वाद वे ही चखते हैं जो 'अध्ययन प्रकोष्ठ' के द्वार खुले रखते हैं और नित्य नवीन विचारों का आहरण करते हैं।

स्वाध्याय की प्रवृत्ति और आवृत्ति उसे वाक्पटुता प्रदान करती है। नये कथ्यों की अव्याप्ति के साथ नवीन कथन-भंगिमाओं, विविध शैलियों और विविध पद्धतियों का जन्म 'स्वाध्याय' की सार्थक गति के सन्दर्भ में रेखांकनीय है। तुलसी जैसे महाकवि और लोक-नायक की अपरिमिति सफलता के नेपथ्य में स्वाध्याय की ताकत है, जिसे उन्होंने रामचरितमानस की आरम्भिक पंक्ति में ही उद्धृत कर दिया है। तो आइये, अष्ट सिद्धि, नवनिधि के दाता 'स्वाध्याय' की अभ्यर्थना और आत्मसात से स्वयं को कृतार्थ करें। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' यह तो स्वयं ही सिद्ध हो जायेगा।

–1 ध 10, दादावाड़ी, कोटा (राज.)

पढ़ै सो पंडित होइ

❑ भगवती प्रसाद गौतम

बच्चों की जानी-मानी पत्रिका 'बाल भारती' की शुरुआत 1948 में हुई थी। कहते हैं इसी के चलते प्रकाशन-अनुभाग द्वारा तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के समक्ष एक पत्रावली प्रस्तुत की गई, जिसमें लिखा था- 'बाल भारती' एक नियमित प्रकाशन है, किन्तु इसके पाठकों की संख्या में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो रही है। अतः इसे निरस्त कर इस पर व्यय होने वाली राशि अन्य मद को आवंटित कर दी जाए तो उचित रहेगा।' पं. नेहरू सहसा ठिठके, प्रभारी अधिकारी की ओर देखा और तुरन्त अपनी राय अंकित की– '... विषय बच्चों के बौद्धिक विकास और व्यक्तित्व निर्माण से जुड़ा है। अतः किसी अन्य व्यय में भले ही कटौती कर दी जाए, मगर यह प्रकाशन कभी बंद न हो, ऐसा सुनिश्चित करें। ...' और सच यही है कि 'बाल भारती' का सफर आज भी जारी है।

शिक्षा मूलतः शिक्षण-अधिगम से जुड़ी प्रक्रिया है। यहाँ सीखना बच्चे की नैसर्गिक प्रवृत्ति भी है और अधिकार भी। आजीवन अर्जित अनुभवों का विस्तार भी है शिक्षा। इसमें पाठ्यक्रम से सम्बद्ध पुस्तकों का तो महत्व है ही, किन्तु उतना ही या उससे भी ज्यादा महत्व है अन्यान्य सद्साहित्य के सतत आस्वादन का। राष्ट्रपिता बापू के जीवन में उस पुस्तक की भूमिका को अनदेखा नहीं किया जा सकता, जिसने उनके नजरिए को बरबस ही एक नई दिशा दी। वह पुस्तक थी लेखक-विचारक जॉन रस्किन की 'अनटु दिस लास्ट' (Unto This Last)। दक्षिण अफ्रीका में एक बार जोहांसबर्ग से नेटाल तक के चौबीस घंटे के रेल-सफर में उन्होंने वह पुस्तक पढ़ी जो पत्रकार-संपादक मि. पोलाक से उन्हें अनायास ही प्राप्त हो गई थी। इससे गुजरने के बाद ही उन्हें स्वयं में एक 'चमत्कारी प्रभाव' का अनुभव हुआ। लिखा भी है– ''मेरा पुस्तकीय ज्ञान बहुत ही कम है... जो थोड़ी पुस्तकें पढ़ पाया हूँ... इन पुस्तकों में से जिसने मेरे जीवन में तत्काल महत्व के रचनात्मक परिवर्तन कराए, वह 'अनटु दिस लास्ट' ही कही जा सकती है।''

उल्लेखनीय है कि बापू की आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' को पढ़ने के बाद भी कई लोगों के जीवन में जबरदस्त बदलाव आया। उनमें एक हैं, किसी समय अपराध से जुड़े और अब सम्मान्य व्यक्तित्व के धनी लक्ष्मण गोले, जो कहते हैं ... ''असल जीवन में गाँधी जी के मूल्यों को अपनाने के लिए बहुत हिम्मत और त्याग की जरूरत पड़ती है। लेकिन जो ऐसा करता है उसे बहुत खुशी होती है, अद्भुत खुशी !'' *(रवि. जनसत्ता, 14.12.2008)*

वैसे आज के 'विप्रौ' (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी) के युग में हर व्यक्ति शिक्षा को बहुत ऊपर की पादान से जोड़कर देखता है। हर किशोर-युवा या तो इंजीनियर, डॉक्टर, सीईओ बनना चाहता है या फिर आई.ए.एस. जैसे उच्च पदों पर आसीन होने को आतुर रहता है। ... और इसी परिप्रेक्ष्य में वह अपने व्यक्तित्व को विकसित होने के सपने देखता है। मगर सच यह है कि व्यक्तित्व या चरित्र स्वयं में कोई एक इकाई नहीं, बल्कि वह तो शारीरिक, मानसिक, भाषिक, भावात्मक और सृजनात्मक पक्षों-पहलुओं का समन्वित स्वरूप है जो एक व्यक्ति को दूसरों से भिन्न, विशिष्ट या महत्वपूर्ण बनाता है।

हकीकत यह भी है कि आज का छात्र वैसे ही अभिभावकों की आशाओं-आकांक्षाओं और भारी भरकम बस्ते के बोझ-तले जी रहा है। वह समय और था जब सब कुछ जग जाहिर था, समयबद्ध था। परीक्षा समाप्त हुई कि बालक-युवा उन्मुक्त पंछी-सी उड़ान भरता था और दादी-नानी के ओसारों-दालानों में जा खेलता-पसरता था। मई-जून में भाँय-भाँय करती लू-झक्कर में भी चौपड़-पासा, ताश-तुरूप, रकचूंचा, चोर-सिपाही, धिंसोड़ी, कुलाम-लकड़ी या और भी खेल-कूदों में कैसे बीत जाती थीं अनमोल छुट्टियाँ। गाँवों-कस्बों में अब भी वैसा ही चलता हो शायद। मगर शहरों की छुट्टियाँ बदल गई हैं। वहाँ बच्चे जुड़ जाते हैं टीवी, कंप्यूटर्स से, वीडियो गेम्स या फिर हॉबी क्लासों से, जो अब देखा-देखी प्रतिस्पर्द्धा और माता-पिता के दबाव के कारण, साथ ही संचालकों की प्रचार-प्रसार व स्वार्थ सिद्धि की प्रवृत्ति के कारण भी, एक अपरिहार्य बुराई (Compulsory evil) बन गई है।

पहले दुनिया छोटी-सी थी। सारा ज्ञान मानव-मस्तिष्क या किताबों-ग्रंथों में भरा था। जब

श्री भगवती प्रसाद गौतम शिक्षा, साहित्य और चित्रकला के क्षेत्र में विशिष्ट पहचान रखते हैं। लम्बी सेवा साधना के दौरान आपने विविध विधाओं में प्रचुर लेखन कार्य कर साहित्यागार में वृद्धि की है। आप आकाशवाणी के नियमित वार्ताकार हैं। शैक्षिक क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के कारण राज्यस्तरीय शिक्षक पुरस्कार के साथ ही आपको अनेक प्रतिष्ठित सम्मान/पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। आपकी आठ पुस्तकें अब तक प्रकाशित हुई हैं।

से टीवी का अवतार हुआ, दुनिया बड़ी से बड़ी होती चली गई। यही नहीं 'कम्प्यूटर, डेस्कटॉप, लेपटॉप, टेबलेट के बाद अब जमाना आ गया है अल्ट्राबुक्स का... यानी एक और इंटरनेट क्रांति का। परिणाम यह कि किताबें सिमटने लगी हैं और इन्हीं के साथ शिक्षा का समग्र अभिप्राय ही बदल गया है। जो विद्यालय-महाविद्यालय और विश्वविद्यालय चरित्र-सृजन के केन्द्र माने जाते थे, जहाँ ज्ञानियों-महाज्ञानियों के मार्गदर्शन में स्तरीय चिंतन-मनन होता था, वहाँ अब व्यावसायिक प्रशिक्षणों का ही राग आलापा जाने लगा है।

अभी-अभी एक लेख पढ़ने को मिला– शंकर शरण का 'शिक्षा में विचार का विस्थापन' जिसका संदेश है कि किसी देश का अस्तित्व बनाए रखने के लिए वहाँ के लोगों में तीन मानसिक क्षमताएँ होना आवश्यक है। पहली विवेकपूर्ण विचार करने की क्षमता, दूसरी तुलना एवं विभेद करने की क्षमता और तीसरी प्रभावी अभिव्यक्ति की क्षमता। अध्यात्म-साधक श्री अरविन्द भी मानते हैं कि किसी भी महान देश का बौद्धिक पतन इन्हीं तीन गुणों के क्षरण से आरम्भ होता है। ऐसा क्षरण तभी होता है जब लोगों का ध्यान केवल सूचनाएँ संग्रहीत करने और तकनीक एवं व्यावसायिक कौशल प्राप्त करने पर चला जाता है।

वे दिन लगभग लद ही गए लगते हैं जब अवकाश काल में रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक साहित्य विशेष जुड़ाव व जिज्ञासा के साथ पढ़ा जाता था; बच्चों को भी स्वाध्याय की दुनिया से असीम आनंद बटोरने का अवसर उपलब्ध करवाया जाता था। आज भी याद आते हैं वे दिन जब हाईस्कूल (1960) की परीक्षा समाप्त होते ही मेरे पाँवों ने अपने गाँव मोखमपुरा (बाराँ) की राह पकड़ ली थी और उसी दौर में कुछ तो पिताजी-चाचाजी की प्रेरणा से और कुछ अपनी ही अंतरात्मा की आवाज पर मैंने पं. राधेश्याम कथावाचक द्वारा रचित 'रामायण' का आद्योपांत पारायण कर डाला था और जो आनंदानुभूति 'बाल्मीकि रामायण' से तो क्या, 'तुलसीकृत मानस' से भी बरसों तक अर्जित नहीं हो सकती थी, वह मुझे सहज-सरल खड़ी बोली की उस महाकाव्य कृति से बरबस ही प्राप्त हो गई थी।

स्वाध्याय जीवन में एक विशेष अंतर्दृष्टि के विकास का सरलतम मार्ग है। उसका सीधा-सीधा अर्थ माना गया है वेदों अथवा अन्य धर्मग्रंथों का नियमपूर्वक समुचित अध्ययन। पाश्चात्य विद्वान इतालो कल्वीनो ने भी कहा था– 'क्लासिक किताबें पढ़ना, न पढ़ने से तो बेहतर ही रहा है।' इस कथन में एक सटीक संदेश विद्यमान है जिसे सहज ही अनुभव किया जा सकता है। वैदिक अवधारणानुसार तो जीवन में सच बोलने, धर्म का पालन करने और स्वाध्याय में प्रमाद (भ्रम) न करने का आग्रह भी व्याप्त है। किन्तु अब किसी अन्य विषय के अंतर्प्रेरित अध्ययन, स्वैच्छिक अनुशीलन, पाठ-पठन और चिंतन-मनन जैसी क्रिया-अनुक्रिया को भी स्वाध्याय से जोड़कर देखा जाता है। इसमें आत्मावलोकन अथवा तटस्थ भाव से स्वयं के भीतर झाँकने-खोजने और यथोचित आकलन करने का ध्येय भी निहित है।

एक युग था ऋषियों-मुनियों का युग, आश्रमों-गुरुकुलों का युग, जब कोई लिखित ग्रंथ भी उपलब्ध नहीं होते थे। सब कुछ आचरण और व्यवहार में प्रतिष्ठित एवं परिलक्षित था। गुरु बोलते थे और शिष्य सुनते थे, गुनते थे, स्मरण करते थे तथा जीवन में ढालते थे। ऐसे में हस्तलिखित ग्रंथों का आना एक लम्बी व दुस्साध्य प्रक्रिया थी। उनकी प्रतिकृतियाँ भी सहज सुलभ नहीं होती थीं। मुद्रण के आगमन के साथ ग्रंथों-पुस्तकों की महत्ता पर ध्यान गया। यों तकनीक और प्रौद्योगिकी ने विगत सदी के अंतिम दशकों में पुस्तक-संस्कृति के समक्ष चुनौतियाँ भी खड़ी कीं, किन्तु मुद्रित सामग्री का वजूद बना रहा।

अभी-अभी प्रगति मैदान में एन.बी.टी.. (नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया) के तत्वावधान में बीसवाँ नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला (25 फरवरी - 04 मार्च 2012) सम्पन्न हुआ। सूचना तंत्र की मजबूती के चलते क्रांतिकारी बदलावों के बावजूद पुस्तक का आकर्षण व आनंद खत्म नहीं हुआ। वह आर्थिक प्रगति और सांस्कृतिक मूल्यों के बीच सतत संतुलन बनाए रखने में अद्भुत एवं निर्णायक भूमिका निभाती रही और अब भी निभा रही है। वस्तुतः किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व या चरित्र की पहचान और प्रतिष्ठापना के दो ही सशक्त माध्यम हैं– एक उसकी वैयक्तिक विचारधारा और दूसरा उसका समय व्यतीत करने का अंदाज या तरीका। इस दृष्टि से स्वाध्याय उसके व्यक्तित्व का प्रमुख परिचायक सद्गुण भी हो ही सकता है।

'साहित्य समाज का दर्पण' और 'ज्ञान राशि का संचित कोश' है तो स्वाध्याय ऐसा प्रकाश-स्तम्भ है जिसे जितना जीवन में धारण किया जाए, उतना ही आनंदप्रद वरदान सिद्ध हो सकता है। कारण यह कि ग्रंथों के रचयिता और सामान्य कृतियों के प्रणेता कवि-लेखक ही सर्जक नहीं होते, सर्जक पाठक भी होते हैं क्योंकि वे पुस्तक की भाव भूमि एवं कथ्य को आत्मसात् करते हैं और इसमें योगदान होता है उनकी अनुभूति क्षमता तथा अर्थ-अन्वेषण के कौशल व सामर्थ्य का।

कुछ पाठकों के जीवन में पुस्तक-प्रेम एक व्यसन की तरह व्याप्त रहता है। वे खोज-खोज कर पुस्तकें पढ़ते हैं और पढ़ने को प्रेरित भी करते हैं। ऐसे लोग दिल्ली-मुम्बई के रविवारी या सांध्यकालीन बाजारों में पूरी दीवानगी के साथ उमड़ते हैं। सहसा स्मरण हो जाता है कि 1965-67 के दौर में जब हम दयानंद महाविद्यालय अजमेर से एम.ए. (चित्रकला) कर रहे थे, मदार गेट के समीप कबाड़ी बाजार में फटी-पुरानी पुस्तकें व पत्रिकाएँ उलटते-पलटते रहते थे और खरीदते भी थे। उनमें से कुछ कृतियाँ और कतरनें आज भी मेरे संग्रह में उपलब्ध हैं।

पुस्तक-पठन के संदर्भ में खास समस्या बाल पाठकों के स्तर और अभिरुचि को लेकर है। उनकी उद्देश्यपरक पाठ्यसामग्री, दिनचर्या और आज की जीवनशैली उन्हें श्रेष्ठ साहित्य से दूर धकेलती रही है। थोड़ा समय मिल भी जाता है तो वे बुद्धू बक्से (टीवी) से चिपक जाते हैं। वहाँ जो कुछ भी होता है, सब आँखों के सम्मुख होता है। कहीं कुछ सोचने या स्मरण-प्रत्यास्मरण करने का मौका ही नहीं मिलता। जबकि पुस्तक पढ़ते हुए वे शब्द-दर-शब्द गुजरते हैं तो साथ-साथ सोचते हैं, मन-मस्तिष्क में बिम्ब उभरते हैं। 'बगीचा' शब्द पढ़ते ही उनकी कल्पना में बगीचा उपस्थित हो जाता है। इसी प्रकार घर, परिवार, बाजार, संगी-साथी, जीव-जंतु ... सब शब्दों के जरिए ही अंतस् तल पर प्रकट हो उठते हैं। बच्चे उन्हीं के साथ कल्पना लोक में विचरने लगते हैं। यही है पढ़ने का असली मजा।

यही है स्वाध्याय का वास्तविक आनंद। यह आनंद ही है उन जैसे पाठकों की सृजनशीलता का पूर्वाभास...।

गुरुदेव टैगोर की एक चर्चित पुस्तक है 'शिक्षा'। उसमें आग्रह किया गया है कि बच्चों में इस अंधविश्वास का बीजारोपण किया जाना उचित नहीं है कि पुस्तकें ही शिक्षा या आनंद का श्रेष्ठ माध्यम हैं। वे बच्चों को सहज, सरल व स्वाभाविक जीवन जीने के लिए प्रेरित करते थे। प्रकृति के समीप पहुँचकर उससे संवाद करने और उसके सौंदर्य का पान करने के लिए प्रोत्साहित भी करते थे। उन्होंने लिखा भी है– 'यह बात उन्हें पग-पग पर जतलाने की आवश्यकता है कि पुस्तकों में जो भी विद्या या ज्ञान का एकत्र कोष विद्यमान है वह प्रकृति के अक्षुण्ण कोष में से ही लिया गया है।' नॉबेल विजेता महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टीन भी कहा करते थे– 'प्रकृति की गहराई में देखें और आप हर चीज को बेहतर समझ-समझा पाएँगे कि वहाँ हर सवाल का कैसा सटीक जवाब है।'

उल्लेखनीय है कि स्वाध्याय शिक्षकों व शिक्षार्थियों दोनों के लिए उपादेय है। कहने को शिक्षक अपने छात्रों के लिए 'रोल मॉडल' होता है किन्तु आज कितने शिक्षक या शिक्षा अधिकारी हैं जो स्वाध्याय की मूल अवधारणा को आत्मसात् कर पाते हैं? कितने लोग हैं जो स्वाध्याय के बहाने छुट्टियों का भरपूर उपयोग कर लेते हैं? अपवाद स्वरूप कुछैक नामों को छोड़ भी दें तो ऐसे कितने महानुभाव होंगे जो कभी 'नई तालीम' या 'टुवाड्र्स न्यू एजूकेशन' (एम.के. गाँधी), 'दिवा स्वप्न' (गिजू भाई), 'बच्चे असफल कैसे होते हैं, (जॉन हाल्ट), 'माँ-बाप सुनें' (महात्मा भगवान दीन) या अन्यान्य छोटी-बड़ी किताबों से गुजरे होंगे? बहुप्रचलित सूक्ति है– ''One who dares to teach, should never cease to learn.'' एक अनुभूत कथन है यह। जीवन मूल्यों की पक्षधरता को लेकर अपनी 'आत्मकथा' में बापू ने भी लिखा है– ''I have always felt that the true text book for the pupil is his teacher.''

शिक्षकों के लिए ही नहीं, अभिभावकों के लिए भी यह सर्वथा आवश्यक है कि वे अपने अनुभवों को निरन्तर विस्तार दें और यह तभी संभव हो सकता है जब वे स्वयं में एक ललक पैदा करें। यहाँ फिर से आइंस्टीन के कुछ खास शब्दों पर गौर करना समीचीन होगा। वे कहते हैं– 'मैं कोई अति प्रभावशाली व्यक्ति नहीं हूँ, लेकिन निश्चित ही अधिक जिज्ञासु जरूर हूँ और किसी भी समस्या को सुलझाने के लिए अधिक देर तक लगा रहता हूँ।' यों बच्चे तो नैसर्गिक रूप से ही बेहद जिज्ञासु होते हैं और बड़ों के सामने भी जाने-अनजाने ही अप्रत्याशित अनूठे सवाल उठाते रहते हैं। मगर उनके सवालों के जवाब उन्हें तभी तो मिल पाएँगे जब हमारे पिटारे में उनके संतोषप्रद समाधान उपलब्ध होंगे।

राजस्थान के 4173 ग्राम पंचायत मुख्यालयों पर महात्मा गाँधी सार्वजनिक पुस्तकालयों एवं वाचनालयों की स्थापना (जुलाई 2003) के उपरांत ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्वाध्याय की ज्योति जगाई गई। (विश्व कृषि संचार, अगस्त 2003) यहाँ भी संवाद-परिसंवाद के साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं जैसी मुद्रित सामग्री पर जोर दिया गया। उद्देश्य यही था कि खेती-बाड़ी, घरेलू कार्यों, लोक कल्याण, साक्षरता सम्बन्धी गतिविधियों में सभी की सक्रिय एवं सार्थक भागीदारी हो। स्वाध्याय की ताकत भी इसी में निहित है।

तीन दशक पूर्व तक बच्चों के लिए स्तरीय बाल साहित्य सहज ही उपलब्ध होता था। समय के साथ कॉमिक्स का दौर आया और 'अमर चित्र कथा' जैसी विभिन्न कथा मालाएँ प्रकाशित हुईं। मगर इन्हीं के समानांतर ऐसी पत्रिकाएँ और बालकृतियाँ भी चल निकलीं जिनमें जीवन मूल्यों का नहीं, वरन् अपराध हिंसा, अश्लीलता, जादुई कारनामों और अतियथार्थवादी सामग्री का बोलबाला रहा। उस पर भी इक्कीसवीं सदी तक आते-आते तकनीक और प्रौद्योगिकी से लैस बाजारवाद हावी होने लगा। प्रचार-प्रसार के तरीके बदले। 'बुक फ़ेअर' के बजाए 'लिट्रेचर फेस्टिवल' के नाम पर 'ग्लेमर' का प्रवेश होने लगा। 'पंचतंत्र' व 'हितोपदेश' जैसी अनेक मूल्यवान कृतियाँ इतिहास की शोभा बनकर हाशिए पर चली गईं और अंधविश्वासों, जादुई करिश्मों, अति रोमांचक कल्पनाओं तथा वर्ग-भेद को बढ़ावा देने वाले भारी-भरकम तथाकथित बाल-उपन्यास (?) 'हैरी पॉटर' के सात खंडों ने विश्व बाल साहित्य के बाजार में अब तक के समस्त कीर्तिमान ध्वस्त कर दिए। सुधी पाठकों को ध्यान होगा कि इंगलैंड की लेखिका जे.के. रोलिंग की इस कथा-माला की बत्तीस करोड़ से भी अधिक प्रतियाँ इस अवधि (1997-2007) में बिक गईं। उस पर फिल्में भी बनीं और लेखिका के साथ-साथ निर्माता कंपनी (वार्नर ब्रदर्स एंटरटेनमेंट) तथा अभिनेता (डेनिएल रेडक्लिफ) पर भी जबरदस्त (अरबों में) धन-वर्षा की झड़ी लग गई।

इसका आशय यह भी नहीं कि आज का सम्पूर्ण सृजन ही दूषित हो सकता है, किन्तु जैसा कि डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते थे– सामान्य को अच्छा अथवा अच्छे को बहुत अच्छा मान लेना भी न्याय संगत नहीं हो सकता। यह प्रवृत्ति सृजन एवं स्वाध्याय दोनों के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। दरअसल सुखद एवं स्वाध्याय योग्य साहित्य वही है जो पाठकों के मानसिक, भाषिक व सृजनात्मक पक्ष का परिष्कार भी करे और अंतर्जगत से जुड़े भावात्मक पक्ष का परिमार्जन भी। पठन-पाठन का ढोंग रचने वालों को लक्ष्य करते हुए कबीर ने आगाह भी किया था–

'पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोइ।
ढाई आखर प्रेम का पढ़ै सो पंडित होइ॥'

सच्चा स्वाध्याय मन से मन को जोड़ता है और समाज को संस्कारित करता है। शंकरशरण के ही शब्दों में– यह ऐसा सत्संग है जिससे व्यक्ति में कल्पना शक्ति, अभिव्यक्ति के लिए सही शब्दों की समझ और भाषा-ज्ञान के प्रति सहज रुचि बढ़ती जाती है। यह ऐसा सद्गुण है जो सांस्कृतिक सौहार्द्र का अद्भुत संचार करता है। सीधे-सीधे कहें तो स्वाध्याय दिल--दिमाग के पट खोलता है, ज्ञान के भंडार भरता है, आत्मानुरंजन के अवसर निर्मित करता है, भटकी हुई पीढ़ी को सुस्पष्ट मार्गदर्शन देता है, सांसारिक विसंगतियों-विकृतियों पर प्रहार करता है, कुंठाएँ हरता है और अंतस् के मैल को मिटाकर व्यक्ति का नजरिया बदल देता है। निःसंदेह यह स्वाध्याय ही ऐसा आत्मबल गढ़ता है जो सहज स्नेह व सम्मान के दीप प्रज्वलित कर निष्ठा-सम्पन्न पाठकों के जीवन को रसभीने सौरभ से संवार देता है।

–1-त-8, अंजलि दादावाड़ी, कोटा (राज.)-324009

स्वाध्याय और व्यवहारगत परिवर्तन

❑ विद्या पालीवाल

स्वाध्याय दो शब्द– स्व+अध्ययन से मिलकर बना है। स्वाध्याय से तात्पर्य– स्वयं की व्यक्तिगत अध्ययनशीलता जो स्व-निर्देश पर आधारित प्रक्रिया है। स्वाध्याय के माध्यम से व्यावसायिकता में तो निपुणता का विकास होता ही है किन्तु इसकी सुदृढ़ प्रभावशीलता के कारण व्यक्ति का व्यवहारगत परिवर्तन भी होता रहता है। यह परिवर्तन चाहे मानसिक हो या चारित्रिक लेकिन जब स्वाध्याय की ताकत से व्यक्ति की आत्मिक शक्ति जागृत होती है तो उसका बाह्य प्रभाव व्यवहारगत परिवर्तन के रूप में हो सकता है।

जॉन डब्ल्यू गार्डनर ने लिखा है– किसी वस्तु पर दृष्टि डाल लेना एक बात है, जिस पर दृष्टि डालो उसको भलीभाँति देखो, यह दूसरी बात है, जिसको देखो उसे भली प्रकार समझो– एक तीसरी बात है; जिसको समझो, उसे समझकर उससे सीखो– एक सर्वथा अन्य बात है और वास्तविक महत्वपूर्ण बात यह है कि जिस बात को समझो उसके अनुसार आचरण करो, क्या आप इससे सहमत हैं? यदि हाँ तो क्रमशः स्वाध्याय की ताकत का व्यावसायिकता की निपुणता में विलास, विकास के साथ-साथ मुख्य बात यह उभरी– व्यवहारगत-परिवर्तन के लिए प्रेरित करती है यह प्रक्रिया। हाँ, आपका सोच सकारात्मक एवं रचनात्मक दृष्टिकोण से सक्रियता लिए हुए हो।

स्वाध्याय की गहनता बाह्य जीवन में तभी आ सकेगी जब भीतरी चिन्तन स्व-निर्देशित स्वतंत्र रूप से मौलिक चिन्तन द्वारा प्रेरित होकर किसी मौलिक कृति का प्रणयन करे। यही बात हमारे आर्य ऋषियों ने ऋषि-ऋण से उऋण होने के रूप में कही थी। मौलिक चिन्तन साध्य है और पुस्तक-परायण साधन है ज्ञानार्जन व स्वाध्याय की दृष्टि से दोनों महत्वपूर्ण है। मौलिक चिन्तन के प्रति मोह संवरण करना ही होता है चूँकि स्वानुभूति की सरिता के मध्य कोई द्वीप या टापू नहीं है जो बौद्धिकता को प्रश्रय प्रदान करता है।

स्वाध्याय आत्मनिरीक्षण, आत्मालोचन या आत्मावलोकन करने का सुअवसर प्रदान कर शिक्षक या व्यक्ति को चिन्तकशील, मननशील एवं प्रभावशील प्रवृत्ति को सक्रिय रूप बाह्यजीवन में व्यवहारगत-परिवर्तन के रूप में देने को सतत् प्रयत्नशील रहता है। स्वाध्यायी व्यक्ति या शिक्षक के बाह्य व्यवहारगत परिवर्तन भी व्यक्ति से व्यक्ति भिन्न होंगे। जैसे एक बालक को सड़क पर एक कीमती पेन मिला उसे अपने पिताजी को दिखाते हुए बोला– सैकड़ों लोग यहाँ से गुजरे, किन्तु किसी की नजर नहीं पड़ी, लोग आँखें बन्द करके क्यों चलते हैं? तो पिताजी ने उत्तर दिया– 'बेटे-हर बन्द आँख न तो सो रही है, न ही देख रही होती है। बेटा समझदार था उसे समझने में देर नहीं लगी कि समझदार व्यक्ति कई बार देखकर अनदेखा कर लेते हैं कुछ ऐसे भी होते हैं। जो आँखें बंद कर चिन्तन-मनन में लीन होते हैं अर्थात् मतलब की बात पर मनन तथा व्यर्थ की बात पर अनदेखा कर देते हैं। अतः दोनों ही प्रकार से उन्होंने जीवन के प्रत्येक पल का सदुपयोग तो किया ही। तो आभ्यान्तरिक एवं बाह्य शक्ति का प्रभाव तो व्यवहार-परिवर्तन के रूप में ही सामने आया।

यूनानी दार्शनिक सुकरात ने कहा था कि– जागरूकता रहित जीवन जीने योग्य नहीं होता है। स्वयं सुकरात भी रास्ता चलते युवकों से बातों ही बातों में कई नई एवं स्थानीय जानकारियाँ प्राप्त कर लेता था। प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार मुंशी प्रेमचन्द की इसी प्रकार की आदत थी जिससे उन्होंने अपने साहित्य में उत्तर भारतीय समाज की जीवनशैली से अवगत होकर अपने उपन्यास में चित्रण करते थे। आंग्ल महाकवि शैक्सपीयर को लक्ष्य करके एक समालोचक ने लिखा– "The poem hangs on the berry bush when comes the poet's eye and every street is a masquerade, when Shakespeare passes by." अर्थात् कवि नजर में प्रत्येक झाड़ी पर कविता लटकती है, प्रत्येक गली में नाटक-मंडली ही दिखाई देती है जब शैक्सपीयर की दृष्टि किसी पर पड़ती है, तब वह उस व्यक्ति में अपने नाटक के किसी पात्र की संभावनाएँ टटोलता है। तभी तो चिन्तन-मनन कर अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल हो जाता है। ये उदाहरण स्वाध्याय के गहन आन्तरिक एवं बाह्य चिन्तन-मनन की प्रभावशीलता से इनमें अपनी अभिरुचि एवं अभिव्यक्ति के अनुसार वैयक्तिक भिन्नता लिए व्यवहारगत परिवर्तन देख सकते हैं। स्वाध्याय के माध्यम से हम और आप या शिक्षक जिस वस्तु को जिस प्रयोजन से देखते तो अपना-अपना प्रयोजन सिद्ध कर लेता है। शिक्षक शिक्षार्थियों में, अभिभावकों में, समाज में अपनी-अपनी दृष्टि के अनुसार अलग-अलग व्यवहार कर उद्देश्य की संप्राप्ति करता है।

मनोविज्ञान के मनीषियों एवं आत्मज्ञान के साधकों का कथन है कि समस्त ज्ञान हमारे मन में निवास करता है जिस प्रकार जल-सिंचन द्वारा मेदिनी में निहित सुगन्ध प्रकट होती है उसी प्रकार जीवन और जगत के साथ जागरूक संस्पर्श एवं सम्पर्क द्वारा हमारा अन्तर्निहित ज्ञान प्रकट हो जाता है और तदानुसार व्यवहार करने की प्रेरणा प्राप्त होती है। थार्नटन विल्डर (Thornton Wilder) ने कहा–'We cannot be said to be alive in those moments when your hearts are conscious of our treasures' अर्थात् 'हम उन्हीं क्षणों में जागरूक कहे जा सकते हैं, जब हम अपने हृदय में निहित ज्ञानराशि के कोष के प्रति सजग होंगे।'

हम जानते हैं कि इस सूचना तंत्र के विस्फोट युग में एम. लर्निंग शिक्षा का महत्व बढ़ता ही जा रहा है, इसमें जीपीआरएस सुविधा से एसएमएस, एमएमएस तथा ई-मेल व इन्टरनेट आदि की सुविधा के कारण अब शिक्षा में पठन-पाठन, या अन्य विविध कार्यों का सम्पादन आन-लाइन हो जाता है। विविध सॉफ्टवेयर विकसित हो जाने से कई विश्वविद्यालयों में शिक्षण कार्य इन्हीं के माध्यम से किया जा रहा है। इससे दूरस्थ शिक्षण-कार्य व घर बैठे समस्त कार्य सम्पादित किये जा रहे हैं।

फिर भी स्वाध्याय की ताकत पुस्तक-ज्ञान पर जब अध्येता चल पड़ता है तो नये मार्गों की खोज करके विद्या को सार्थक करता है। पुस्तक-ज्ञान यदि विश्व-दर्शन के लिए खिड़कियों का काम करता है, तो स्वाध्यायी शिक्षक के स्वयं द्वारा प्राप्त ज्ञान ही आत्म-ज्ञान के रूप में उस द्वार के समान है जो ज्ञान के उस अनन्त सागर की ओर खुलता है जो प्रत्येक उत्तर रूपी पात्र को भर देने में समर्थ होता है। एक विद्वान ने लिखा है कि– "So long as you understand clearly, no progress is possible." अर्थात् 'जब तक मन में प्रश्न नहीं उठेंगे, तब तक प्रगति कठिन है।' क्योंकि पुस्तक ज्ञान उधार ली वस्तु के समान है परन्तु प्रश्नों के माध्यम से जिज्ञासाओं का समाधान संभव होता है जो स्वाध्याय की शक्ति के बिना संभव नहीं है। अतः पुस्तकें जाग्रत देवता तुल्य है, उनके स्वाध्याय से अध्ययन, चिन्तन मनन के द्वारा पूजा करने पर तत्काल वरदान पाकर व्यवहार परिवर्तन सहज होता दिखाई देने लगता है।

–वरिष्ठाध्यापिका, रा.बा.उ.मा. विद्यालय,
भीम (राजसमन्द)

आदेश परिपत्रः मई-जून, 2012

□ 1. प्रवेशोत्सव कार्य 2012-13 के सम्बन्ध में दिशा निर्देश। □ 2. कक्षा 1 से 8 के परीक्षा परिणाम (सत्र 2011-12) के सम्बन्ध में □ 3. निजी शिक्षण संस्थाओं की मान्यता/क्रमोन्नति हेतु आवेदन की अन्तिम तिथि बढ़ाने के सम्बन्ध में। □ 4. बेशी/अनुपयोगी/ अप्रचलित भण्डार सामग्री का निस्तारण □ 5. राज्यस्तरीय भामाशाह सम्मान समारोह 2012

1. प्रवेशोत्सव कार्य 2012-13 के सम्बन्ध में दिशा निर्देश

• कार्यालय निदेशक, प्रारम्भिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर • क्रमांक : शिविरा/प्रारं/शैक्षिक/जी/4166/प्र.उ./2012-13 दिनांक : 17.04.2012 • विषय : प्रवेशोत्सव कार्यक्रम 2012-13 के सम्बन्ध में। • प्रसंग : शासन उपसचिव, प्रारम्भिक शिक्षा (आयोजना) जयपुर का पत्र क्रमांक प.5(1)/प्राशि/ 2009 दिनांक 10.04.2012 • उपर्युक्त विषयान्तर्गत प्रासंगिक पत्र के क्रम में सत्र 2012-13 से विद्यालयों में प्रवेश प्रक्रिया 1 मई, 2012 से प्रारम्भ हो रही है। इसी क्रम में राज्य सरकार ने प्रवेशोत्सव कार्यक्रम 1 मई, 2012 से 16 मई, 2012 तक तथा 2 जुलाई, 2012 से 16 जुलाई, 2012 तक (दो बार) मनाए जाने का निर्णय लिया है, जिसका कार्यक्रम संलग्न है। संलग्न प्रवेशोत्सव कार्यक्रम के साथ-साथ निम्न बिन्दुओं की पालना भी सुनिश्चित करें– **1.** प्रवेशोत्सव कार्यकम का प्रथम चरण में दिनांक 1 मई, 2012 से 16 मई, 2012 तक तथा द्वितीय चरण में दिनांक 2 जुलाई, 2012 से 16 जुलाई, 2012 के दौरान मनाया जाना है। संलग्न कार्यक्रमानुसार गतिविधियों का आयोजन सुनिश्चित करें। **2.** प्रवेशोत्सव के दौरान विद्यालय परिसीमन क्षेत्र में आने वाले 6 से 14 आयु वर्ग के उन सभी बच्चों को, जो शिक्षा से वंचित रहे हैं, विद्यालय में चाईल्ड ट्रेकिंग सिस्टम (सी.टी.एस.) के आधार पर नामित किया जाना सुनिश्चित करें ताकि विद्यालयी शिक्षा से कोई भी बच्चा वंचित न रहे। चाईल्ड ट्रेकिंग सिस्टम को मई माह में काम में लेने की पूर्ण तैयारी कर ली जावें। **3.** कक्षा 1 से 8 तक की पाठ्यपुस्तकें नोडल केन्द्रों से विद्यालयों तक निर्धारित समय सीमा में पहुँचाना सुनिश्चित करें जिससे प्रवेशोत्सव के दौरान निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण सुनिश्चित हो सके। **4.** वर्ष 2012-13 में भी विद्यार्थियों हेतु पूर्व की भाँति पाठ्यपुस्तकों की व्यवस्था बुक बैंक एवं प्रोन्नत हुए विद्यार्थियों से पिछली कक्षा की पुस्तकें प्राप्त कर छात्रों को वितरित की जाने की भी व्यवस्था सुनिश्चित करें।

बिन्दु संख्या 3 व 4 की समस्त वांछित कार्यवाही समय पर पूरी कर लेवें ताकि कोई भी विद्यार्थी अध्ययन से वंचित न रहे। उपर्युक्त बिन्दु 1 से 4 तक व संलग्न प्रवेशोत्सव कार्यक्रम के गतिविधियों के आयोजन की सुनिश्चित व्यवस्था करते हुए संलग्न प्रपत्र 1 व 2 में नामांकन की सूचना **दिनांक 30.08.2012** तक निदेशालय के संयुक्त निदेशक, सांख्यिकी अनुभाग को भिजवाना सुनिश्चित करें।

प्रपत्र 1 व 2 की सूचना में सभी प्रकार के विद्यालय यथा– राजकीय प्राथमिक, उच्च प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक, वैकल्पिक विद्यालय, एस.एस.ए. द्वारा संचालित विद्यालय एवं निजी विद्यालयों में अध्ययनरत कक्षा 1 से 8 तक के नामांकित समस्त छात्र-छात्राओं को शामिल किया जाना है। नामांकन की सूचना राजकीय विद्यालयों तथा निजी विद्यालयों की अलग-अलग प्रपत्र 1 व 2 में भिजवाई जानी है। • ह. निदेशक।

प्रवेशोत्सव कार्यक्रम (प्रथम चरण) माह मई 2012
(01.05.2012 से 16.05.2012)

दिनांक 01 मई, 2012 : स्वयं प्रवेश लेने वाले बच्चों का प्रवेश करवाना, बालक-बालिकाओं एवं अध्यापकों की टोलियों का गठन कर उन अभिभावकों से विशेष रूप से सम्पर्क स्थापित करना, तथा एस.एस.ए. द्वारा किये गये सीटीएस सर्वे अनुसार जिनके बच्चे विद्यालय जाने योग्य हैं तथा विद्यालय में अनामांकित हैं, उन्हें प्रवेश दिलाने हेतु प्रेरित करना साथ ही बालिका नामांकन/ बालिका प्रवेश हेतु विशेष ध्यान देना।

दिनांक 02 मई, 2012 : स्थानीय जन प्रतिनिधियों, अभिभावकों एवं बच्चों के साथ रैली का आयोजन, जिसमें शिक्षा की महत्ता से सम्बन्धित बेनर, स्टीकर, नारे आदि का उपयोग करते हुए ढोल मंजीरे के साथ रैली निकालना। विद्यालय परिसर की साज-सज्जा, वृक्षारोपण, स्थानीय जन प्रतिनिधियों के नेतृत्व में प्रवेशोत्सव आदि पर प्रकाश डालते हुए समारोह का आयोजन करना।

दिनांक 03 मई, 2012 : प्रार्थना सभा का आयोजन, प्रार्थना सभा में ही विद्यालय में नवीन प्रवेश लेने वाले बालक-बालिकाओं का परम्परागत तरीके से स्वागत एवं पारस्परिक परिचय। जन प्रतिनिधियों के नेतृत्व में निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण।

दिनांक 04 मई, 2012 : ग्राम शिक्षा समिति की बैठक का आयोजन तथा स्थानीय जन प्रतिनिधि, सरपंच, वार्ड पंच एवं सम्मानित व्यक्ति द्वारा बच्चों को संबोधन।

दिनांक 05 मई, 2012 : बाल सभा एवं ऐसे सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन, जो बच्चों को प्रवेश देने में प्रेरक बनें। चित्रकला एवं सुलेख प्रतियोगिताओं का आयोजन।

दिनांक 07 मई, 2012 : बच्चों हेतु ग्रामीण खेलकूद प्रतियोगिताओं के आयोजन, बाल मेलों का आयोजन, शिक्षण अधिगम सामग्री का प्रदर्शन।

दिनांक 08 मई, 2012 : पुनः ढोल नगाड़े इत्यादि के साथ रैली, प्रभात फेरी का आयोजन। ऐसे बच्चों के अभिभावकों से सम्पर्क करना जो विद्यालय में प्रवेश लेने से छूटे हुए हैं।

दिनांक 09 मई, 2012 : स्थानीय दर्शनीय स्थलों पर बच्चों को ले जाना। शाला में पंचवटी लगाने हेतु जगह तैयार करना, विचार-विमर्श आदि करना।

दिनांक 10 मई, 2012 : प्रवेशोत्सव के दौरान विद्यालय में नवीन प्रवेश लेने वाले छात्रों एवं अभिभावक का स्वागत।

दिनांक 11 मई, 2012 : विद्यालय में अध्ययनरत बालकों के स्वास्थ्य परीक्षण की व्यवस्था। प्राकृतिक आपदाओं एवं मौसमी बीमारियों से बचाव की जानकारी। पाँच संकल्प शिक्षकों एवं छात्रों के लिए दिलाना।

दिनांक 12 मई, 2012 : अध्यापकों की टोलियों द्वारा छात्रों एवं अभिभावकों से सम्पर्क कर प्रवेश योग्य बालकों को शाला में प्रवेश हेतु आने वाली समस्या का पता लगाना।

दिनांक 14 मई, 2012 : शाला/ग्राम स्तर पर प्राप्त समस्याओं का निराकरण कर, प्रवेश की शत-प्रतिशत व्यवस्था करना।

दिनांक 15 मई, 2012 : चिह्नित बालकों के अभिभावकों से मिलना जो अभी तक प्रवेश के लिए शाला प्रधान से मिलने नहीं आये।

दिनांक 16 मई, 2012 : पखवाड़े के दौरान किये गये कार्यों की समीक्षा एवं उपलब्धियों का प्रचार-प्रसार एवं पखवाड़े के अंतर्गत किये गये कार्यों की रिपोर्ट उच्चाधिकारियों को प्रेषित करना।

प्रवेशोत्सव कार्यक्रम (द्वितीय चरण) माह जुलाई 2012 (02.07.2012 से 16.07.2012)

दिनांक 02 जुलाई, 2012 : स्वयं प्रवेश लेने वाले बच्चों का प्रवेश करवाना, बालक-बालिकाओं एवं अध्यापकों की टोलियों का गठन कर उन अभिभावकों से विशेष रूप से सम्पर्क स्थापित करना तथा एस.एस.ए. द्वारा किये गये सीटीएस सर्वे अनुसार जिनके बच्चे विद्यालय जाने योग्य हैं तथा विद्यालय में अनामांकित हैं, उन्हें प्रवेश दिलाने हेतु प्रेरित करना साथ ही बालिका नामांकन/ बालिका प्रवेश हेतु विशेष ध्यान देना।

दिनांक 03 जुलाई, 2012 : स्थानीय जन प्रतिनिधियों, अभिभावकों एवं बच्चों के साथ रैली का आयोजन, जिसमें शिक्षा की महत्ता से सम्बन्धित बेनर, स्टीकर, नारे आदि का उपयोग करते हुए ढोल मंजीरे के साथ रैली निकालना। विद्यालय परिसर की साज-सज्जा, वृक्षारोपण, स्थानीय जन प्रतिनिधियों के नेतृत्व में प्रवेशोत्सव आदि पर प्रकाश डालते हुए समारोह का आयोजन करना।

दिनांक 04 जुलाई, 2012 : प्रार्थना सभा का आयोजन, प्रार्थना सभा में ही विद्यालय में नवीन प्रवेश लेने वाले बालक-बालिकाओं का परम्परागत तरीके से स्वागत एवं पारस्परिक परिचय। जन-प्रतिनिधियों के नेतृत्व में निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण।

दिनांक 05 जुलाई, 2012 : ग्राम शिक्षा समिति की बैठक का आयोजन तथा स्थानीय जन प्रतिनिधि, सरपंच, वार्ड पंच एवं सम्मानित व्यक्ति द्वारा बच्चों को संबोधन।

दिनांक 06 जुलाई, 2012 : बाल सभा एवं ऐसे सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन, जो बच्चों को प्रवेश देने में प्रेरक बनें। चित्रकला एवं सुलेख प्रतियोगिताओं का आयोजन।

दिनांक 07 जुलाई, 2012 : बच्चों हेतु ग्रामीण खेलकूद प्रतियोगिताओं के आयोजन, बाल मेलों का आयोजन, शिक्षण अधिगम सामग्री का प्रदर्शन।

दिनांक 09 जुलाई, 2012 : पुनः ढोल नगाड़े इत्यादि के साथ रैली, प्रभात फेरी का आयोजन। ऐसे बच्चों के अभिभावकों से सम्पर्क करना जो विद्यालय में प्रवेश लेने से छूटे हुए हैं।

दिनांक 10 जुलाई, 2012 : स्थानीय दर्शनीय स्थलों पर बच्चों को ले जाना। शाला में पंचवटी लगाने हेतु जगह तैयार करना, विचार विमर्श आदि करना।

दिनांक 11 जुलाई, 2012 : प्रवेशोत्सव के दौरान विद्यालय में नवीन प्रवेश लेने वाले छात्रों एवं अभिभावकों का स्वागत।

दिनांक 12 जुलाई, 2012 : विद्यालय में अध्ययनरत बालकों के स्वास्थ्य परीक्षण की व्यवस्था। प्राकृतिक आपदाओं एवं मौसमी बीमारियों से बचाव की जानकारी। पाँच संकल्प शिक्षकों एवं छात्रों के लिए दिलाना।

दिनांक 13 जुलाई, 2012 : अध्यापकों की टोलियों द्वारा छात्रों एवं अभिभावकों से सम्पर्क कर प्रवेश योग्य बालकों को शाला में प्रवेश हेतु आने वाली समस्या का पता लगाना।

दिनांक 14 जुलाई, 2012 : शाला/ग्राम स्तर पर प्राप्त समस्याओं का निराकरण कर, प्रवेश की शत-प्रतिशत व्यवस्था करना।

दिनांक 16 जुलाई, 2012 : पखवाड़े के दौरान किये गये कार्यों की समीक्षा एवं उपलब्धियों का प्रचार-प्रसार एवं पखवाड़े के अंतर्गत किये गये कार्यों की रिपोर्ट उच्चाधिकारियों को प्रेषित करना।

प्रपत्र-1

नामांकन अभियान के दौरान कुल नामांकन : 2012-13

विवरण	गत वर्ष नामांकन की स्थिति 2011-12		नामांकन पश्चात् ड्रॉप आउट 2011-12		शेष नामांकन 2011-12		अभियान के दौरान नामांकन 2012-13		कुल नामांकन		विशेष विवरण
	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	
पूर्व प्राथमिक से कक्षा 5											
कक्षा 6 से 8											
योग											

नोट :– प्रपत्र 1 व 2 की सूचना राजकीय एवं निजी विद्यालयों की अलग-अलग प्रपत्र में बनानी है तथा उक्त सूचना सभी राजकीय प्राथमिक विद्यालय, उच्च प्राथमिक विद्यालय, माध्यमिक शिक्षा में अध्ययनरत कक्षा 1 से 8 तक की छात्र-छात्राएँ तथा स्थानीय निकाय के विद्यालय, डीपीईपी द्वारा संचालित सभी वैकल्पिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र-छात्राओं का नामांकन शामिल किया जाना है।

प्रपत्र-2

नामांकन अभियान (संख्या हजारों में)			
विवरण	गतवर्ष नामांकन की स्थिति	नामांकन अतिरिक्त	कुल उपलब्धियाँ
प्राथमिक शिक्षा का नामांकन			
आयु 6 से 11 वर्ष (कक्षा पूर्व प्राथमिक से 5 तक)			
समस्त जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अनु. जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अनु. जनजाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अन्य पिछड़ा जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
आयु 11 से 14 वर्ष (कक्षा 6 से 8 तक)			
समस्त जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अनु. जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अनु. जन जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अन्य पिछड़ा जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
आयु 6 से 14 वर्ष (कक्षा प्राथमिक से 8 तक)			
समस्त जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अनु. जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अनु. जनजाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			
अन्य पिछड़ी जाति			
छात्र			
छात्रा			
योग			

हस्ताक्षर मय मोहर

2. कक्षा 1 से 8 के परीक्षा परिणाम (सत्र 2011-12) के सम्बन्ध में

• कार्यालय निदेशक, प्रारम्भिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर • क्रमांक : शिविरा/प्रारं/शैक्षिक/एबी/3511/समान परीक्षा/11-12 दिनांक : 19/4/12 • विषय : कक्षा 1 से 8 के परीक्षा परिणाम (सत्र 2011-12) के सम्बन्ध में। • प्रसंग : प्रमुख शासन सचिव, स्कूल एवं संस्कृत शिक्षा, जयपुर के पत्रांक प.21(19)शिक्षा-1/प्राशि/2009 दिनांक 31.03.2011 एवं इस कार्यालय के समसंख्यक पत्र दिनांक 21.09.2011 • सत्र 2011-12 में कक्षा 1 से 8 तक के परीक्षा परिणाम के सम्बन्ध में अधीनस्थ कार्यालयों से निरन्तर मार्गदर्शन माँगा जा रहा है। इस सम्बन्ध में पुनः यह स्पष्ट किया जाता है कि राज्य सरकार के पत्र दिनांक 31.03.11 के द्वारा राजस्थान निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2011 निर्मित कर राज्य सरकार द्वारा 29 मार्च 2011 को अधिसूचित किये गये जा चुके हैं। उक्त पत्र के दिशा-निर्देश बिन्दु संख्या (च) में वर्णित धारा-16 के प्रावधानानुसार किसी भी बालक को न तो किसी कक्षा में रोका जाएगा और न ही प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करने तक निष्कासित किया जाएगा।

इस सम्बन्ध में इस कार्यालय के समसंख्यक पत्र दिनांक 21.09.2011 के द्वारा भी सत्र 2011-12 में कक्षा 1 से 8 तक की परीक्षा व्यवस्था एवं परीक्षा परिणाम के सम्बन्ध में भी निर्देश जारी किये गये थे। पुनः निर्देशित किया जाता है कि आर.टी.ई. प्रावधान अंतर्गत सत्र 2011-12 में भी कक्षा 1 से 8 तक के विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम के अंतर्गत किसी भी विद्यार्थी को किसी भी कक्षा में रोका नहीं जाकर वांछित स्तर प्राप्त करवाते हुए कक्षा प्रौन्नत भी किया जावे। किसी विद्यार्थी के विषय अथवा क्षेत्र में कमजोर पाये जाने की स्थिति में अध्यापक द्वारा विशेष शिक्षण की व्यवस्था की जावें।

उक्त दिशा-निर्देश की पालना सत्र 2011-12 के परीक्षा परिणाम में भी कराना सुनिश्चित करें। • ह. निदेशक।

3. निजी शिक्षण संस्थाओं की मान्यता/क्रमोन्नति हेतु आवेदन की अन्तिम तिथि बढ़ाने के सम्बन्ध में।

• राजस्थान सरकार, स्कूल एवं संस्कृत शिक्षा (ग्रुप-5) विभाग • क्रमांक : प.9(2)शिक्षा-5/2010 पार्ट जयपुर, दिनांक 30.03.2012 • विषय : निजी शिक्षण संस्थाओं की मान्यता/क्रमोन्नति हेतु आवेदन की अन्तिम तिथि बढ़ाने के सम्बन्ध में। • सन्दर्भ : इस विभाग का समसंख्यक पत्र दिनांक 28.02.2012 • उपरोक्त विषयान्तर्गत सन्दर्भित पत्र के क्रम में निर्देशानुसार लेख है कि निजी शिक्षण संस्थाओं को सत्र 2012-13 में प्रा.वि. से उ.प्रा.वि., उ.प्रा.वि. से मा.वि. एवं मा.वि. से उ.मा.वि. में मान्यता/क्रमोन्नति एवं अतिरिक्त विषय संकाय की स्वीकृति के सम्बन्ध में आवेदन करने के लिए अन्तिम तिथि दिनांक 31.3.2012 तक बढ़ाई जाकर समाचार पत्रों में सूचना/विज्ञप्ति प्रकाशित की गयी थी। अब मान्यता/क्रमोन्नति/अतिरिक्त विषय संकाय की स्वीकृति हेतु आवेदन करने की अन्तिम तिथि दिनांक 15.5.2012 तक आगे बढ़ाई जाती है। शेष शर्तें पूर्वानुसार यथावत रहेंगी।

यह विज्ञप्ति आपके स्तर पर राज्य के सभी दैनिक समाचार पत्रों में अविलम्ब प्रकाशित कराये जाने की व्यवस्था करें। • ह., अशोक सम्पतराम, प्रमुख शासन सचिव, स्कूल एवं संस्कृत शिक्षा। • कार्यालय निदेशक, प्रारम्भिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर • क्रमांक : शिविरा/प्रारं/शैक्षिक/सी/19626/12-13 दिनांक 30.03.2012

4. बेशी/अनुपयोगी/अप्रचलित भण्डार सामग्री का निस्तारण

• राजस्थान सरकार, वित्त विभाग (सामान्य वित्तीय एवं लेखा नियम अनुभाग) • क्रमांक : प.6(1)वित्त/साविलेनि/2005 जयपुर, दिनांक : 10.04.2012 परिपत्र संख्या : 11/2012 • परिपत्र • राजकीय विभागों/स्वायत्तशासी संस्थाओं में उपलब्ध बेशी/अनुपयोगी/अप्रचलित भण्डार सामग्री के निस्तारण हेतु विस्तृत दिशा-निर्देश परिपत्र संख्या 11/2011 दिनांक 24.06.2011 से जारी किये गये थे। परिपत्र में वर्णित नियमों में शिथिलन तथा अन्य प्रावधानों की अवधि दिनांक 31.03.2013 तक बढ़ाई जाती है। • आज्ञा से, ह. संयुक्त सचिव।

5. राज्य स्तरीय भामाशाह सम्मान समारोह 2012

• कार्यालय निदेशक, प्रारम्भिक शिक्षा राजस्थान, बीकानेर • क्रमांक : शिविरा-प्रारं/साप्र/सी/भामा/2773/2012/29 दिनांक : 22.03.2012 • विषय : राज्यस्तरीय भामाशाह सम्मान समारोह, 2012 • शिक्षा के क्षेत्र में विद्यालयों/शिक्षण संस्थाओं के शैक्षिक, सह शैक्षिक एवं भौतिक विकास के लिए दस लाख रुपये अथवा इससे अधिक धनराशि का सहयोग देने वाले दानदाताओं को गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी भामाशाह दिवस (दिनांक 28.06.2012) पर एक राज्य स्तरीय सम्मान समारोह में सम्मानित किया जाना है। इस सम्मान समारोह से सम्बन्धित समस्त कार्य निदेशक प्रारंभिक शिक्षा, राजस्थान बीकानेर द्वारा किया जाना है।

इस वर्ष आयोजित होने वाले सम्मान समारोह में 01.04.2011 से 31.03.2012 तक की अवधि में विभाग द्वारा निर्धारित धनराशि का सहयोग करने वाले दानदाताओं एवं 01.04.10 से 31.03.11 तक की अवधि के लिए निर्धारित राशि का सहयोग करने वाले दानदाता जो गत वर्ष सम्मानित होने से वंचित रह गये थे, उन्हें भी शामिल कर सम्मानित किये जाने का निर्णय लिया गया है। ऐसे दानदाता जिन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में भवन निर्माण/अतिरिक्त निर्माण शाला भवनों की मरम्मत अथवा स्थाई साज सामान के रूप में दस लाख रुपये अथवा इससे अधिक धनराशि का सहयोग उक्त निर्धारित अवधि में किया है, सम्मान हेतु पात्र होंगे। प्रेरकों के लिए 01.04.10 से 31.03.11 अथवा 01.04.11 से 31.03.12 तक की अवधि में 30 लाख रुपये अथवा इससे अधिक धनराशि का एकमुश्त सहयोग करने वाले दानदाताओं को सहयोग हेतु प्रेरित किये जाने एवं उनके द्वारा प्रेरित दानदाता इस वर्ष 2012 में आयोजित होने वाले सम्मान समारोह में सम्मान हेतु चयनित होने पर ही चयन का मानदण्ड निर्धारित किया गया है। 30 लाख रुपये का सहयोग एकमुश्त होना एवं उक्त वर्णित अवधि का ही होना आवश्यक होगा। उक्त वर्णित अवधि से पहले का सहयोग मान्य नहीं होगा।

उपरोक्तानुसार निर्धारित मानदण्डों की श्रेणी में आने वाले दानदाताओं एवं प्रेरकों के प्रस्ताव संलग्न निर्धारित प्रपत्र में सम्बन्धित जिला शिक्षा अधिकारी की अभिशंषा सहित निदेशालय प्रारम्भिक शिक्षा राजस्थान बीकानेर में प्राप्त होने की अन्तिम तिथि **15.05.2012** निर्धारित की गई है। इस तिथि के बाद प्राप्त होने वाले प्रस्तावों पर विचार किया जाना संभव नहीं हो सकेगा।

अतः समस्त सम्बन्धित जिला शिक्षा अधिकारियों को पाबंद किया जाता है कि अपने अधीनस्थ जिले में स्थित विद्यालयों/शिक्षण संस्थाओं में सहयोग करने वाले दानदाताओं एवं दानदाताओं को प्रेरित करने वाले प्रेरकों के प्रस्ताव निर्धारित प्रपत्र में निर्धारित तिथि तक विभाग द्वारा निर्धारित मानदण्डों के अनुसार जाँच कर निदेशालय को भिजवाने की व्यवस्था सुनिश्चित करें।

भामाशाह सम्मान समारोह 2012 हेतु भामाशाहों एवं प्रेरकों के प्रस्ताव निदेशालय को चयन हेतु भिजवाने बाबत निम्न दिशा निर्देश प्रदान किये जाते हैं–

1. न्यूनतम दस लाख रुपये की धनराशि तक का निर्धारित अवधि में शिक्षा के क्षेत्र में सहयोग करने वाले दानदाताओं का ही प्रस्ताव अभिशंषित कर भिजवावें। यदि दानदाता ने सम्पूर्ण भवन का निर्माण करवाया है तो उनके द्वारा निर्मित भवन का विधिवत दानपत्र विभाग के पक्ष में लिखा जाना आवश्यक है।

2. यदि उनके द्वारा भूमि दान में दी गई है, तो भी प्रदत्त भूमि का दानपत्र विभाग के पक्ष में विधिवत लिखा जाना आवश्यक है। यदि विधिवत दानपत्र विभाग के पक्ष में निष्पादित नहीं हुआ है तो ऐसे प्रस्ताव अभिशंषित कर नहीं भिजवाये जावें।

3. यदि किसी दानदाता ने स्थाई साज सामान के रूप में दस लाख रुपये अथवा इससे अधिक का सहयोग दिया हो तो उसके द्वारा उपलब्ध करवाये गये साज-सामान की सम्बन्धित विद्यालय/संस्था के स्टॉक रजिस्टर में इन्द्राज कर यह प्रमाण पत्र देना होगा की सम्बन्धित दानदाता द्वारा इस योजना में दिये गये साज सामान का स्टॉक रजिस्टर में विधिवत् इन्द्राज कर लिया गया है।

4. यदि किसी दानदाता ने भवन में अतिरिक्त निर्माण/चारदीवारी/मरम्मत/बच्चों की छात्रवृत्ति/पुस्तकालय हेतु सहयोग आदि के रूप में दस लाख रुपये अथवा इससे अधिक का सहयोग दिया है तो उनके द्वारा प्रदत्त सहयोग राशि के पूर्ण विवरण लागत सहित संस्था प्रधान प्रमाणित कर जिला शिक्षा अधिकारी के प्रतिहस्ताक्षर करवाकर प्रस्ताव के साथ संलग्न करें।

5. भामाशाह से तात्पर्य दानपत्र पर हस्ताक्षर करने वाले अथवा मूल सहयोग देने वाले दानदाता से ही है। यदि किसी दानदाता की मृत्यु हो जाती है तो उनको यह सम्मान (मरणोपरान्त) उसी दानदाता के नाम से ही दिया जावेगा। ऐसे दानदाताओं के प्रस्ताव में संक्षिप्त जीवन परिचय भिजवाते समय ध्यान रखा

जावे कि फोटोग्राफ एवं परिचय ऐसे मूल दानदाता के ही भेजे जावें। इनका सम्मान उनके उत्तराधिकारी प्राप्त करेंगे जिसके लिए सम्बन्धित जिला शिक्षा अधिकारी उन्हें अधिकृत कर उनके नवीनतम फोटो सहित अधिकृत पत्र की प्रमाणित प्रति प्रस्ताव के साथ लगावें एवं भेजे जाने वाले प्रस्ताव में भी इसका स्पष्ट उल्लेख करें।

6. जन सहभागी विद्यालय मरम्मत योजना के अन्तर्गत दस लाख रुपये अथवा अधिक का विद्यालय मरम्मत कार्य/अतिरिक्त निर्माण कार्य आदि में योगदान देने वाले दानदाता इस सम्मान हेतु पात्र होंगे।

7. भामाशाहों के प्रस्तावों के साथ सम्बन्धित दानदाताओं द्वारा आवेदन पत्र में उनके द्वारा उल्लेखित सहयोग राशि की पुष्टि से सम्बन्धित दस्तावेज आवश्यक रूप से संलग्न करावें। यदि सहयोग राशि की पुष्टि से सम्बन्धित कोई दस्तावेज प्रस्ताव के साथ संलग्न नहीं होगा तो ऐसे प्रस्ताव अस्वीकृत किये जा सकते हैं।

8. विभाग द्वारा निर्धारित अवधि, निर्धारित मानदण्ड के अनुरूप प्रेरकों के प्रस्ताव होने पर ही प्रस्ताव भेजें। यदि किसी प्रेरक ने एक से अधिक दानदाताओं को सहयोग हेतु प्रेरित किया है तो उनके द्वारा प्रेरित भामाशाहों के कुल सहयोग की राशि 30 लाख रुपये होने एवं प्रेरक द्वारा प्रेरित भामाशाह आयोजित समारोह में सम्मान हेतु चयनित होने पर ही प्रेरक को सम्मान हेतु चयनित किया जायेगा। प्रेरकों के प्रस्ताव सम्बन्धित जिला शिक्षा अधिकारी अपनी अभिशंषा सहित सम्बन्धित उप निदेशक को प्रेषित करेंगे। सम्बन्धित उप निदेशक प्रेरकों के प्रस्ताव अपनी अभिशंषा सहित इस निदेशालय को निर्धारित अवधि में भिजवायेंगे। उप निदेशक की अभिशंषा के अभाव में प्राप्त होने वाले प्रेरकों के प्रस्तावों पर कोई विचार नहीं किया जावेगा।

9. यदि एक से अधिक दानदाताओं ने सहयोग किया है तो ऐसे प्रकरणों में सम्बन्धित दानदाता से लिखित सहमति प्राप्त कर प्रस्ताव के साथ संलग्न करें कि किसको सम्मानित किया जाना है। विभाग द्वारा केवल एक दानदाता को ही सम्मानित किया जायेगा यदि एक से अधिक दानदाताओं ने संयुक्त रूप से सहयोग किया है तो दानदाता की लिखित सहमति प्राप्त होने पर ही उनके द्वारा सहमत दानदाता को सम्मानित किया जावेगा। प्रशस्ति पुस्तिका में सम्मानित होने वाले दानदाता का ही फोटो एवं परिचय प्रकाशित किया जावेगा।

10. जहाँ तक संभव हो सके भामाशाहों/प्रेरकों के प्रस्ताव निर्धारित प्रपत्र में कम्प्यूटराईज्ड/टाईप कराकर ही भिजवावें।

11. प्रशासनिक सेवा के अधिकारी, जनप्रतिनिधि को प्रेरक के रूप में सम्मान हेतु प्रस्ताव प्रेषित नहीं किए जावें।

12. भामाशाह एवं प्रेरकों को सम्मान हेतु चयन बाबत् निदेशक प्रारम्भिक शिक्षा राजस्थान बीकानेर द्वारा लिया गया निर्णय अंतिम होगा। यदि किसी भामाशाह एवं प्रेरक का प्रस्ताव सम्मान हेतु चयनित नहीं किया जाता है तो ऐसे प्रकरणों में किसी भी प्रकार के पत्र व्यवहार पर कोई कार्यवाही नहीं की जायेगी और न ही चयन नहीं किये जाने के कारण से उन्हें सूचित किया जावेगा।

इस परिपत्र के साथ भामाशाहों एवं प्रेरकों के प्रस्तावों के आवेदन पत्रों का प्रारूप संलग्न कर भिजवाया जा रहा है। जिसे पूर्ण भरवाकर दो फोटो सहित प्रस्ताव समेकित कर भामाशाहों के प्रस्ताव सम्बन्धित जिला शिक्षा अधिकारी एवं प्रेरकों के प्रस्ताव सम्बन्धित मंडल अधिकारी निर्धारित तिथि तक निदेशालय को भिजवायेंगे। भामाशाह एवं प्रेरकों के प्रस्ताव के साथ पूर्ण विवरण सहित वांछनीय दस्तावेज की प्रतियाँ संलग्न करें। सम्बन्धित भामाशाह/प्रेरक की एक फोटो फार्म पर निर्धारित स्थान पर चिपकाकर एवं एक फोटो 'यू' पिन के साथ फार्म के साथ संलग्न कर भिजवानी है। 'यू' पिन के साथ भेजी जाने वाली फोटो के पीछे सम्बन्धित दानदाता/प्रेरक का पूरा नाम पता अवश्य लिखा जावे।

निर्धारित तिथि के बाद प्रेषित किये जाने वाले किसी भी प्रस्ताव पर विचार किया जाना संभव नहीं होगा। निर्धारित आवेदन पत्र के फार्म में सभी कॉलम पूरे भरे होने आवश्यक हैं। आधे-अधूरे अपूर्ण प्रस्ताव अस्वीकृत किये जा सकते हैं। यदि कोई भामाशाह या प्रेरक प्रस्ताव के अभाव में सम्मान से वंचित रहता है तो इसका उत्तरदायित्व सम्बन्धित जिला शिक्षा अधिकारी एवं सम्बन्धित मंडल अधिकारी का होगा। अतः हर संभव प्रयास कर निर्धारित तिथि तक प्रस्ताव निदेशालय को भिजवाने हेतु पाबंद किया जाता है। • ह., निदेशक, प्रारम्भिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर।

राज्यस्तरीय भामाशाह सम्मान समारोह - 2012 हेतु प्रस्ताव भामाशाह के लिए

पासपोर्ट साईज का फोटो

1. दानदाता (भामाशाह) का नाम .....
2. पिता/पति का नाम .....
3. जाति .....
4. जन्म तिथि .....
5. मूल निवास स्थान व स्थाई पता .....
   .....
6. यदि दानदाता कोई संस्था या ट्रस्ट है तो ट्रस्ट अथवा संस्था की ओर से सम्मान ग्रहण करने वाले का नाम ..... पद .....
7. पत्र व्यवहार हेतु पूर्ण पता (विभाग द्वारा समस्त पत्र व्यवहार इसी पते पर ही किये जायेंगे) .....
8. सम्पर्क हेतु दूरभाष नं. ..... मोबाईल नं. ..... फैक्स नं .....
9. शैक्षणिक योग्यता .....
10. व्यवसाय का विवरण .....
11. विद्यालय का नाम जिसके लिए सहयोग किया गया .....
12. आप द्वारा किये गये सहयोग का विवरण .....
13. आप द्वारा किये गये सहयोग की अवधि/वर्ष .....
14. सहयोग की कुल राशि रु. (प्रदत्त सहयोग राशि की पुष्टि हेतु सहयोग राशि का विवरण जि.शि.अ. से प्रति हस्ताक्षरित कराकर संलग्न करें).....
15. यदि सम्पूर्ण भवन का निर्माण कराया गया है तो क्या निर्मित भवन का विधिवत दान पत्र विभाग के पक्ष में लिखा जा चुका है .....
    (पंजीकृत दान पत्र एवं विभाग द्वारा दान में एवं राज्याधीन लिये जाने की स्वीकृति आदेश की प्रति संलग्न करें)
16. आपको सहयोग हेतु प्रेरित करने वाले प्रेरक का नाम एवं उनसे आपका सम्बन्ध .....
17. शिक्षा विभाग के अतिरिक्त आपके द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र/हित में किये गये अन्य महत्वपूर्ण सहयोगों का विवरण .....
18. दानदाता के विरुद्ध किसी प्रकार का कोई आपराधिक मामला न्यायालय में विचाराधीन नहीं है/है .....
    (यदि है तो उसका पूर्ण विवरण संलग्न करें)
19. संक्षिप्त जीवन परिचय .....
    (आवश्यकता होने पर पृथक से संलग्न किया जा सकता है)
20. प्रमाणित किया जाता है कि मेरे विरुद्ध किसी प्रकार का आपराधिक वाद किसी भी न्यायालय/पुलिस थाना में विचाराधीन नहीं है/दर्ज नहीं है।

हस्ताक्षर दानदाता

दिनांक : .....

नाम .....

पता .....

'प्रमाणित किया जाता है कि दानदाता द्वारा उल्लेखित सहयोग राशि की पुष्टि सम्बन्धित दस्तावेज से कर ली गई है। उपरोक्त विवरण सही है, गलत पाये जाने पर निम्न हस्ताक्षरकर्ता उत्तरदायी है'

संस्था प्रधान के हस्ताक्षर (मय मोहर)

'प्रमाणित किया जाता है कि दानदाता द्वारा उल्लेखित राशि की पुष्टि सम्बन्धित दस्तावेज से कर ली गई है, भामाशाह के प्रस्ताव की जाँच कर ली गई है। जाँचोपरान्त उपरोक्त उल्लेखित विवरण सही पाये गये अतः इनका राज्य स्तरीय भामाशाह सम्मान के लिए चयन की अभिशंषा की जाती है।

हस्ताक्षर सम्बन्धित जि.शि.अ.(मय मोहर)

राज्य स्तरीय भामाशाह सम्मान समारोह - 2012 हेतु प्रेरक के लिए प्रस्ताव

पासपोर्ट साईज का फोटो

1. नाम प्रेरक .....
2. पिता/पति का नाम .....
3. पद व पदस्थापन स्थान .....
4. दानदाता का नाम जिसे आप द्वारा प्रेरित किया गया .....
5. विद्यालय का नाम जिसके लिए आपकी प्रेरणा से सहयोग हुआ .....
6. आपकी प्रेरणा से दानदाता द्वारा किये गये सहयोग का विवरण .....
   .....
7. दानदाता द्वारा किये गये सहयोग की अनुमानित लागत राशि .....
8. दानदाता का आपसे सम्बन्ध .....
9. प्रेरक के विरुद्ध किसी प्रकार का कोई आपराधिक में मामला न्यायालय विचाराधीन नहीं है/है .....
   (यदि है तो उसका पूर्ण विवरण संलग्न करें)
11. दानदाता को प्रेरित कर सहयोग प्राप्त करने की अवधि/वर्ष .....
12. पत्र व्यवहार हेतु पता (विभाग द्वारा समस्त पत्र व्यवहार इसी पते पर ही किये जायेंगे) .....
13. सम्पर्क हेतु दूरभाष नं. ..... मोबाईल नं. .....
    फैक्स नं. .....
14. अन्य विशेष विवरण .....
15. संक्षिप्त परिचय .....
16. प्रमाणित किया जाता है कि मेरे विरुद्ध किसी प्रकार का आपराधिक वाद किसी भी न्यायालय/पुलिस थाना में विचाराधीन नहीं है/दर्ज नहीं है।

दिनांक : .....

हस्ताक्षर प्रेरक
नाम .....
पद व पदस्थापन स्थान .....
.....

उक्त प्रेरक ने ही मुझे/हमें सहयोग हेतु प्रेरित किया है। अतः मैं/हम इन्हें प्रेरक के रूप में सम्मान हेतु चयन की अभिशंषा करता हूँ/करते हैं।

हस्ताक्षर दानदाता
नाम .....

'प्रमाणित किया जाता है कि उपरोक्त विवरण सही है, गलत पाये जाने पर इसके लिए निम्न हस्ताक्षरकर्ता उत्तरदायी है'।

संस्था प्रधान के हस्ताक्षर (मय मोहर)

'प्रमाणित किया जाता है कि उपरोक्त विवरण सही है। उक्त कर्मचारी/अधिकारी के विरुद्ध किसी भी प्रकार की अनुशासनात्मक कार्यवाही विचाराधीन नहीं हैं कर्मचारी/अधिकारी को प्रेरक के रूप में चयन कर सम्मानित किये जाने की अभिशंषा की जाती है'।

हस्ताक्षर सम्बन्धित जि.शि.अ. (मय मोहर)

'प्रमाणित किया जाता है कि प्रेरकों के प्रस्तावों का अध्ययन करने के बाद उक्त प्रेरक का योगदान सर्वश्रेष्ठ रहा है। इन्होंने विभाग द्वारा निर्धारित मानदण्डानुसार न्यूनतम तीस लाख रुपये अथवा इससे अधिक योगदान देने वाले भामाशाह को प्रेरित किया है। इनके विरुद्ध किसी भी प्रकार की अनुशासनात्मक कार्यवाही विचाराधीन नहीं है। अतः इन्हें प्रेरक के रूप में चयन कर सम्मानित किये जाने की अभिशंषा की जाती है।'

हस्ताक्षर सम्बन्धित उप निदेशक (मय मोहर)

शिविरा पंचांग माह मई-जून, 2012

कार्य दिवस 14 • रविवार 04 • अवकाश 13 • उत्सव 02 • 1 मई— नवीन सत्रारम्भ, सत्र 2012—13 की प्रवेश प्रक्रिया एवं शिक्षण कार्य आरम्भ, सभी कक्षाओं के पूरक परीक्षार्थियों/कक्षा 10 में प्रविष्ट परीक्षार्थियों को आगामी कक्षा में प्रवेश देय, परन्तु कक्षा 12 में अनुत्तीर्ण परीक्षार्थियों को परीक्षा परिणाम की घोषणा के 7 दिवस अथवा 15 जुलाई, 2012 तक जो भी बाद में हो, के अनुसार प्रवेश देय। **7 मई**— रवीन्द्र नाथ टैगोर जयन्ती (उत्सव)। **7—10 मई**— सभी कक्षाओं (कक्षा 10 व 12 को छोड़कर) की पूरक परीक्षा का आयोजन। **10 मई**— राष्ट्रीय प्रतिभा खोज परीक्षा—द्वितीय स्तर (कक्षा 8 में अध्ययनरत विद्यार्थियों हेतु)। **14 मई**— सभी पूरक परीक्षाओं के परिणामों की घोषणा। **17 मई से 30 जून**— ग्रीष्मावकाश। **24 मई**— प्रताप जयन्ती (अवकाश उत्सव)। **नोट :**— विषय—वस्तु आधारित प्रशिक्षण आयोजित किये जायेंगे।

कार्य दिवस 0 • रविवार 04 • अवकाश 26 • उत्सव 0 • 1—3 जून— माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान द्वारा विद्यार्थियों की सृजनात्मक प्रतियोगिता के लिए राज्य स्तर की पूर्व तैयारी। **1—30 जून**— ग्रीष्मावकाश, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की ग्रामीण छात्राओं के शैक्षिक विकास हेतु जिला मुख्यालयों पर शिविरों का आयोजन। **7—9 जून**— माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान द्वारा विद्यार्थियों की सृजनात्मक प्रतियोगिता का राज्य स्तर पर आयोजन। **28 जून**— भामाशाह जयन्ति (राज्य स्तरीय भामाशाह सम्मान समारोह)। **नोट :**— विषय—वस्तु आधारित प्रशिक्षण आयोजित किये जायेंगे।

आदेश परिपत्रों की अनुक्रमणिका

(शिविरा पत्रिका, जुलाई 2011 से मई-जून, 2012 तक के अंकों में प्रकाशित आदेश-परिपत्र)

शिविरा पत्रिका में वर्ष भर में प्रकाशित आदेश-परिपत्रों की पूरी अनुक्रमणिका प्रतिवर्ष मई-जून के अंक में दी जाती रही है उसी क्रम में पाठकों की सुविधा के लिए जुलाई, 11 से मई-जून, 12 तक के आदेश-परिपत्रों की अलग-अलग विषयवार अनुक्रमणिका प्रस्तुत है। कोष्ठक में अंक की पृ.सं. है।

–प्रस्तोता : आसूराम तेजी, कार्यालय अधीक्षक, माध्यमिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर

संस्थापन

नियुक्ति : राजस्थान शिक्षा अधीनस्थ सेवा नियम, 1971 में संशोधन, जुलाई, 11(23) अनुसूचित क्षेत्र में स्थानीय जन जातियों हेतु किये गये आरक्षण आदेशों की पालना सुनिश्चित करने बाबत, दिसम्बर 11(23)। **अनुकम्पा नियुक्ति :** अनुकम्पा नियुक्ति नियम, 1996, दिशा निर्देश, अगस्त, 11 (29-30)। **पदोन्नति, वरिष्ठता :** राज्यस्तरीय वरिष्ठता सूचियों में संशोधन समय सीमा में निपटाए जावें, सितम्बर, 11(24) ☐ संविदा अध्यापकों को प्रथम नियुक्ति तिथि से वरिष्ठ एवं आर्थिक परिलाभ दिये जाने के क्रम में, फरवरी 12(24) ☐ वरिष्ठता सूचियाँ अपडेट करने बाबत, मार्च, 12(24)। **राजस्थान गैर सरकारी शैक्षिक संस्था नियम, 1993 :** अनुभव प्रमाण-पत्रों पर प्रतिहस्ताक्षर हेतु अधिकारियों का विनिश्चयन, सितम्बर, 11(24)। **अवकाश :** अवकाश पर जाने से पूर्व स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक, अप्रैल, 12(23-24)। **स्थाईकरण :** राजसेवकों के स्थाईकरण के सम्बन्ध में, दिसम्बर, 11(23)। **संस्थापन सम्बन्धी अन्य :** अन्य विभागों में शिक्षण व्यवस्थार्थ/अशैक्षणिक कार्य पर लगे शिक्षक/कार्मिकों को मूल विभाग में कार्य करने हेतु कार्य मुक्त किये जाने के निर्देशों की कठोरता से पालना करवाने बाबत, दिसम्बर, 11(23) ☐ शिक्षक समानीकरण शिक्षा से सम्बन्धित चर्चा/सुझावों जन-प्रतिनिधियों की राय, मार्च, 12(23-24)

लेखा

पेंशन एवं ग्रेच्युटी : राजस्थान लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम, 2011 के प्रावधानों के अन्तर्गत राजकीय सेवा से सेवानिवृत्त अधिकारियों/कर्मचारियों के पेंशन प्रकरणों/समस्याओं के निराकरण के सम्बन्ध में, दिसम्बर, 11(32) ☐ नवीन पेंशन योजना-आहरण वितरण अधिकारियों को निर्देश, मार्च 12(25) ☐ नवीन पेन्शन योजना के अन्तर्गत पंचायत समिति/जिला परिषद से प्राप्त राशि, मार्च, 12(25-26) ☐ राजकीय सेवा से निवृत्त अधिकारियों/कर्मचारियों के पेन्शन प्रकरणों/समस्याओं के निराकरण के सम्बन्ध में, मार्च, 12(26) ☐ नवीन पेंशन योजना - राज्य अधिकारियों/कर्मचारियों के सह अंशदान/राजकीय अंशदान के सम्बन्ध में, अप्रैल, 11(23) **शिक्षण शुल्क एवं छात्रकोष :** राजकीय विद्यालयों में कक्षा 1 से 8 तक के विद्यार्थियों की सभी प्रकार की शुल्कों से मुक्ति, जनवरी, 12(41)। **छात्रवृत्ति/प्रोत्साहन :** अल्पसंख्यक समुदाय के छात्र/छात्राओं के लिए पूर्व मैट्रिक छात्रवृत्ति-नूतन एवं नवीनीकरण सत्र 2011-12 हेतु, जुलाई, 11(25-26) ☐ बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन-ट्रान्सपोर्ट वाउचर योजना - दिशा-निर्देश, जुलाई, 11 (32-33) ☐ पूर्व मैट्रिक अ.जा./अ.ज.जा. छात्रवृत्ति हेतु राशि के प्रस्ताव भिजवाने बाबत, जुलाई (34) ☐ छात्रवृत्तियाँ सम्बन्धी आलेख, शिविरा जुलाई 11 में संशोधन, अगस्त 11(30) ☐ आपकी बेटी योजना के अन्तर्गत आवेदन पत्र भिजवाने हेतु, सितम्बर 11(27-28) ☐ देवनारायण छात्रा साइकिल वितरण योजना, सितम्बर 11 (29)। **राजकीय बीमा/दुर्घटना बीमा/सा.प्रा.निधि :** कक्षा 9 से 12 तक के विद्यार्थियों से विद्यार्थी दुर्घटना बीमा की प्रीमियम राशि के सम्बन्ध में, सितम्बर 11 (23)। **राष्ट्रीय शिक्षक कल्याण कोष एवं हितकारी निधि :** हितकारी निधि का वर्ष 2011-12 का वार्षिक अंशदान राज्य कर्मचारियों से अनिवार्य रूप से वसूल कर भिजवाने बाबत फरवरी 12(23) ☐ हितकारी निधि कल्याणकारी योजना में वर्ष 2011-12 के लिए वार्षिक अंशदान की राशि एवं अन्य योजनाओं बाबत, फरवरी 12(23-24)। **साइकिल वितरण योजना :** साइकिलों का अंशदान राजकोष में जमा करवाएँ, अगस्त 11(23) ☐ बालिकाओं से साइकिल वापिस नहीं लेने के सम्बन्ध में, अप्रैल, 12 (27)। **बजट-नियंत्रण तथा मितव्ययता :** आई.एफ.एम.एस. के अन्तर्गत ऑन लाइन बजट आवंटन एवं विभागीय वेबसाईट पर बजट आवंटन/अपलोड, जुलाई, 11 (33)। **लेखा सम्बन्धी अन्य नियम :** बेशी/अप्रचलित/अनुपयोगी सामान एवं अभिलेख के निस्तारण से प्राप्त आय राजकोष में जमा कराने हेतु लेखा मद, अगस्त, 11 (23-24) ☐ अनुपयोगी सामग्री के निस्तारण के सम्बन्ध में शिथिलन, अगस्त, 11(24-25) ☐ विभागीय अधिकारियों के नाम बैंक खाते न खोले जाएँ, सितम्बर, 11(24) ☐ बेशी/अप्रचलित/अनुपयोगी सामान एवं अभिलेख निस्तारण, अक्टूबर, 11(29) ☐ नवीन पदों का सृजन, जनवरी, 12(56) ☐ शिक्षा के अधिकार कानून के तहत नवीन सृजित पदों के अधिकारियों का कार्य निर्धारण, जनवरी, 12 (56) ☐ बेशी/अनुपयोगी/अप्रचलित भण्डार सामग्री का निस्तारण तिथि बढ़ाई, मई-जून, 12(26)

शैक्षिक

प्रवेश : शत-प्रतिशत नामांकन एवं ठहराव सुनिश्चित करने के क्रम में, जुलाई 11 (पृ. 7) ☐ नामांकन अभियान 2011-12 के सम्बन्ध में, जुलाई 11(25) ☐ निःशुल्क एवं बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम के तहत कक्षा 6 से 8 में प्रवेश बाबत, सितम्बर, 11 (23-24) ☐ निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के प्रावधानों के अनुसार समस्त गैर-सरकारी संस्थाओं में प्रवेश प्रक्रिया का निर्धारण करने बाबत, दिसम्बर 11 (24-30) ☐ प्रवेशोत्सव कार्यक्रम 2012-13 के निर्देश, मई-जून, 12 (23-25) कक्षा 1 से 8 के परीक्षा परिणाम, मई-जून 12 (25)। **निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार :** निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 - भारत सरकार द्वारा जारी अधिसूचना दिनांक 16.02.10, जनवरी 12 (23-31) ☐ राजस्थान निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार नियम 2011- राजस्थान सरकार द्वारा जारी अधिसूचना दिनांक 29.3.11, जनवरी 12 (31-38) ☐ निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम 2009 - बच्चों के प्रवेश सम्बन्धी दिशा निर्देश, जनवरी 12 (40-41) ☐ बालक-बालिकाओं को आयु के अनुरूप कक्षा में प्रवेश देने बाबत, जनवरी 12 (41-42) ☐ निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 : दुर्बल वर्ग और असुविधाग्रस्त समूह के बालकों के प्रवेश सम्बन्धी निर्देश, जनवरी 12 (43) ☐ असुविधाग्रस्त समूह के बालक-बालिकाओंके निर्धारण की अधिसूचना, जनवरी 12 (43-44) ☐ कमजोर वर्ग के बालक-बालिकाओं के निर्धारण की अधिसूचना, जनवरी 12 (44) ☐ निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 एवं राजस्थान निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार, नियम 2011 - परिवेदना निस्तारण दिशानिर्देश, जनवरी, 12 (45-48) ☐ विकलांगता से ग्रसित बालक-बालिकाओं को प्रवेश जाने के सम्बन्ध में, जनवरी 12 (48) ☐ अल्पसंख्यक संस्थाओं हेतु निःशुल्क एवं

अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 की धारा 35(1) के लिए भारत सरकार की गाइड लाइन, जनवरी 12(48-49) ☐ निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के प्रावधानों के अनुसार गैर सरकारी शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश प्रक्रिया का निर्धारण पत्र दिनांक 3.11.2011, जनवरी 12 (49-55) ☐ निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 एवं राजस्थान निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का नियम, 2011 के प्रावधानों के अन्तर्गत विद्यालयों के लिए दिशा-निर्देश, जनवरी, 12 (56-62), निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा नियम : निजी शिक्षण संस्थाओं के लिए विशेष सूचना, जनवरी, 12 (62) । **विद्यालय पंचांग** : शैक्षिक सत्र 2011-12 की अर्द्धवार्षिक परीक्षा की तिथियों में आंशिक परिवर्तन दिसम्बर, 11 (31) ☐ शिविरा पंचांग 2011-12 में संशोधन, फरवरी 12 (31) ☐ शिविरा पंचांग 2011-12 में आंशिक संशोधन, मार्च, 2012 (24)। **सांस्कृतिक सेवावाहिनी योजना** : विद्यालय स्तर पर पुनः प्रारम्भ, जुलाई, 11 (26 व 28) ☐ सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र (सीसीआरटी), नई दिल्ली द्वारा आयोज्य प्रशिक्षणों के लिए प्रकोष्ठ का गठन, जुलाई 11 (31-32) ☐ सांस्कृतिक धरोहर सेवावाहिनी योजना के अन्तर्गत गतिविधियों का आयोजन, सितम्बर, 11 (29-30)। **परीक्षा, कक्षोन्नति** : शांति कुंज हरिद्वार द्वारा आयोजित भारतीय संस्कृति ज्ञान परीक्षा, 2011 में सहयोग प्रदान करने हेतु, सितम्बर 11 (24-25) ☐ कक्षा 10 व 12 की अंक विभाजन योजना, सितम्बर 11 (25-27) ☐ कक्षा 12 की अंक विभाजन योजना, अक्टूबर 11 (27-28) ☐ नियमित परीक्षार्थियों के परीक्षा आवेदन पत्र ऑन लाइन भरने का व्यय छात्र निधि से, अक्टूबर 11 (29) ☐ कक्षा 8 के नवीन पाठ्यक्रम के आधार पर परीक्षावार पाठ्यक्रम एवं अंक विभाजन, अक्टूबर, 11 (23-30) ☐ कक्षा 1 से 8 की अर्द्धवार्षिक एवं वार्षिक परीक्षाएँ आयोजित करने के सम्बन्ध में, अक्टूबर 11 (31) ☐ कक्षा 8वीं की अर्द्धवार्षिक एवं वार्षिक परीक्षाएँ आयोजित करने के सम्बन्ध में, अक्टूबर 11 (31) ☐ कक्षा 8वीं बोर्ड पैटर्न परीक्षा समाप्त, नवम्बर 12(39) ☐ कक्षा 8वीं की अर्द्धवार्षिक व वार्षिक परीक्षाएँ जिला सामान्य परीक्षा योजनान्तर्गत आयोजित करने बाबत, जनवरी 12 (39) ☐ परीक्षा एवं कक्षोन्नति नियम 2011-12, अप्रैल, 12 (24-27)। **मान्यता** : गैर सरकारी प्राथमिक विद्यालयों की मान्यता अनिवार्य, जुलाई, 11 (23) - गैर सरकारी विद्यालयों द्वारा नियम विरुद्ध कक्षा 6 के साथ कक्षा 7 व 8 का संचालन, अक्टूबर 11(28-29) ☐ राज्य में गैर-सरकारी प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों को मान्यता जनवरी, 12 (44-45) ☐ गैर सरकारी शिक्षण संस्थाओं को शैक्षणिक सत्र 2012-13 में प्राथमिक विद्यालय की मान्यता एवं प्राथमिक से उच्च प्राथमिक स्तर हेतु दी जाने वाली मान्यता/क्रमोन्नति के सम्बन्ध में, फरवरी 12 (25-27) ☐ निजी शिक्षण संस्थाओं की मान्यता/क्रमोन्नति आवेदन की अन्तिम तिथि बढ़ाने के सम्बन्ध में, मई-जून, 12(26) । **प्रति सप्ताह कालांश निर्धारण** : कक्षा आठवीं के लिए विषयवार प्रति सप्ताह कालांश निर्धारण, जुलाई, 11(33-34) ☐ माध्यमिक कक्षाओं में कालांश व्यवस्था, अगस्त, 11(31) । **शैक्षिक योजना एवं कार्य/शैक्षिक सह शैक्षिक कार्यक्रम** : कक्षा शिक्षण को रुचिकर बनाने हेतु दिशा-निर्देश, अगस्त, 11(29) ☐ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के सम्बन्ध में, सितम्बर 11(28) ☐ प्राथमिक/उ.प्रा. विद्यालयों में विद्यालय प्रबन्ध समिति का गठन पत्र दिनांक 28.5.10 एवं 20.7.2010, जनवरी, 12 (38-39) ☐ विद्यालय विकास एवं प्रबन्ध समिति के स्थान पर विद्यालय प्रबन्ध समिति नाम किये जाने की आज्ञा, जनवरी, 12(39) । **पुस्तकें/पुस्तकालय** : राजकीय प्रा. व उ.प्रा.वि. में पुस्तकालयों की स्थापना, अगस्त, 11(27-29) ☐ तृतीय भाषा की समस्त पुस्तकें शैक्षिक सत्र 2011-12 में यथावत लागू, सितम्बर, 11(23) ☐ राजकीय विद्यालयों (प्रा.वि./उ.प्रा.वि.) में कार्यपुस्तिकाओं के प्रभावी उपयोग एवं मॉनिटरिंग के क्रम में, दिसम्बर 11(33) ☐ कक्षा 1 से 8 तक में एन.सी.ई.आर.टी. की उर्दू विषय की पाठ्यपुस्तकों को लागू करने के सम्बन्ध में, फरवरी 12(25) ☐ शिक्षक दिवस प्रकाशन-2012 - रचनाएँ आमंत्रित अप्रैल, 12(24) ☐ अंग्रेजी विषय की नवीन पाठ्यपुस्तक लागू करने बाबत, अप्रैल 12(27) । **खेलकूद प्रतियोगिताएँ** : क्रीड़ा प्रतियोगिता नियमावली में नियम का विलोपन, अगस्त, 11(23) ☐ 39वीं राज्य स्तरीय शिक्षा विभागीय मंत्रालयिक कर्मचारी खेलकूद एवं सांस्कृतिक प्रतियोगिता सत्र 2011-12, दिसम्बर 11, (31) ☐ स्वीकृति व सूचना दिये बगैर शिविर स्थल छोड़ने पर खिलाड़ियों (हैण्डबाल व तीरंदाजी) व विद्यालयों पर प्रतिबंध, मार्च, 12(23) । **विशेष शिक्षण शिविर/व्यवस्थाः** प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए विशेष शिक्षण शिविरों का आयोजन, अक्टूबर 11(29-30) ☐ प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए विशेष शिक्षण व्यवस्था, अक्टूबर, 11(30) । **बालकों को शारीरिक दण्ड/मानसिक उत्पीड़न** : बालकों को शारीरिक दण्ड और मानसिक उत्पीड़न पर प्रतिबन्ध जनवरी, 12(42) ☐ समेकित बाल संरक्षण योजना-दिशानिर्देश जनवरी, 12(43) । **बालकों को कक्षा में रोकने/निष्कासित करने** : किसी भी बालक को कक्षा में नहीं रोकने तथा निष्कासित नहीं किये जाने सम्बन्धी निर्देश, जनवरी, 12(41)

सामान्य

जनगणना : सामाजिक आर्थिक एवं जाति आधारित जनगणना - 2011 के कार्य हेतु नियुक्त कर्मचारियों/अधिकारियों के सम्बन्ध में, फरवरी, 12(23) । **पुरस्कार** : सर्वश्रेष्ठ राजकीय विद्यालय पुरस्कार, 2011, अगस्त, 11 (25-27) ☐ राज्य स्तरीय पुरस्कार प्राप्त शिक्षकों को विभिन्न अकादमिक कमेटियों में प्रतिनिधित्व, अप्रैल, 12 (23) ☐ राज्यस्तरीय भामाशाह सम्मान समारोह 2012 - दिशानिर्देश, मई-जून, 12 (26) । **भवन/विद्यालय भवन** : शाला भवन मरम्मत हेतु प्रस्ताव भिजवाने बाबत, जुलाई, 11(24) ☐ राजकीय विद्यालयों की भूमि/भवन के उपयोग से प्राप्त राशि राजकोष में जमा कराएँ, जुलाई, 11(33) ☐ राजकीय विद्यालयों में विद्युत कनेक्शन/विद्युतीकरण, सितम्बर, 11(23) ☐ प्रतिदिन विद्यालय बन्द होने पर सभी कक्षा-कक्षों की जाँच बाबत, अक्टूबर 11(28) ☐ गैर सरकारी विद्यालयों के भवन/नाम/वर्ग/माध्यम परिवर्तन की स्वीकृति के सम्बन्ध में, मार्च, 11(26-27) । **माननीय न्यायालय** : न्यायिक प्रकरणों में तथ्यात्मक प्रतिवेदन यथा समय पेश हों, जुलाई, 11(23) । **राजकीय अवकाश/शोक** : राजकीय अवकाश/शोक-दिशानिर्देश, अगस्त, 11(23) ☐ अतिविशिष्ट व्यक्तियों के निधन पर राजकीय अवकाश/शोक दिशा निर्देश 4 मई, 2011 - शुद्धि पत्र, अगस्त, 11(23) ☐ कलैण्डर वर्ष 2012 में सार्वजनिक अवकाश/ऐच्छिक अवकाश की सूची, फरवरी, 12(30) । **सूचना का अधिकार** : माध्यमिक शिक्षा आयुक्तालय के ग्रुप अधिकारी सहायक लोक सूचना अधिकारी पदाभिहित, अगस्त, 11(30) ☐ लोक प्राधिकरणों की सुविधा के लिए पूछी जाने वाले समान प्रश्नों के उत्तर/मार्गदर्शन, फरवरी 12(27-29) ☐ अधिनियम के महत्वपूर्ण प्रावधानों की पूर्ण पालना की ओर ध्यानाकर्षण, फरवरी 12(29) ☐ सूचना का अधिकार अधिनियम-2005 की धारा 7 व 19 की ओर ध्यानाकर्षण, फरवरी, 12(29) ☐ नियमों में आवश्यक परिवर्तन हेतु सुझाव, फरवरी, 12 (29-30)

अन्य

अध्यापकों एवं कर्मचारियों द्वारा विद्यालय में शराब पीने/पीकर आने एवं अभद्र व्यवहार की रोकथाम बाबत, जुलाई, 11(23-24) ☐ पेयजल समस्या का समाधान - जल संरक्षण, जुलाई, 11(24) ☐ नोडल प्रधानाध्यापक का कार्यभार कम करने बाबत, जुलाई, 11(24) ☐ ब्लॉक प्रारम्भिक शिक्षा अधिकारियों के दस नये कार्यालय स्वीकृत, जुलाई, 11(34) ☐ प्राथमिक कक्षाओं के द्वारा बाल पेन के स्थान पर पेन्सिल का उपयोग करने के आदेश प्रसारित कराने के क्रम में, फरवरी, 12(25) ☐ डॉ. आर.के. भवन, बीकानेर में विभागीय कार्मिकों के ठहरने की व्यवस्था के सम्बन्ध में, फरवरी, 12(31) ☐ राष्ट्रीय भारतीय सैन्य महाविद्यालय, देहरादून की प्रवेश योग्यता परीक्षा, मार्च, 12(24)

प्राचीन भारतीय साहित्य में 'स्वाध्याय'

❑ पुना राम

***स्वा**ध्यायन्मा प्रमदः तथा स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्* – अर्थात् प्रमादवश स्वाध्याय का त्याग न करें। उपरोक्त तैत्तिरीयोपनिषद की पंक्तियाँ प्रायः सभी ने अवश्य सुनी या पढ़ी होगी परन्तु फिर भी अधिकतर लोग प्रमादवश (आलस्य से) स्वाध्याय नहीं कर पाते हैं।

सम्पूर्ण प्राणी जगत् में मानव सबसे बुद्धिमान प्राणी हैं। संसार में बुद्धि का शासन चलता है। किसी ने ठीक ही लिखा है। 'It is the human intellect that governs the physical power' मानव को बदलना है तो उसकी बुद्धि में परिवर्तन लाना चाहिए। इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्रत्येक क्रांति से पहले वैचारिक क्रांति का आगमन होता है। इसलिए मानव की बुद्धि को स्वच्छ रखना आवश्यक है। **जिस प्रकार शारीरिक स्वच्छता के लिए नित्य नहाना आवश्यक है उसी प्रकार बुद्धि की स्वच्छता के लिए नित्य स्वाध्याय आवश्यक है।**

स्वाध्याय का शाब्दिक अर्थ सामान्यतः स्वप्रेरणा से अध्ययन करना लिया जाता है अर्थात् किसी नवीन विषय के बारे में स्वयं अध्ययन करना और अपनी जानकारियों में वृद्धि करना है। प्राचीन भारतीय साहित्य में स्वाध्याय का अर्थ स्व का अध्ययन (आत्म अध्ययन) करने से लिया जाता है अर्थात् प्राचीन भारतीय साहित्य में स्वाध्याय का उद्देश्य व्यक्ति की भौतिक उन्नति के साथ-साथ आध्यात्मिक उन्नति करना है।

शौचसन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि नियमाः। **(योग सूत्र)**

योग सूत्र की उपरोक्त पंक्ति में व्यक्ति की सर्वांगीण उन्नति के लिए शौच (शारीरिक पवित्रता), संतोष (हानि व लाभ में समान व्यवहार), तप (कष्ट सेवन), स्वाध्याय एवं ईश्वर प्रणिधान (ईश्वर भक्ति) इन पाँचों नियमों का पालन आवश्यक माना है।

स्वाध्याय क्यों करना चाहिए एवं स्वाध्याय करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए? इस हेतु तैत्तिरीयोपनिषद में निम्नलिखित पंक्तियाँ प्राप्त होती हैं।

ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च।
अर्थ– ऋतं (आचरण) से स्वाध्याय करें।
सत्यं च स्वाध्याय प्रवचने च।
अर्थ–सत्य (सद्साहित्य) का स्वाध्याय करें।

दमश्च स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– बुरे आचरण का दमन कर स्वाध्याय करें।

शमश्च स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– मन की एकाग्रता से स्वाध्याय करें।

अग्नयश्च स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– अग्नि को जानकर अर्थात् विज्ञान का स्वाध्याय करें।

अग्निहोत्रंच स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– अग्निहोत्र (यज्ञ) करते हुए स्वाध्याय करें अर्थात् स्वाध्याय हेतु वातावरण पवित्र होना चाहिए।

अतिथश्च स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– अतिथि सेवा करते हुए स्वाध्याय करें अर्थात् स्वाध्याय में अपने सामाजिक कर्त्तव्य की अनदेखी न करें।

मानुषं च स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– मानवीय व्यवहारों को ध्यान में रखते हुए स्वाध्याय करें।

प्रजा च स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– प्रजा धर्म का पालन करते हुए स्वाध्याय करें।

प्रजनश्च स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए स्वाध्याय करें।

प्रजातिश्च स्वाध्याय प्रवचने च। **अर्थ**– प्रजाति (समाज) के लिए स्वाध्याय करें।

उपरोक्त वचन तैत्तिरीयोपनिषद के हैं। तैत्तिरीयोपनिषद में इस प्रकार उल्लेख स्वाध्याय के मानव जीवन में महत्व की ओर संकेत करता है।

ब्राह्मण (श्रेष्ठ मनुष्य) शरीर के निर्माण के संदर्भ में मनु स्मृति में निम्नलिखित श्लोक प्राप्त होता है।

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः॥
(मनु स्मृति)

अर्थ– स्वाध्याय, व्रत, होम, त्रैविद्येन (सत्य, विद्या का दान), इज्यया (विद्या ग्रहण), सुतै (सुसंतानोत्पत्ति), तथा महायज्ञैः (पाँचों प्रकार के यज्ञ कर्म) आदि से ब्राह्मण (श्रेष्ठ मनुष्य) का शरीर बनता है।

द्रव्यज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयःसंशितव्रताः॥
(श्रीमद् भगवद् गीता)

उपरोक्त श्रीमद्भगवद्गीता के चतुर्थ अध्याय के अट्ठाइसवें श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि कई पुरुष द्रव्य सम्बन्धी यज्ञ करने वाले, कई तपस्या रूप यज्ञ तथा कई योग रूप यज्ञ करने वाले होते हैं परन्तु कई पुरुष अहिंसादि तीक्ष्ण व्रतों से युक्त यत्नशील पुरुष स्वाध्याय रूपी ज्ञान यज्ञ करने वाले होते हैं। इस श्लोक में स्वाध्याय कर्म को एक श्रेष्ठ यज्ञ की भाँति माना गया है।

अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥
(श्रीमद्भगवद् गीता)

उपरोक्त श्रीमद्भगवद्गीता के सोलहवें अध्याय के प्रथम श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण ने सरल अन्तःकरण वाले व्यक्ति के गुणों का उल्लेख किया गया है। जिसमें स्वाध्याय को भी एक आवश्यक गुण बताया है।

पूर्वोक्त प्राचीन भारतीय ग्रंथों में वर्णित उक्तियों से हमारे जीवन में स्वाध्याय की आवश्यकता का महत्व ज्ञात होता है जिस प्रकार एक निर्धन पुरुष धन का दान नहीं कर सकता है उसी प्रकार अज्ञानी व्यक्ति से विद्या दान नहीं किया जा सकता है। एक शिक्षक विद्या दान उसी समय कर पाएगा जब वह स्वयं ज्ञानी होगा और ज्ञान स्वाध्याय से प्राप्त होता है।

–अध्यापक, रा.उ.प्रा.वि., रोहिड़ा (सिरोही)

स्वाध्याय आज की आवश्यकता

❑ रूपनारायण काबरा

स्वाध्याय सभ्यता के विकास की आधारशिला है। पढ़ने की आदत व्यक्ति के स्वयं के विकास तथा उसके सामाजिक विकास का सबसे शक्तिशाली एवं स्थायी साधन है। नियमित एवं व्यवस्थित अध्ययन बुद्धि को प्रखर करता है, संवेगों को परिष्कृत करता है, अभिरुचियों को उजागर करता है और व्यक्ति के समूचे व्यक्तित्व को प्रभावी करता है और तब वह अपने सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन में भी सक्रिय भागीदारी निभाने को तैयार हो जाता है। स्वाध्याय विभिन्न सामाजिक वर्गों को समान अनुभवों के आधार पर एकीकृत करता है। खेद इस बात का है कि हमारे विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति विकसित करने की दिशा में वस्तुतः कोई प्रयत्न नहीं किया जाता है। सारी शिक्षा निर्धारित पाठ्यक्रम के इर्द-गिर्द घूमती रहती है और विद्यार्थी उस घेरे के बाहर झाँकने की आवश्यकता ही महसूस नहीं करता।

अध्ययन-कौशल विकसित करने की प्रक्रिया या तो लगभग है ही नहीं या फिर दोषपूर्ण एवं अप्रभावी है। इस कौशल के अभाव में ही तो छात्र अपनी पाठ्यपुस्तक को भी न पूरी पढ़ता है न समझ पाता है। स्वयं समझने की उसकी क्षमता का तथा बहुआयामी अध्ययन की प्रकृति का विकास नहीं हो पाता है। वार्षिक परीक्षाएँ ही हमारी शिक्षा पद्धति की प्राणबिन्दु बनी हुई हैं। इसीलिए तो छात्र 'टेक्स्ट' नहीं पढ़कर बाजारन नोट्स पढ़ता है, परीक्षा में नकल का सहारा लेता है और इसी प्रवृत्ति ने उसकी पढ़ने की दिलचस्पी को नष्टप्राय कर दिया है और वह महान लेखकों की पुस्तकों के अनुभवों से वंचित रह जाता है। आजकल टीवी, इन्टरनेट, लैपटॉप एवं कम्प्यूटर पर व्यस्त बालक पुस्तकों की ओर कम ही आकर्षित होते हैं।

हमारे विद्यालयों के पुस्तकालय सक्षम नहीं हैं। न वहाँ उत्तम पुस्तकें हैं, न पत्र-पत्रिकाएँ हैं और पढ़ने की अर्थात् स्वाध्याय की प्रवृत्ति के निर्देशन-प्रोत्साहन की ओर तो किसी का

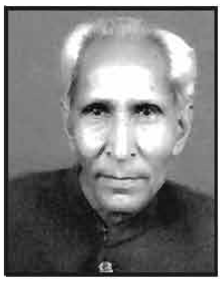

ध्यान ही नहीं है। सामान्यतः पुस्तकें आलमारी में पड़ी सिसकती रहती हैं क्योंकि उनका महत्त्व व उनकी आकांक्षा तो पढ़े जाने में ही है। योग्य और गतिमान, समर्पित पुस्तकालय-प्रभारी कहाँ हैं हमारे विद्यालयों में ! अध्यापक तो कक्षा तक ध्यान दे दें, वही बहुत है। कक्षा के बाहर विद्यार्थी में स्वाध्याय की चेतना जाग्रत की वे सोचते ही नहीं और अधिकांश अध्यापक तो स्वयं ही पढ़ने में रुचि ही नहीं रखते उन्हें तो ट्यूशन से ही फुर्सत नहीं मिलती। वे भला छात्रों को क्या प्रोत्साहन देंगे ! एक बुझा दीपक दूसरे दीपक को क्या प्रज्वलित करेगा ! अभिभावक भी सामान्यतः इस दिशा में निष्क्रिय ही हैं। अधिकांश घरों में बच्चों की किताबों के अतिरिक्त और पुस्तकें ही नहीं होती। ऐसे पुस्तकविहीन घर में स्वाध्याय कैसे चेतन हो सकता है? स्वाध्याय के अभाव में विद्यार्थी गप्पबाजी, फिल्में, टीवी, सस्ता संगीत अथवा घटिया किताबें पढ़ते हैं। इसलिए महान काव्य रचना, नाटक, उपन्यास, जीवनियाँ, आत्मकथाएँ, विज्ञान, दर्शन इत्यादि की ओर उनका ध्यान कहाँ है? वे शिक्षा के इस लक्ष्य से भटके हुए हैं कि शिक्षा का अर्थ है व्यक्ति का स्वाध्याय द्वारा स्वयं सीखने को प्रवृत्त होना।

पढ़ना भी एक सृजनात्मक, ज्ञानात्मक गतिविधि है। आधुनिक संचार एवं सम्प्रेषण साधनों के बावजूद भी स्वाध्याय ज्ञान एवं अनुभव ग्रहण करने का अपरिहार्य साधन है। आज के विद्यार्थी को पाठ्यपुस्तकों से हटकर अन्य क्षेत्रों के अध्ययन की अत्यन्त आवश्यकता है ताकि दृष्टिकोण उदारवादी एवं व्यापक हो सके यदि किसी को अपनी बौद्धिक सक्रियता के शिखर पर रहना है तो उसे अपनी औपचारिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् भी निरन्तर पढ़ते रहना होगा क्योंकि आज ज्ञान के विस्फोट के समक्ष नवीनतम जानकारी से जुड़े रहना होगा। चिकित्सा, शिक्षा एवं विज्ञान के क्षेत्र में तो सतत स्वाध्याय अपरिहार्य है नहीं तो निपुणता की दौड़ में पीछे रहना होगा।

स्वाध्याय की गतिशीलता को विकसित करने का सही और सक्षम माध्यम हमारी शिक्षण संस्थाएँ ही हो सकती हैं। स्वाध्याय का मनोविज्ञान चार बातों पर निर्भर करता है। पहचान, समझ, प्रतिक्रिया और एकीकरण।

अध्ययन लिखित प्रतीकों के देखने पहचानने एवं उनके शाब्दिक अर्थ जानने से प्रारम्भ होता है और यह सब व्यवस्थित अध्ययन अभ्यास से ही संभव है। समझने से तात्पर्य है शब्द, ज्ञान, विवेचन एवं शब्दों को अर्थपूर्ण ढंग से गूँथने की क्षमता। अच्छी-अच्छी पुस्तकें देकर अध्यापक एवं अभिभावक बच्चों की स्वाध्याय प्रवृत्ति को प्रोत्साहित कर सकते हैं तथा पढ़ने से आनन्द, ज्ञान और लाभ की दिशा में अग्रसर हुआ जा सकता है। सबसे सहज तरीका है प्रतियोगिता एवं पुरस्कार तथा पढ़ने योग्य पुस्तकों की सहज सुलभता।

'पाठक-मंच', 'पुस्तक चर्चा', 'पुस्तक-विमर्श', क्लबों की स्थापना से पढ़ी गई पुस्तकों की चर्चा की जा सकती है। नेशनल बुक ट्रस्ट का पाठक मंच बुलेटिन तथा सस्ती पुस्तकें स्वाध्याय को आकर्षित कर सकती हैं। वाद-विवाद एवं भाषण प्रतियोगिता सामान्य ज्ञान तथा प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिताएँ भी स्वाध्याय वृद्धि का साधन हो सकती हैं। स्वाध्याय प्रवृत्ति जगाने के लिए दिलचस्प पत्र-पत्रिकाओं का ही सहारा लिया जा सकता है।

अध्यापक चाहे तो अपनी सूझबूझ से अध्ययन-अभिरुचि को जगा सकते हैं। अध्ययन ही छात्र की तीसरी आँख है जो उसे विशेष ज्ञान प्रदान करती है। काश, अध्यापक-अभिभावक स्वाध्याय की अहमियत को पहचानें और छात्रों के बौद्धिक विकास में अपने दायित्व का निर्वहन करें।

–ए-438, किशोर कुटीर, वैशाली नगर,
जयपुर-302021

स्वाध्याय ज्ञान संपादन की कुंजी है

❑ द्वारकेश भारद्वाज

यद्यपि प्रारम्भिक शिक्षा व ज्ञानार्जन के लिए अटूट अभिलाषा की जड़ जमाने व अभिरुचि जाग्रत करने के लिए शिक्षण संस्था की औपचारिकता निर्वाह की अनिवार्यता अवश्य है जिसमें शिक्षक शिक्षार्थी को ज्ञानार्जन के सोपानों पर अग्रेसित करता है और मानसिक धरातल पर खड़ा करता है। ज्ञानार्जन के लिए शिक्षण संस्था की औपचारिकता तो निमित्त मात्र है। वास्तव में विचारशीलता व सतत ज्ञानार्जन की वैतरणी तो स्वाध्याय ही है इसे स्वअर्जित ज्ञान के लिए नींव का प्रस्तर कहना उचित होगा। बिना शिक्षक व कक्षा शिक्षण के उपलब्ध संसाधनों यथा– अवलोकन, पठन-पाठन, श्रवण, चर्चा-परिचर्चा, मनन-चिन्तन की मान्य विधायें ही स्वाध्याय की मान्य प्रणाली व पद्धति हैं। स्वाध्याय के बिना मानसिक विकास नहीं हो सकता क्योंकि स्वाध्याय ही विचार मंथन व विचारशीलता की नींव जो है। इसीलिए तो बुद्धिजीवियों के लिए स्वाध्याय को विचारशीलता का प्रमाण माना गया है क्योंकि स्वाध्याय के बिना वैचारिकी को स्फूर्ति नहीं मिलती और न विचारों व प्राप्त ज्ञान का परिमार्जन व परिशोधन ही होता। स्वाध्याय ज्ञात को अज्ञात से जोड़ता है जो शोधवृत्ति को विकसित करता है।

स्वाध्याय ही एक ऐसी विधा है जो नूतन व विकसित होते ज्ञान, प्रज्ञान व विज्ञान को गहराई से सीखने, आत्मसात करने व तार्किक रूप से ग्रहण करने की ओर अग्रसर करता है। इससे प्राप्त ज्ञान को और परिमार्जित करने की तार्किक क्षमता पैदा होती है। स्वाध्याय के लिए संगृहीत पुस्तकों की आलमारी विद्यापीठ होती है। उन्हीं संगृहीत पुस्तकों व सन्दर्भ ग्रंथों के पृष्ठ-दर-पृष्ठ को उलट-पुलट कर ज्ञान की कसौटी पर कसा जाता है। यह कहना उचित होगा कि संसार के महान् पुरुषों के लिए स्वाध्याय वरदान साबित हुआ। बुद्धिजीवियों के लिए स्वाध्याय का पान अमृत समान है। इससे आत्म विकास के साथ ज्ञान संपादन की ऊर्जा भी प्राप्त होती है। स्वाध्याय ज्ञान प्राप्ति का सशक्त स्रोत व साधन है। लेकिन पठनीय सामग्री की व्यापकता होने पर भी स्वाध्यायियों की कमी होती जाना ज्ञान प्रसार में ठहराव लाने में सफल हो रहा लगता है।

नित नये ज्ञान की बढ़ोत्तरी, उसे संश्लेषण, विश्लेषण व तार्किक कसौटी पर कसकर खरापन व विश्वसनीयता की परख कर पूर्व अर्जित ज्ञान के साथ समावेश करने की क्षमता स्वाध्याय से ही प्राप्त होती है। स्वाध्यायी व्यक्ति ज्ञात ज्ञान से अज्ञात ज्ञानार्जन की ओर उन्मुख रहता है जो कुछ ज्ञात है उस पर चिंतन, मनन व विवेचन-विश्लेषण कर पुरातन के साथ नूतन के समावेश करने की क्षमता स्वाध्याय से ही अर्जित होती है। स्वाध्याय एक दिन या एक प्रहर का अभ्यास नहीं है यह तो निरन्तर चलती रहने वाली प्रक्रिया है। स्वाध्याय एक प्रकार का व्यसन है जिसे लग गया वह मृत्युपर्यन्त तक साथ रहता है।

स्वाध्याय से प्राप्त कठिन व अस्पष्ट ज्ञान का संश्लेषण व विश्लेषण विषयवस्तु के निष्णान्त व अधिकारी विद्वानों के साथ चर्चा-परिचर्चा के अलावा सोद्देश्य गठित सारस्वत परिषदों के माध्यम से भी किया जा सकता है। उपलब्ध व मत विभिन्नता वाले स्थलों के स्पष्टीकरण व निर्णय के लिए शास्त्रार्थ के सास्वत अनुष्ठानों की भी सक्रियता रही है। जो आज भी सेमिनार, पत्रवाचन के रूप में दृष्टव्य है। आज की सेमिनार व विचारगोष्ठियाँ पूर्व प्रभावी सास्वत अनुष्ठानों का ही एक रूप है। पढ़ने की समझ उत्पन्न हो जाने और भाव सामग्री का आत्मीकरण हो जाने से स्वाध्यायी को पठन का पूरा लाभ मिल जाता है क्योंकि स्वाध्यायी पठन मनन से जो भी ग्रहण करता है उसका उसकी जीवन शैली में भी व्यावहारिक प्रभाव होता है, जो प्रायोगिक व प्रायोजित कर्म है।

मनुस्मृति में कहा है कि न पढ़ने वालों से वे श्रेष्ठ हैं जो पढ़ते हैं। पढ़ने वालों से वे श्रेष्ठ हैं जो कुछ उन्होंने पढ़ा है उसका स्मरण-मनन करते हैं। साथ ही स्मरण-मनन करने वालों से वे श्रेष्ठ हैं जो कुछ उन्होंने पढ़ा है, उसका अभिप्राय समझते हैं। साथ ही उनसे भी वे श्रेष्ठ हैं जो उसके अनुकूल आचरण करते हैं। सद्साहित्य के पठन से आनन्दानुभूति के साथ-साथ आत्म निरीक्षण भी सहज ही हो जाता है और व्यक्ति विशेष भटकाव से विरक्त हो स्वप्रेरणा से सम्यक मार्ग पर अग्रसर होता है। स्वाध्याय समालोचना व समीक्षा की मानसिक ऊर्जादायक भी है। स्वाध्याय उपलब्ध अवकाश का सदुपयोग है। वरिष्ठ नागरिकों के लिए यह उत्तम कर्म है जिससे उन्हें विपरीत परिस्थितियों में भी मानसिक द्वन्द्व से मुक्ति मिलती है और वे समय के सार्थक उपयोग में संलग्न रहते हैं।

श्रेष्ठ स्वाध्यायी शब्दकोश के धनी होने के साथ स्वाध्याय की निरन्तरता बनाये रखने के अभ्यस्त भी होते हैं। उनमें जहाँ लिखित अभिव्यक्ति की कुशलता होती है वहीं उनमें मौलिक उद्भावनाओं की बहुमुखी प्रतिभा भी होती है। संश्लेषण-विश्लेषण के क्षमतावान होने के कारण वाणी का संयमी होते हुए भी वाचन में भी पारंगतता के साथ विवेकशील टिप्पणीकार भी होते हैं। स्वाध्यायी की विचार गहनता के कारण तार्किक बुद्धि भी प्रखर होती है एवं गम्भीर मतिमान भी होते हैं। सारग्रहण की क्षमता के साथ वैचारिक क्रमबद्धता व सुसम्बन्धता का गुण भी होता है।

स्वाध्यायी मनीषियों में उद्देश्यपूर्ण पठन की लगन व ललक की इच्छाशक्ति के साथ जिज्ञासावृत्ति भी होती है। वे नियमित पठन-पाठन के प्रति सचेष्ट होते हैं जो कालान्तर में सद्साहित्य के पठन व विवेचन व सृजन की अनिवार्यता में परिवर्तित हो जाती है। लेकिन दूरदर्शनी व लैपटॉप विधा ने स्वाध्याय की परिधि को ओछा कर सिकोड़ दिया है। पासबुक्स वनवीक सीरीज, प्रश्नबैंक, कुंजियों के बाजारवाद ने स्वाध्याय की उपयोगिता पर प्रश्न चिह्न लगा दिया है। इससे स्वाध्यायी बुद्धिजीवियों ने भी रैडीमेड पठन-पाठन सामग्री की ओर अपना रुझान मोड़ दिया है। शोधवृत्ति और ज्ञात से अज्ञात की ओर प्रवृत्ति समाप्त होती जा रही है। लगता है इन्टरनेट स्वाध्याय का मूलोच्छेद कर देगा। स्वाध्याय की प्रवृत्ति अंतिम साँसें गिन रही है।

–बी-68, हवेली ज्ञानद्वार, सेठी कॉलोनी, जयपुर

स्वाध्यायान्मा प्रमदः

❑ अमर सिंह पाण्डेय

भारत एक अत्यन्त प्राचीन और ज्ञान-विज्ञान प्रधान देश रहा है। आज भी विश्व स्तर पर उसकी आवाज ध्यानपूर्वक और प्रभविष्णुता से सुनी जाती है। प्रसाद जी ने अपने ऐतिहासिक नाटक 'चंद्रगुप्त' में यूनानी छत्रप की पुत्री और चंद्रगुप्त की रानी बनी कार्नेलिया से 'अरुण यह मधुमय देश हमारा। जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा। ...' गीत गवाकर भारत महिमा का गान कराया है। देश के गौरव महिमा का गायन है यह। हमारे यहाँ व्यक्ति के स्तर पर 'सत्यं वद। धर्मं चर। के साथ एक तीसरा तत्व अपटुडेट रहने के लिए और प्रस्थापित-प्रस्तावित किया गया– 'स्वाध्यायान्माप्रमदं अर्थात् स्वाध्याय से प्रमादमत करो। एक बात यह भी कि शास्त्रों और पाठों की प्रसव-पीड़ा को पाठक तभी समझ सकता है, जब वह स्वाध्याय करे। मानव जीवन की चारुता और सम्पन्नता के लिए अनुभवसिद्ध महापुरुषों ने जो उपदेश दिए उनका स्वाध्याय करके जीवन को तद्वत् बनाना यही तीसरी फलश्रुति 'स्वाध्यायान्मा प्रमद' के रूप में प्रस्फुटित हुई।

एक बात उस सुदूर अतीत में पुस्तकें विरल थीं और साधन सम्पन्न व्यक्ति सुलभ थीं। अतः ज्ञान का विस्तार आश्रम स्तर पर सामूहिक रूप से ही किया जा सकता था इसी को अपने वर्षा-वर्णन में तुलसीदास जी प्रकारांतर से कहते हैं– 'दादुर धुनि चहुँओर सुहाई। वेद पढ़ें जनु बटु समुझाई॥' ज्ञान का पिटारा सामूहिक रूप से आश्रमों में होता था। भारत, चीन और कालांतर में यूरोप में पुस्तक का रूप साधन-सम्पन्न लोगों द्वारा किया गया और लिपि के माध्यम से ज्ञान का प्रसार एक सामान्य प्रक्रिया बन गई। काम बढ़े तो उनके लिए किसी न किसी परीक्षा का भी विधान होने लगा।

लिपि के आविष्कार के साथ ज्ञान का धीरे-धीरे समाजीकरण और सर्वव्यापीकरण होने लगा भारत में पहले अशोक के समय ब्राह्मी लिपि का विस्तार हुआ फलतः अशोक ने अपने शिलालेखों में ब्राह्मीलिपि का उपयोग किया। जहाँ तक 'ब्राह्मी शब्द का सम्बन्ध है तीर्थंकर ऋषभ देव ने अपनी दोनों पुत्रियों ब्राह्मी और सुंदरी को क्रमशः अक्षर ज्ञान और अंक ज्ञान सिखाया, सोलह रतियों (विदुषियों) में ब्राह्मीय नाम है। ब्राह्मी के नाम पर ही लेखन लिपि ब्राह्मी कहलाई।

कुछ भी हो, लिपि के आविष्कार ने मानव जाति की नियति ही बदल दी, ज्ञान सर्वगम्य हो गया वैसे पुस्तकस्थ ज्ञान को बुद्धिस्थ न हो सकने की विसंगति की 'पुस्तकस्था तु या विद्या परहस्तगतं धनम्। कार्यकाले समुत्पन्ने न सा विद्या न तद्धनम्।' की विगर्हणा भी कम नहीं की गई। 'अमर कोष, में सप्तमातार कहकर सात माताओं में प्रथम ब्राह्मी कही गई है (स्वर्ण वर्ण 1.1.16) अंततः ज्ञान पुस्तकस्थ होकर सर्वगम्य हो गया। अमरकोष (2/8) लिपिकर; अक्षरचण, अक्षरचंचु, लेखक नाम आये हैं, अरबी-फारसी में 'कातिब' नाम आता है। लिपि, लिबिशोष के 2 नाम हैं, महेश्वर के मत से लिखित सामग्री के लिए 'लिखितम्' अक्षर-संस्थान, शब्द आये हैं।

जो भी हो लिपि ने मानवजाति की नियति बदल दी। अमेरिका का टाइम्स का 50 पृष्ठ का परिशिष्ट प्रति सप्ताह विश्वस्तर पर प्रसारित होना एक बहुत बड़ी पाठकीय उपलब्धि है।

अँगरेजी में, विश्वस्तरीय भाषा बन जाने के कारण स्वाध्याय के लिए विस्व स्तर पर गुणावगुण के रूप में बहुत मंथन हुआ है, बैकन ने अपने 'एस्सेज' में पुस्तकों का मूल्यांकन करते हुए कहा है– 'समबुक्स आर टु बी टेस्टिड, अदर्स टु बी स्वैलोड (Swallowed) एंड सम फ्यू टु बी च्यूइड ऐंड डाइजेस्टिड' कहकर पाठकों को सावधान किया है यहाँ चखना, निगलना चबाना और पचाना प्रतीकात्मक शब्द हैं, तभी तो ऑस्कर वाइल्ड ने स्पष्ट किया है कि 'देअर इज नो सच थिंग ऐज अ मोरल ऑर एन इम्मोरल बुक बुक्स आर वैल रिटन और बैडली रिटन्।' हिलेअर बेनॉक ने अपने व्यक्तित्व और पुस्तकों का आलंकारिक चित्रण किया है– 'हिज़ सिन्स (Sins) बर स्कारलेट बट हिज़ बुक्स वर रैड (red and read)। मिल्टन का कहना है 'अ गुड बुक इज द प्रेशस लाइफ ब्लड आव् अ मास्टर स्पिरिट एंबांड (embalmed) एंड ट्रेजर्डअप ऑन परपज टु अ लाइफ बियोंड लाइफ।' इस प्रकार पुस्तकें किसी महान् आत्मा का संतति के लिए रक्तदान है जीवन पर जीवन।'

इसीलिए भारतीय मनीषियों ने 'सत्यं वद। धर्मं चर।' के साथ तालमेल बैठाने के लिए, नवीकरण करते रहने के लिए तीसरा सूत्र 'स्वाध्यायान्मा प्रमद' का व्यावहारिक कर्तव्य निधृत करके मानव जाति का, विश्वमानव का उपकार किया था। इसी यज्ञ की समिधा या आहुति होगा निस्संदेह।

व्यावहारिक पद– लेखक का मानना है कि जीवन को जीने के लिए कुछ मानदंड निधृत कर लेने चाहिए। अतः जीवन के कार्यक्रम के लिए खास तौर से विभागीय स्तर पर, विद्यालय स्तर पर समय विभाजक-चक्रजीवी शिक्षक को स्वाध्याय का प्रत्यय भी छात्रों में अवतरण करते रहना चाहिए। क्रियात्मक रूप से, इससे राष्ट्र और समाज के लिए उनका अवदान स्वतः बढ़ जाएगा। लेखक का यह व्यक्तिगत अनुभव है क्योंकि छात्र अपने नागरिक जीवन में शिक्षकों के सद्वृत्तों को अवश्य याद रखते हैं।

लेखक का मानना है कि स्वाध्याय से अपने समाज का विकास होता है। मुल्क की तारीख से जो बेखबर रह जाएगा। आदमियत रबों के रफ्तः-रफ्तः रवर हो जाएगा। मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं है। अंधकार है वहाँ जहाँ साहित्य नहीं है। 'स्वाध्याय' का अभ्यास करने के लिए हमें कुछ नियम और संस्कार विकसित कर लेने चाहिए, यह भी गर्व और गौरव का विषय है, कि संसार की सभी भाषाओं में प्रायः संस्कार और मर्यादा जैसे शब्दों के भाव व्यक्त करने वाले शब्द हैं ही नहीं, यदि कुछ बनाने के प्रयत्न किए गए हैं तो अपूर्ण हैं, कुछ सामान्य नियम हो सकते हैं– 1. दैनिक जीवन में अभ्यास के लिए प्रातः-संध्या जैसे अवसर को सम्पन्न करने के साथ ही स्वाध्याय के लिए भी ग्रंथों और पुस्तकों का पाठ निर्धृत कर लेना चाहिए। शिक्षक इस विषय पर मार्गदर्शन कर सकते हैं किन्तु उन्हें भी अपने नियम बना लेने चाहिए, बात में बल निजी कर्मठता से ही आ सकता है। 2. जीवनशास्त्रों के आधार पर चलता है वैसे सत्य यह भी है कि 'स्वभावतः शास्त्र विद्याया शास्त्र विद्या कनीयसी। शास्त्रेण संरक्षिते राष्ट्रे शास्त्र विद्या प्रवर्तते। किन्तु परात्पर का भी तो कोई नियम है। 3. छात्रों को बताया जाना चाहिए कि स्वाध्याय के लिए विषयों के लिए

समय-तत्व निर्धृत कर लेना चाहिए। ऑफ टेस्टमेंट में कहा गया है– 'To everything there is a season, and a time to every perpose under the heaven ..... III 1-8. 4. समय निर्धारण में भाषा-ज्ञान, शब्द ज्ञान पर तय करना उचित है। कम से कम तीन भाषाएँ तो छात्रों को पढ़नी ही होती हैं आरम्भ में कम शब्दों के तुलनात्मक अर्थ पर एक सूत्रीकरण कर लेना उचित रहेगा। 5. कुछ हल्के-फुल्के ज्ञानात्मक मनोरंजक तथ्यों का संग्रहण भी ठीक रहेगा, हल्का होने के लिए। 6. अर्जित ज्ञान पर अपने अग्रजों, अनुजों से समय-समय पर तुलनात्मक बातचीत करने का समय भी निकालना चाहिए, हल्का वाद-विवाद भी अपेक्षित है। शंकराचार्य जब मंडन मिश्र का घर का पता कुओं पर जल भरने वाली महिलाओं से पूछते हैं तो वे बताती हैं– पिजरों में बंद तोता मैना जहाँ परस्पर तर्क-वितर्क करते हुए पाए जाएँ। (बाहर लटके हुए) उसे ही मंडन पंडित का घर समझें। 7. रात को, अर्जित ज्ञान पर साथियों से बातचीत, तर्क-वितर्क, दोहरान करने का प्रयास भी किया जा सकता है। 8. एक साप्ताहिक, विचार-विमर्श अपने साथियों के साथ भी करें। 9. स्मरणीय तथ्यों और आँकड़ों का संकलन अपनी एक कॉपीबुक में। 10. संदर्भ्य ग्रंथों का स्तरानुसार संग्रहण और अन्वेषण रखना। 11. दिमाग खुला रखें और तर्क, वितर्क, संकलन के लिए सावधानी। 12. पुस्तकों का सम्मान।

नवयुवकों की सुरक्षा की आवश्यकता, राष्ट्र के लिए– यदि निबंध की रूपरेखा की भाषा में बात करें तो किसी भी राष्ट्र का बालपन उसकी प्रस्तावना है। यौवन उसका उत्कर्ष और जरा उसका उपसंहार होता है, यह सामान्य मौसम की जलवायु की बात है, किन्तु यदि जलवायु या मौसम असामान्य हो जाएँ तो राष्ट्र का पर्यावरण-प्रदूषण हो जाता है। लेखक का मानना है कि जिस प्रकार पश्चिमी हवा पर्यावरण की आर्द्रता सोख लेती है, पश्चिमी सभ्यता ने भारत के राष्ट्रीय मौसम की समस्त आर्द्रता अतएव जीवनीशक्ति प्रदूषणग्रस्त कर दी है। राष्ट्र का यौवन कुछ अपवादों के अतिरिक्त गिरता जा रहा है, असल में हम पूरब से पश्चिम होते जा रहे हैं कि गुप्तजी की 'भारत-भारती' की ये पंक्तियाँ साकार खड़ी हैं, 'देखें हमारे पूर्वज इस देश में आकर हमें। आँसू बहाएँ शोक से इस वेष में पाकर हमें।' लेखक का मानना है कि उस जैसे विचारक करोड़ों की संख्या में शोक से आँसू बहा रहे हैं। लेखक राजस्थान पत्रिका दैनिक (जयपुर, अलवर) के 13.2.12 के अंक में छपे, पूर्व सदस्य मजिस्ट्रेट किशोर न्याय बोर्ड के आलेख 'अपराध की ओर बढ़ते किशोर' के संदर्भ्य अंश शिक्षक समाज और सामान्य समाज के सम्मुख, कुछ करने के लिए, साभार प्रस्तुत करना आपना दायित्व समझता है। वह हमारे सामाजिक जीवन से दो प्रसंग प्रस्ताविक रूप में रखना भी उचित समझता है। मोर बहुत सुंदर पक्षी है, किन्तु जब वह अपने अभद्र पैरों को देखता है तो नृत्य बंद कर रुआँसा हो जाता है और हमारे शास्त्र कहते हैं– लालयेत्यं पंच वर्षाणि दश वर्षायितु ताड़येत। प्राप्ते तु शोड़षे वर्षे पुत्र मित्रवदाचरेत्।'

'अभी ताजा मामला चेन्नई का है जहाँ अभी 9 फरवरी को 15 साल के एक स्कूली छात्र ने अपनी शिक्षिका को बेरहमी से कत्ल कर दिया। इसके लिए वह चाकू घर से छिपाकर लाया था। और मौका पाकर शिक्षिका को गोद डाला।' यह स्मरणीय है कि सन् 2000 में किशोर न्याय अधिकरण बनाया गया था।

देखा जाए तो सन् 2000 से 2010 के बीच किशोरों के अपराधों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती रही है। सन् 2000 में प्रति 1000 किशोर जनसंख्या पर 9 अपराधी थे जबकि 2010 आते-आते यह संख्या 19 तक जा पहुँची। अपराधों में वृद्धि का सिलसिला सन् 2000 के बाद ही शुरू हो गया था। सन् 2001 में प्रति 1000 किशोरों में से 16 ने अपराध किया था, सन् 2002 में यह संख्या 18 तक पहुँच गई थी। सन् 2006 में फिर एक बार बढ़ोत्तरी देखी गई जब प्रति 1000 किशोरों में सं. 19 अपराधी प्रकृति के थे। 2007 में यह संख्या 20 तक जा पहुँची और 2008 में एक नया रिकार्ड बना जब प्रति 1000 किशोर जनसंख्या पर अपराध करने वालों की संख्या 21 तक पहुँच गई।

कुल अपराधों की सांख्यिकी के लिहाज– सन् 2000 में कुल अपराधों में किशोरों द्वारा किये जाने वाले अपराधों का प्रतिशत मात्र 0.5 था जबकि दो वर्षों में ही दो गुना हो गया और इस तरह से 2002, 2003, 2004 और 2005 में एक प्रतिशत स्थिर रहा। 2008 में यह बढ़कर 1.2 प्रतिशत हो गया जबकि 2009 में थोड़ा घटकर 1.1 प्रतिशत रहा।

किशोरों द्वारा किए जाने वाले अपराधों की संख्या में होने वाली बढ़ोत्तरी को देखते हुए सन् 2000 के कानून पर पुनर्विचार की आवश्यकता है, अपराध के तौर-तरीकों को देखने पर भी इस कानून में सुधार की जरूरत महसूस की जा रही है, भारत जैसे उष्ण कटिबंधीय देश में बच्चे जल्दी परिपक्व होते हैं इसके अलावा पढ़ाई-लिखाई के बढ़ते स्तर तथा टीवी और कम्प्यूटर जैसे साधनों ने उन्हें और भी अधिक परिपक्व कर दिया है। इसलिए तय की गई 18 वर्ष की समय-सीमा को कम किए जाने की आवश्यकता है। किशोर न्याय बोर्ड के सदस्य के रूप में किए गए व्यक्तिगत अनुभव से महसूस हुआ कि हत्या और बलात्कार जैसे गंभीर अपराधों में किशोरों की भागीदारी बढ़ती जा रही है। कई बार इस कानून के दुरुपयोग की भी कोशिशें की जाती हैं।

आज राजनीति का जो रूप है, उसमें भी इस समस्या पर पुनर्विचार की आवश्यकता है। अब समय आ गया है कि किशोर न्याय कानून की समीक्षा की जाए यदि देश को बचाना है और यदि 'मिटाते हैं' के श्लोक को समझा जाए तो 'जवानी की दुआ लड़कों को नाहक लोग देते हैं। यही लड़के मिटाते हैं, जवानी को जवाँ होकर।

आज परिस्थिति की भयावहता विक्टरह्यूगो और लामिजेरबिल के प्रकाशक के बीच हुए इस प्रतीकात्मक संवाद से समझी जा सकती है। 'लामिजेरेबिल' पुस्तक बाजार में छापकर विक्रय में चल रही थी। विक्टर ह्यूगो पहाड़ पर छुट्टी पर थे अतः पत्र लिखने से परहेज कर रहे थे, फिर भी जिज्ञासा तो थी ही अतः प्रकाशक से पूछा '?' अर्थात् कैसी बिक रही हैं, प्रकाशक भी तो विक्टर ह्यूगो था अतः पत्र भी प्रतीकात्मक उत्तरित रहा अर्थात् '!' आश्चर्यजनक अर्थात् '?' और '!' दो पत्र हो गए। आज किशोर कर्म भी इन्हीं को विराम चिह्नों में स्पष्ट है '?' कैसा अर्थात् '!' आश्चर्यपूर्ण।

–भुसावर, भरतपुर (राज.)

स्वाध्याय प्रगति का आवश्यक मंत्र है

❑ शिवचरण मंत्री

सामान्यतः हर बुद्धिमान व्यक्ति इस बात का प्रयास करता है कि वह प्रगति करे, आगे बढ़े। आगे बढ़ने के लिए स्वयं व्यक्ति को ही सामान्यतः प्रयास करने होते हैं और इसके लिए अपने आपका आकलन करके अपने विवेक, उपलब्ध साधनों, वातावरण, भावी आवश्यकता और अन्य तथ्यों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

लक्ष्य को प्राप्त करने, सफलता प्राप्त करने का सर्वश्रेष्ठ उपाय है स्वाध्याय किया जावे। स्वाध्याय निरन्तर, नियमित और सतत हो इसके लिए आवश्यक है कि व्यक्ति निरन्तर अध्ययन करता रहे। अध्ययन का मेरा आशय मात्र पुस्तकीय अध्ययन में नहीं, अपनी स्वशारीरिक, मानसिक भावात्मक शक्ति का अध्ययन कर अपना लक्ष्य निर्धारित कर उन्हें प्राप्त करने का अपनी पूर्ण क्षमता से प्रयास करे।

स्वाध्ययन के लिए मार्गदर्शन की आवश्यकता होने पर अपने आसपास में रहने वाले अनुभवी, प्रेरणाप्रद, योग्य व्यक्ति से परामर्श लें। ऐसा सम्भव न होने पर वर्तमान प्रचार-प्रसार साधन यथा रेडियो, टेलीवीजन, कम्प्यूटर में उपलब्ध वेबसाइटों आदि का सहारा लेने के साथ मैं पुस्तकों को स्वाध्याय का श्रेष्ठ साधन इस कारण से मानता हूँ कि पुस्तक को सरलता से पढ़ा जा सकता है, बार-बार देखकर चिन्तन-मनन किया जा सकता है। पुस्तकें अच्छे विचारकों, चिन्तकों और अनुभवी लेखकों की यथासम्भव सरल, सुस्पष्ट भाषा में होने से स्वाध्यायी पाठक को अधिक परिश्रम की आवश्यकता नहीं रहती है।

स्वाध्ययन को एक नियमित कार्यक्रम बनाने के साथ-साथ स्वाध्ययन का स्थान स्वच्छ, शांत और स्वास्थ्यप्रद हो यह भी आवश्यक है। ऐसा न होने पर वांछित लाभ प्राप्त होना सन्देहप्रद हो सकता है।

समय-समय पर स्वाध्यायी अपने सतत अध्ययन का मूल्यांकन करे, प्रगति का आकलन स्वयं करे, अन्य से करवाये और आवश्यक संशोधन, परिवर्तन करे, इसको अधिकाधिक प्रभावशाली बनाने का प्रयास करे।

स्वअध्ययन और व्यावसायिक निपुणता, स्वनिपुणता में चोली-दामन का सम्बन्ध होता है। अतः व्यावसायिक निपुणता के लिए स्वाध्याय, स्वअध्ययन की महती आवश्यकता है। संक्षेप में किसी व्यवसाय में निपुणता प्राप्त करने के लिए निरन्तर स्वाध्याय करना आवश्यक है। जीवन में निपुणता का मूल्यांकन सफलता-असफलता स्वाध्याय पर भी निर्भर होती है।

–श्रीनगर, अजमेर (राज.)

स्वाध्याय की ताकत

❑ बजरंग प्रसाद मजेजी

ज्ञानरूपी सागर में जितनी डुबकी लगायें, शिक्षक के शिक्षण में उतना ही निखार आने लगता है। ज्ञान असीमित होता है। यह जीवन के अंतिम पड़ाव तक प्राप्त किया जा सकता है। इसीलिए कहा गया है कि ज्ञानी वह है जो निरन्तर स्वाध्याय करे। शिक्षक का कार्य विद्यार्थी-समाज को ज्ञानोपदेश, मार्गदर्शन देना है। यदि शिक्षक व्यावसायिक मनोवृत्ति से कार्य करता है तो वह यथोचित सम्मान नहीं पाता है। स्वाध्याय से अध्यापक के अध्यापन में निखार आता है। जिस प्रकार कथावाचक धर्मोपदेश मात्र पुस्तक पठन न करके कथावस्तु में समसामयिक दृष्टांत, कहानी, गायन द्वारा श्रोताओं का मन मोह लेता है। भाव-विभोर होकर नृत्य करने लगते हैं। उसी प्रकार जब शिक्षक पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु से सम्बन्धित संदर्भ साहित्य से उद्धरण, चतुर्दिक जानकारियों से शिक्षण कराता है तो उसका निश्चित रूप से प्रभाव विद्यार्थियों पर पड़ेगा। इस कारण उसका सम्मान भी बढ़ेगा।

शिक्षक बालक को ओजपूर्ण, प्रभावी तथा नवीनतम जानकारीयुक्त ज्ञान तभी दे सकता है, जब वह स्वयं स्वाध्यायी हो। मात्र पाठ्यक्रम पूर्ण करना, प्रश्नोत्तर कराना और कक्षा में विद्यार्थी से वाचन करा देना शिक्षण नहीं है। जब तक बालक की ज्ञान पिपासा शांत न हो, वह संतुष्ट न हो, बालक की जिज्ञासा का समुचित उत्तर न दिया जाए, शिक्षण अधूरा है। अध्यापक के शिक्षण कौशल में चार चाँद तभी लगेंगे जब स्वाध्याय कर पूरी तैयारी से कक्षा में आयेगा। इस हेतु शिक्षक को कार्यशाला, विचारगोष्ठी, शैक्षिक संवाद, सेमीनार, रिफ्रेशर प्रशिक्षण कार्यक्रम में भागीदारी लेनी होगी। इससे उसके संचित ज्ञान में नवीनता आयेगी, जिसका लाभ बालकों को मिलेगा।

वर्तमान में शिक्षक येन केन प्रशिक्षण प्राप्त कर अध्यापक पद पर नियुक्त होने के पश्चात् प्रायः स्वाध्याय प्रवृत्ति से विमुख होकर कक्षा में आने-जाने को कर्त्तव्यश्री मान लेते हैं। परिणामतः वे विद्यार्थी के हृदय में स्थान नहीं बना पाते हैं। शिक्षक की उदासीनता के कारण देश की सभ्यता-संस्कृति, भाषा, परम्परा, आचार-विचार से विद्यार्थी दूर होते जा रहे हैं। शिक्षा संस्कार और व्यक्तित्व की संकल्पना के साथ जुड़ी होती है। एक शिक्षक हजारों शिष्यों को सन्मार्ग पर ले जा सकता है। मेरा अनुभव है कि विषयवस्तु की जानकारी लेकर, बिना पुस्तक के संचित ज्ञान से प्रभावी शिक्षण देने पर विद्यार्थी के हृदय पर छाप पड़ती है। कक्षा में उसके चेहरे पर जब सन्तुष्टि दिखाई दे तो समझना चाहिए कि शिक्षण उपयुक्त है। ऐसे शिक्षक को वर्षों पुराने शिष्य मिलते हैं और नतमस्तक होकर सम्मान देते हैं, तब अनुभव होता है कि स्वाध्याय और शैक्षिक मंथन के कारण यह संभव है। व्यावसायिक निपुणता के लिए स्वाध्याय, नवीनतम जानकारियाँ, देश-विदेश की तात्कालिक ज्ञानोपयोगी जानकारीयुक्त शिक्षण प्रभावी होगा और ऐसा शिक्षक आदर्श शिक्षक के रूप में सम्मान पायेगा।

–प्र.अ. (से.नि.), सांपला, अजमेर-305404

स्वाध्याय आत्मा की खुराक

❑ महेश कुमार चतुर्वेदी

दुनिया में धन को चुराया जा सकता है, लेकिन विद्या को नहीं। यह भी कहा जाता है कि गाँठ की अंटी और गाँठ की विद्या वक्त पड़े काम आती है। स्वाध्याय एक ऐसी विद्या है, ऐसी कला है, जिसका कोई मोल नहीं।

इसीलिए कहा है– *सरस्वती के भण्डार की बड़ी अपूरब बात।/ज्यों-ज्यों खरचे, त्यों-त्यों बढ़े, बिन खरचे घटि जात॥*

जैसे गंगा जल वर्षों तक किसी भी पात्र में रखने से खराब नहीं होता। उसी तरह स्वाध्यायी व्यक्ति का ज्ञान लुप्त नहीं होता। ज्यों-ज्यों व्यक्ति स्वाध्याय की साधना में रत रहता है। त्यों-त्यों उसका ज्ञान पुष्ट होता है। शर्त यह है कि साधक सद्साहित्य और सद्ग्रंन्थों का अध्ययन करें। स्वाध्याय में नियमितता, पवित्रता, एकाग्रता और निर्विकारता आदि बातें आवश्यक हैं।

नियमित स्वाध्याय से व्यक्ति ज्ञानी बन जाता है। अच्छा वक्ता बन जाता है। वह जब भी अपने मुखारबिंद से जो भी भाव-शब्द प्रकट करता है। वह स्वाध्याय का सार होता है। ऐसे स्वाध्यायी साधक को श्रोता बार-बार सुनना पसंद करता है। कोई सा भी जन समूह हो, अथवा सैकड़ों लोगों की जन-सभा/स्वाध्यायी जब अपने विचारों को शब्दों के माध्यम से, वाणी के रूप में प्रकट करता है तो वह श्रोताओं को मंत्र-मुग्ध कर देता है। एक अजीब सी आनंदानुभूति श्रोताओं को होती है और बरबस ही वह अपनी तालियाँ बजाकर प्रसन्नता व्यक्त करता है। और अंत में वह यही कहता है अमुक व्यक्ति ने, अमुक संत ने क्या प्रवचन दिए? वाह, मजा आ गया। देखा स्वाध्याय का चमत्कार।

स्वाध्याय से व्यक्ति चरित्रवान बनता है। उसमें समस्त मानवीय गुणों का विकास होता है। दया, प्रेम, करुणा, ममता, त्याग, सहयोग, भाईचारा, नम्रता-विनम्रता, मृदुभाषी, संयमी, शालीनता आदि चारित्रिक गुणों का विकास होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि स्वाध्याय से व्यक्ति के जीवन में समस्त मानवीय मूल्यों और जीवन-मूल्यों का विकास होता है। ऐसा कर वह स्वयं तो सुखी होता ही है, अपितु दूसरों को भी सुखी रखता है। वह 'सर्वे भवन्तु सुखिनः।' को अपना लक्ष्य बनाकर सदैव परहित में लगा रहता है।

जगत को आलोकित करने का कार्य दीपक सदियों से स्वयं को जलाकर परहित में अपने आप को उत्सर्ग करता आया है। किन्तु यदि दीपक में तेल नहीं तो दीपक कैसे जलेगा? बिना तेल के दीपक और बाती का कुछ भी तो अस्तित्व नहीं।

यदि मानव जीवन की तुलना दीपक से करें एवं शरीर-दीपक, आत्मा-बाती तथा स्वाध्याय को तेल सदृश्य मानें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं।

स्वाध्याय को वाणी का तप माना गया है। स्वाध्याय आत्मा-परमात्मा के मिलन का एक साधन है। कहने का तात्पर्य यह है कि आत्म-प्रकाश और आत्मोद्धार का सरल सुगम माध्यम है– स्वाध्याय।

जिस प्रकार से सोना आग में तपकर निखरता है। उसी प्रकार स्वाध्याय के तप से मानवजीवन प्रकाशमान होता है। स्वाध्याय से व्यक्ति का वर्तमान ही नहीं अपितु भूत और भविष्य भी सँवरता है। स्वाध्याय से व्यक्ति का इहलोक और परलोक दोनों सुधारे जा सकते हैं।

कोई पात्र है जब तक उसमें कोई सकल पदार्थ नहीं भरेंगे। तब तक वह रिता ही कहलाएगा। व्यक्ति जब पैदा होता है तब वह रिता ही पैदा होता है। धीरे-धीरे वह अपने अनुभवों से सीखता हुआ आगे बढ़ता है और सीखा हुआ तभी परिमार्जित होता है जब वह स्वाध्याय करता है।

स्वाध्याय आत्मा की खुराक है। आत्मा का भोजन है। मनन का नवनीत है। स्वाध्याय से चिंतन मनन की प्रवृत्ति बढ़ती है। स्वाध्याय से व्यक्ति अपने आप को पहचान सकता है। अपनी आत्मा से रूबरू हो सकता है। स्वाध्याय से आत्मा बलवती होती है। इससे ज्ञान की ऐसी लौ पैदा होती है कि जीवन जगमग करने लगता है।

स्वाध्याय इन्द्रिय कषायों से मुक्ति दिलाकर मन को एकाग्रचित करने का सुगम साधन है। स्वाध्याय से व्यक्ति के नैराश्य भाव नष्ट होते हैं और वैराग्य भाव जागृत होते हैं। जीव इस संसार में मोह-माया के बंधनों में बँधा रहता है। वह भौतिक सुखों की ओर प्रवृत होता है। यह उसकी नियति है। इस प्रकार जीव अपने कर्मों के आधार पर विभिन्न योनियों में भटकता हुआ जन्म-जन्मान्तर के चक्कर में पड़ा रहता है। घोर यातना और कष्ट भोगता है। स्वाध्याय सांसारिक सुखों में लिप्त व्यक्ति को जन्म-जन्मान्तर से मुक्ति दिलाकर मुक्तिमार्ग की ओर अग्रसर करता है।

स्वाध्याय की ताकत का कोई पार नहीं। जितना इसमें डूबो उतना ही आनंद प्राप्त करते रहो। उत्कर्ष और ऊँचाइयों को छूते रहो।

सार रूप में यह कहा जा सकता है कि स्वाध्याय से सच्चे अर्थों में समय का सदुपयोग होता है। हमारी ऊर्जा, योग्यता, प्रतिभा का सृजनात्मक उपयोग होता है। स्वयं का आत्म-विश्वास और साहस बढ़ता है। जीवन में अनुशासन बढ़ता है। आत्म-साधना अभिवृत्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। शंकाओं का समाधान मिलता है। जीवन में निखार आता है।

जिस प्रकार शरीर के समुचित विकास के लिए संतुलित और पौष्टिक भोजन जितना आवश्यक है। उसी प्रकार मस्तिष्क और आत्मा के लिए स्वाध्याय की खुराक अत्यन्त आवश्यक है।

आइए, स्वाध्याय के महत्व को अंगीकार करते हुए, स्वीकारते हुए जीवन में नियमित स्वाध्याय को स्थान देकर अपना ही नहीं वरन् सम्पूर्ण मानव-कल्याण में अपना अमूल्य योगदान दें।

–प्रधानाध्यापक, रा.उ.प्रा.वि., पुराना, छोटी सादड़ी, प्रतापगढ़ (राज.)

स्वाध्याय की नाव में जीवन की गंगा यात्रा

❑ पंकज कुमार शर्मा

गंगोत्री से उतरती हुई पावन गंगा की तरह ही हमारा जीवन भी जब प्रारम्भ होता है तो उसमें एक शक्ति, एक ऊर्जा होती है जिसे दिशा प्रदान कर उपयोगी बनाना होता है। दिशा प्रदान करने का काम अक्सर माता-पिता और शिक्षक करते हैं, मगर जीवन में एक राह पकड़कर उस पर निरन्तर चलने की प्रेरणा स्वाध्याय से मिलती हैं। जिस स्वाध्याय की आदत का बीजारोपण बचपन में होता है, वह हमारा अंत तक साथ निभाती है। जिस समय मित्रगण और घर-परिवार वाले भी हमारा साथ छोड़ देते हैं, स्वाध्याय रूपी तिनका दुःख और अकेलेपन के सागर में हमारा सहारा बन जाता है। इस सहारे के माध्यम से अर्जित किया ज्ञान हमारे लिए सबसे आत्मीय और हितकारी होता है, ठीक उस नाव की तरह जो सागर के डोलने पर भी डिगती नहीं और अपने सवार को अपनी मंजिल तक पहुँचा देती है।

वैदिक काल में 'स्वाध्याय' शब्द का अर्थ होता था परमात्मा के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने हेतु वेदों और अन्य धर्म ग्रंथों का पाठ एवं उच्चारण। आज के युग में यह परिभाषा भले ही उतनी सार्थक न लगे, परन्तु मानव जीवन को अर्थपूर्ण बनाने में स्वाध्याय का योगदान आज भी महत्त्वपूर्ण है। भले ही हम परमात्मा को जानने के लिए अध्ययन न करें, पर जब भी कोई व्यक्ति जिज्ञासा से कुछ पढ़ता है, तो वह कुछ पाना चाहता है– किसी विषय के सम्बन्ध में जानकारी, किसी उपन्यास की कहानी में अपने जीवन की समस्याओं का हल या सिर्फ शांति का अनुभव, उस समय उस व्यक्ति के लिए वह अनुभव ही परमात्मा है।

विद्यार्थी जीवन तो स्वाध्याय के बिना अधूरा ही नहीं अपितु महत्त्वहीन है। विद्यार्थी के लिए केवल कक्षा में बैठकर शिक्षक के द्वारा पढ़ाया हुआ पाठ अपनी कॉपी में लिखना ही काफी नहीं, बल्कि उसका सार ग्रहण करने के लिए एकांत में उस पर मनन करना अति आवश्यक है। ऐसा न करने पर उसका याद किया हुआ पाठ केवल परीक्षा में कुछ अंक प्राप्त करने हेतु तोतारटंत होगा और किसी भी शिक्षा का उद्देश्य तभी सफल होता है यदि शिक्षा ग्रहण करने वाले उपयुक्त बौद्धिक क्षमताएँ जन्में और उसमें अपने चुने हुए विषयों में समस्याएँ सुलझाने की क्षमता का विकास हो। किसी ने सच ही कहा है, उपदेश देना सरल है, उपाय बताना कठिन, किसी भी सफल व्यक्ति– वैज्ञानिक से लेकर अभिनेता तक से साक्षात्कार करने पर हमें ज्ञात होता है कि वे अपने विषय से जुड़े हुए लेखों और पुस्तकों का निरन्तर अध्ययन करते रहते हैं। यह इसलिए भी आवश्यक है कि किसी भी एक व्यक्ति का अपने जीवनकाल में, किसी एक विषय में स्वयं सारे प्रयोग करना संभव नहीं; उसे दूसरों द्वारा किये हुए शोध एवं प्रयोगों का सहारा लेना ही पड़ता है, जो उसे स्वाध्याय से प्राप्त होता है।

मगर स्वाध्याय के लिए क्या मनुष्य को हमेशा पुस्तक पर ही निर्भर रहना पड़ेगा? एक झेन कथा के अनुसार तो जिस दिन एक साधक को ज्ञान उपलब्ध हुआ, उसने सारी किताबें जला डालीं। मगर जीवन में कब, क्या महत्त्वपूर्ण है, यह चुनाव समय के अनुसार किया जाना चाहिए। उदाहरण के तौर पर जब बच्चा पहली बार स्कूल जाना शुरू करता है तो वह रोता है, बिलखता है और हजार बहाने करता है कि उसे स्कूल न भेजा जाए। फिर धीरे-धीरे स्कूल का वातावरण, वहाँ हर पल जुड़ते सहपाठी-मित्र उसे अच्छे लगने लगते हैं। वह उनके साथ पढ़ता है, खेलता है, बातें करता है और बहुत कुछ सीखता है। बचपन के इस समय में पुस्तकें नहीं, अपितु उसके शिक्षक और मित्र ही उसके स्वाध्याय का स्रोत होते हैं। इस उदाहरण से एक और बात साफ होती है कि किसी भी अच्छी आदत को आत्मसात करने में समय लगता है और जहाँ समय लगता है वहाँ धैर्य चाहिए।

यहाँ पर यह भी समझ लेना चाहिए कि स्वाध्याय हमारा धैर्य बढ़ाने में भी हमारी मदद करता है। वह इसलिए कि जो भी विद्यार्थी पढ़ने के लिए बैठता है, उसे यह बात तो निश्चित ही होती है कि अब कुछ समय वह बाकी सब बातों से, टीवी से, मित्रों से और खेल से अपने को विमुख करेगा और एकाग्रचित होकर अपना पूरा ध्यान अपने सामने रखे विषय पर लगाएगा। तभी परीक्षा में वह अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हो सकेगा। उसके जीवन में धैर्य और एकाग्रता की नींव शायद उसी क्षण, उस मेज-कुर्सी पर, अपने पठन-सामग्री के मध्य रखी जाती है, जो उसका जीवनभर साथ निभाते हैं, इस सन्दर्भ में स्वाध्याय, धैर्य और एकाग्रचित्तता तीनों जुड़े हैं।

जीवन की नदी जब आगे बढ़ती है और बच्चा युवा हो जाता है, तो उसके जीवन में आने वाली चुनौतियों का प्रारूप भी बदल जाता है। अब वह छात्र नहीं, शायद एक अफ्सर है, डॉक्टर है, इंजीनियर है या शिक्षक, अब उसे अपने ऑफिस में जिम्मेदारियाँ सँभालनी हैं, समय-निर्धारित परियोजनाओं को अंजाम देना है और अपने कार्यक्षेत्र में अपनी पहचान बनानी है। इस समय मित्र कम, प्रतिद्वंदी ज्यादा बनते हैं। ऐसे में कई बार व्यक्ति घबरा जाता है और उसका मन असफलता की कल्पनाएँ निर्मित करने लगता है। ऐसे में उसे अपने विषय से सम्बन्धित पुस्तकों और लेखों का अध्ययन करना चाहिए और अपना ज्ञान एवं अपनी कार्यक्षमता बढ़ानी चाहिए। उचित स्वाध्याय उसे अपने क्षेत्र में हो रही नई गतिविधियों से भी अवगत कराता है। इससे उसके मन में आत्मविश्वास जगता है और जल्द ही वह सफलता के नये आयाम प्राप्त कर लेता है।

साथ ही जीवन की इस दौड़ में यदि वह कुछ देर ठहरे और एकांत में महापुरुषों के जीवन का अध्ययन करे तो उसे कठिनाइयों से जूझने की हिम्मत और प्रेरणा प्राप्त हो सकते हैं। फिर चाहे वह महात्मा गाँधी की आत्मकथा हो या परमहंस योगानंद की, कोई फर्क नहीं पड़ता। उसे समझ में आता है कि कठिनाइयाँ तो आती-

जाती रहती हैं। आखिर स्वामी विवेकानन्द ने भी तो कहा था कि जिस दिन आपके जीवन में कोई कठिनाई, कोई मुश्किल न आये, समझ जाइए कि आप गलत दिशा में यात्रा कर रहे हैं। ऐसा ही कोई विचार निराशा के क्षणों में कोई पढ़ ले और आत्मसात कर ले तो उसके जीवन में चमत्कार घटित हो सकता है। तो एक बार फिर दिशाहीनता से बचाने में हमारा स्वाध्याय हमारी मदद करता है। इस प्रकार गिरते-सँभलते हमारी इच्छाशक्ति का विकास होता है और हमारी अनावश्यक चिंताएँ कम होती हैं।

खैर, चिंता तो मनुष्य को हर उम्र में सताती है। सभी महापुरुषों ने माना है कि मनुष्य की चिंता का कारण उसके मन का बीते हुए कल में या आने वाले पल में विचरण करना होता है। अगर उस वक्त वह अपने को किसी ऐसे कार्य में लगा ले जो उसे वर्तमान में ले आये तो उसे चिंता से मुक्ति मिल सकती है। श्री अरविन्द आश्रम की 'माँ' कहती थी कि इसके लिए वह अपनी चेतना का विस्तार करे– या तो बाहर जाकर आकाश या समुद्र को देखे या स्वाध्याय का सहारा ले हाल ही में Times of India के 'The Speaking Tree' supplement के एक अंक में जग सुरैया ने लिखा था कि यह कार्य किसी रचनात्मक उपन्यास को पढ़कर भी किया जा सकता है। उनके अनुसार यह हमें उस क्षण में अपने सीमित संसार की परिधि को त्यागकर अन्य किरदारों (काल्पनिक ही सही) से जुड़ने का अवसर प्रदान करता है। वह आगे लिखते हैं कि ध्यान की तरह ही यह हमारी चेतना के फैलाव में सहायक सिद्ध होता है।

स्वाध्याय के विषय में एक और बात ध्यान में रखनी जरूरी है। स्वाध्याय का अर्थ सिर्फ किताबी ज्ञान नहीं, अपितु वह कर्म है जो हमें उस ज्ञान को व्यवहार में लाने में मदद करता है। इस सन्दर्भ में एक कथा मुझे स्मरण आती है। एक पंडित नाव द्वारा नदी पार कर रहा था। उसने नाविक से पूछा, क्या तुमने वेद पढ़े हैं? नाविक ने कहा, नहीं। पंडित ने उसे कहा, तो फिर तुम्हारी 25% जिन्दगी बेकार गई। क्या तुमने पुराण पढ़े हैं? नाविक ने फिर नकारा। पंडित हँसते हुए बोला, फिर तो तुम्हारी 75% जिन्दगी बेकार गई। तभी अचानक नदी में तूफान आ गया और नाव जोर-जोर से डोलने लगी। नाविक ने चप्पू फेंक दिया और नदी में कूदने को हुआ। उसने पंडित से पूछा, क्या आपको तैरना आता है? पंडित ने घबराते हुए कहा, नहीं, नाविक ने कहा, फिर तो पंडित जी, आपकी 100% जिन्दगी बेकार गई। इतना कहते हुए वह नदी में कूद गया और अपनी जान बचा ली। कथा का सार है स्वाध्याय के द्वारा अर्जित किया हुआ ज्ञान यदि ऊपर-ऊपर ही रहे और वक्त पर हमारे काम न आये तो वह व्यर्थ है। और जीवन की लम्बी यात्रा व्यर्थ को साथ रखकर नहीं की जा सकती।

जीवन यात्रा के आखिरी पड़ाव में तो स्वाध्याय अत्यंत उपयोगी है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि वह बुढ़ापे की एक किस्म की लाठी है। उस वक्त जब हमारा परिवार भी हमारा साथ नहीं देता या हमारे परिजन भी हमें छोड़कर दूर चले जाते हैं और हम बिल्कुल अकेले हो जाते हैं तो मन अक्सर निराशा से घिरने लगता है। कई लोग ऐसे समय में उदासी और नकारात्मकता के शिकार हो जाते हैं। जिन्होंने बचपन से स्वाध्याय में रुचि ली हो, उनके लिए अपने को इस दलदल से खींच निकालना कोई मुश्किल कार्य नहीं। ऐसे वक्त में शायद अध्यात्मिक पुस्तकों का मोल अन्य सभी पुस्तकों से कहीं अधिक हो जाता है। मन बहलाने के लिए शायद हमेशा कोई साथी न मिले या सत्संग की सुविधा न हो, परन्तु अध्यात्मिक विचारों को पढ़कर उन पर मनन करने से एक अभूतपूर्व शान्ति मिलती है।

यदि आँखें भी साथ न दें और कुछ पढ़ा न जाए, तो आत्मचिंतन रूपी स्वाध्याय तो हमेशा मौजूद है। जीवन के इस पड़ाव पर शायद किसी भी पुस्तक से कहीं अधिक ज्ञान व्यक्ति के खुद के अनुभवों के सार में होता है जो उसके मानस-सरोवर में धीमे-धीमे तैरता रहता है। यह पुस्तक तो खामोशी में, बंद आँखों से पढ़ी जाती है। जिस प्रकार रमण महर्षि अपने शिष्यों को मौन अवस्था में सन्देश देते थे, उसी प्रकार मनुष्य का परिपक्व मन जीवन के संध्या काल में उसे सबसे कीमती उपदेश देता है। इसी स्वाध्याय और आत्मचिंतन का सहारा लेकर ऐसा मनुष्य अपनी यात्रा के अंतिम छोर पर पहुँचता है और शांत भाव से परमात्मा रूपी गंगासागर में विलीन हो जाता है।

काश, उसके आखिरी क्षणों का अहोभाव हम सब महसूस कर सकें...

–सहायक प्रोफेसर, बिट्स, पिलानी

स्वाध्याय से निकलती न्यूनताएँ

❑ राजेन्द्र प्रसाद जोशी

मैं पढ़ाई में हमेशा ही ठीक रहा किन्तु गणित विषय में मुझे कठिनाई आती थी, जिसकी वजह से कक्षा में दूसरे स्थान पर रह जाता था। मुझे याद है कि कक्षा नवीं में कक्षा में प्रथम होते हुए भी गणित में केवल उत्तीर्ण अंक आने से द्वितीय स्थान पर रह गया था। कक्षा 9वीं के परिणाम के बाद मुझे भारी ठेस लगी। मैंने तय किया कि गणित में भी अच्छे अंक आये। इस हेतु दृढ़ संकल्प किया। बीजगणित, अंकगणित के दिये पुस्तक में उदाहरणों को बार-बार देखकर स्वाध्याय की प्रवृत्ति बनाई। एक माह के स्वाध्याय से सवाल मेरे समझ में आने लगे। धीरे-धीरे स्वाध्याय का ऐसा जादू चला कि गणित में मेरी रुचि बढ़ती गई। कितनी ही रफ कापियाँ भर गईं। आत्मविश्वास बढ़ने लगा। कक्षा दसवीं में बोर्ड का पेपर देखकर मन प्रसन्न हो गया क्योंकि लगभग सभी सवाल मुझे आ रहे थे। ये सब स्वाध्याय का ही फल था। कक्षा दस में प्रथम स्थान प्राप्त किया। स्वाध्याय की प्रवृत्ति सभी विषयों को कठिन से सरल बना देती है। स्वाध्याय को जीवन में अपनाकर अपनी कमजोरी को पूरा किया जा सकता है।

–प्राध्यापक, रा.उ.मा.वि., सुवाणा,
भीलवाड़ा (राज.)

शिविरा विचार मंच

शिविरा विचार मंच के लिए शिक्षक रचनाकारों के सुझाव, विचार एवं अनुभूत संस्मरण समय-समय पर शिविरा को मिलते रहते हैं। आप भी अपने अनुभवाधारित संस्मरण मय परिचय एवं फोटो के शिविरा के पाठकों के लिए भेज सकते हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं ***स्वाध्याय पर केन्द्रित*** *बरखा थानवी, दीपचंद सुथार, महेन्द्र पाण्डे, सुरेश चन्द्र खटीक, हरीश कुमार वर्मा, गिरधारी लाल सेन, अपर्णा दवे, भारत दोसी, शकुन्तला सोनी, पूनम, मुरारीलाल कटारिया, अलका सक्सेना, गायत्री शर्मा के विचार। –व.सं.*

सफलता की कुंजी : स्वाध्याय

'स्वाध्याय' यानी की स्वयं द्वारा किया गया अध्ययन। यों तो अध्ययन एक जटिल प्रक्रिया है और आज हमें स्वयं जटिल समस्याओं का समाधान करने की आदत नहीं है। मानव जाति को सदैव से ही मार्गदर्शन की आवश्यकता रही है। मार्गदर्शन न मिलने पर वह स्वयं को जीवन द्वारा ठगा सा महसूस करता है। उसे लगता है कि कोई क्यूँ उसकी मदद नहीं कर रहा है। परन्तु वह भूल जाता है, जो आनन्द स्वयं को मार्गदर्शित करने में है वह और कहाँ। यह भ्रम पीढ़ी दर पीढ़ी चला आ रहा है। आज के किशोर अपने भारी भरकम अध्ययन के बोझ तले दबे हुए हैं। बच्चे स्वयं अध्ययन पर विश्वास क्यों नहीं करते? क्या यह लाभदायक नहीं है? ऐसे कई सवाल मेरे मन में आते हैं। जिनका जवाब मैंने खुद स्वाध्याय से पाया है। अपने अनुभवों से मुझे लगता है कि यदि आप निश्चित अवधि तक आवश्यकतानुसार स्कूल अध्ययन कर वहाँ पर गुरुजनों से मार्गदर्शित होने पर स्वयं घर में अध्ययन करते हैं तो आपको अपने पथ से कोई विचलित नहीं कर सकता और स्वाध्याय से आया हुआ विश्वास आपके हौंसले को एक नई उड़ान दे सकता है। आज के युवा जो विद्यालयों को महत्व न देकर कॉमर्शियल कोचिंग की ओर आकर्षित हो रहे हैं। शायद नहीं जानते कि वह अपना समय, पैसा और विद्यालय की ख्याति को बर्बाद कर रहे हैं। ऐसा नहीं है कि इन सेंटर्स पर पढ़ाने वाले ज्ञानी नहीं परन्तु यदि वह ज्ञानी लोग अपने आपको विद्यालय व कॉलेज से जोड़कर बच्चों को मार्गदर्शित करें और स्वाध्याय के लिए प्रेरित करें तो वह एक अद्भुत स्वाध्याय क्रांति ला सकते हैं। शायद तब सब कुछ पहले जैसा हो जाए, जहाँ सिर्फ बहुत कमजोर विद्यार्थी को ही शाम को किसी के घर पढ़ने जाना पड़ता था और परिवार के लिए यह घमंड का नहीं वरन् शर्म का विषय हुआ करता था।

आज सभी अभिभावक अपने-अपने बच्चों को स्कूल के साथ-साथ शाम को ट्यूशन भी भेजते हैं। सोचते होंगे कि शायद बच्चे को दोगुना फायदा होगा। परन्तु इसमें उनका लाभ नहीं हानि ही है। बच्चे न तो दोगुना पढ़ते हैं और न ही स्वाध्याय कर पाते हैं। यहाँ तक कि विद्यालय में भी एकाग्र नहीं रहते। इस सबमें सबसे बड़ा अन्याय विद्यार्थी के साथ यह होता है कि वह न घर का रहता है न घाट का। ऐसे में जरूरत है की अभिभावक अपने विवेक से बच्चों को स्वाध्याय के लिए प्रेरित करें। वह उन्हें उन महापुरुषों के उदाहरण देकर समझाएँ जिन्होंने अपनी ललक और मेहनत से छोटे से गाँवों में रहते हुए भी विश्वभर का ज्ञान हासिल किया। ए.पी.जे. अब्दुल कलाम यदि एक छोटे से गाँव में जन्म लेकर स्वाध्याय के बल पर देश के राष्ट्रपति बनने तक सफर तय कर सकते हैं तो आज का विद्यार्थी क्यों नहीं? वह तो कुछ भी कर सकता है। कलाम ही नहीं देश-विदेश में ऐसे कई विद्यार्थी हुए जिनमें से कुछ ने तो स्कूल और कॉलेज बीच में छोड़कर अपनी रुचि के विषय में स्वाध्याय कर विश्व में अपनी पहचान बनाई है।

स्वाध्याय के अपने ही फायदे हैं। खुद पढ़ने से विद्यार्थी अपनी समस्याओं का हल निकालना स्वयं ही सीख जाता है। साथ ही अपने ज्ञान को सुनियोजित ढंग से क्रमबद्ध करना व उसे समय पर उपयोग में लाना भी सीखता है। इससे वह अपने कौशल में वृद्धि कर उस ज्ञान के साथ अटूट सम्बन्ध बना लेता है। जिसे वह जीवन भर नहीं भूलता। स्वयं का सीखा हुआ सदैव हमारे साथ रहता है। और यही बात यदि बच्चों व उनके माता-पिता को समझ आ जाए तो हम परिवर्तन ला सकते हैं। इंसान यदि सोच ले तो क्या नहीं कर सकता।

स्वाध्याय विद्यार्थी को मेहनती, जुझारू व सवालों के जवाब खोजने के लिए तत्पर एक ऐसा इंसान बनाता है जो भविष्य की किसी भी मुश्किल का सामना कर सके। वहीं दूसरी ओर स्वाध्याय न करने वाला विद्यार्थी रटने वाले उस तोते की तरह हो जाता है। जो बोलता तो है पर समझता कुछ नहीं। आज के युग में माता-पिता व शिक्षकगण एक विद्यार्थी को उस कम्प्यूटर की तरह बनाना चाहते हैं जिसकी समझ व तार्किक शक्ति तो शून्य हो परन्तु जवाब खटाखट बाहर आये और साथ में ग्रेड्स लाये।

आज हम प्रायः ही देखते हैं कि विद्यार्थी जाने कितनी ही कक्षाएँ पार कर लेते हैं। किन्तु उनकी रटने की प्रवृत्ति उनकी ज्ञान की नींव को कमजोर कर देती है। जिस पर भविष्य की इमारत खड़ी होती है। वह अनजाने में ही अपने कल को खतरे में डाल देता है क्योंकि उसकी आज की महत्वाकांक्षाएँ बहुत अधिक हैं और सब ज्ञान उसे जल्दी में एक क्रेश कोर्स के माध्यम से पाना है। आखिरकार इस पूरे प्रकरण में दोषी कौन है, वह बच्चा जो अपने माता-पिता की आज्ञा का पालन कर रहा है। या वह माता-पिता जिन्हें अपने बच्चे से बहुत अधिक उम्मीदें हैं या उस ट्यूशन टीचर का जो केवल अपनी तनख्वाह से घर नहीं चला सकता और ट्यूशन पढ़ाना उसकी मजबूरी है। यह सब मिलकर कहीं स्वाध्याय को विलुप्त न कर दें। यह एक अति संवेदनशील और चिंतापूर्ण विषय है क्योंकि स्वाध्याय मानव मस्तिष्क के उद्विकास में सर्वोत्तम हितकारी है। मानव मस्तिष्क की विशेषता ही उसका सोचना, समझना, विचार करना और किसी विषय का स्वयं अध्ययन करना है।

दुष्यंत कुमार की पंक्तियाँ हैं– *'पक गई हैं आदतें, बातों से सर होगी नहीं कोई हंगामा करो, ऐसे गुजर होगी नहीं।'*

स्वाध्याय का मुकाबला कोई कोचिंग क्लास या क्रेश कोर्स नहीं कर सकता है। पढ़ने का अर्थ ही स्वाध्याय होना चाहिए। **स्वाध्याय करने वाले विद्यार्थी स्वनिर्मित होते हैं और स्वनिमित्ता सफलता की पहली इकाई है।**

–बरखा थानवी
1/8, मूली भवन, नगर निगम के पास, बीकानेर

स्वाध्याय ही जीवन की कुंजी है

शिक्षा सर्वांगीण विकास का सौम्य सोपान है। इसी के सहारे बालक उत्तरोत्तर विकास करता जीवन की ऊँचाइयों को स्पर्श करता है। वैसे 'शिक्षा' शब्द संस्कृत भाषा के शिक्षविद्योपादाने, धातु से निष्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ मानव की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आत्मिक शक्तियों की अभिवृद्धि करना है। अंग्रेजी में शिक्षा को (Education) करते हैं जिसकी उत्पत्ति Educe (To bring out) अर्थात् भीतरी शक्ति के बाहर करना शब्द से हुई है। कहने का तात्पर्य यह है कि– शिक्षा ही व्यक्ति का अक्षय आभूषण तथा सुकृत्यों की सुरभित सौरभ है जो युग-युगान्तरों तक प्रेरणा देती रहती है। यह कार्य स्वाध्याय से ही पूर्ण होता है। जो निरन्तर अध्ययन, चिन्तन और मनन द्वारा जीवनपर्यन्त विचारों के विस्तृत प्रांगण में प्रवाहित होता रहता है।

पतंजलि ने स्वाध्याय को परम योग कहा है। शतपथकार और याज्ञवल्क्य ने स्वाध्याय को ब्रह्मयज्ञ कहा है। इसी से हमारे अन्तस में आत्मप्रेरणा व आत्म स्फूर्ति का संचार होता है। योगदर्शन में कहा गया है कि– 'स्वाध्यायादिष्ट देवता सम्प्रयोग', अर्थात् स्वाध्याय से आराध्य देवता का साक्षात्कार होता है। श्रुति का आदेश है– 'स्वाध्यायान्मा प्रमदः। स्वाध्याय से प्रमाद मत करो अतः प्रमाद रहित जीवन ही स्वाध्याय का परिचायक है। इस प्रकार स्वाध्याय सभी विषयों के व्यापक ज्ञान को अपने अंचल में समेटे हुए हैं। अतः पुस्तकों द्वारा स्वाध्याय करना सरल, सरस व हर प्रकार से जीवनोपयोगी है लेकिन स्वाध्याय बच्चे की रुचि पर निर्भर करता है। इस संदर्भ में माता-पिता तथा अभिभावकों का नैतिक दायित्व है कि वह अपने बच्चे के विकास के लिए पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त अन्य बोधगम्य, प्रेरणाप्रद एवं मनोरंजक पुस्तकें खरीद कर उन्हें पढ़ने के लिए प्रेरित करना चाहिए। शनैः-शनैः यह अभ्यास शौक की सीमा का लाँघकर प्रवृत्ति में परिवर्तित हो जायेगा।

स्वाध्याय ज्ञान का सुरम्योद्यान है, जिसकी सुखद दूब में बैठकर स्वाध्यायशील व्यक्ति प्रतिदिन कई घण्टों तक स्वाध्याय द्वारा ज्ञान के कोष को भरता हुआ अभीष्ट को प्राप्त कर सकता है। अतः मस्तिष्क के विकास के लिए स्वाध्याय के अतिरिक्त और कोई प्रमुख साधन नहीं है। इस पथ का व्यक्ति वर्तमान के साथ-साथ भूत व भविष्य के ज्ञान को संचित कर यश को प्राप्त करता है। इस प्रकार स्वाध्याय समाहित रुचि ही जीवन की यथार्थ सम्पदा है। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक बिना स्वाध्याय किए भोजन नहीं करते थे। अब्राहिम लिंकन मीलों चलकर स्वाध्याय हेतु पुस्तकालय से पुस्तकें लाते और रात्रि में लकड़ियाँ जलाकर रोशनी में पढ़ते थे। इसी प्रकार नरेन्द्र, गोपालकृष्ण गोखले, बंकिमचन्द्र चटर्जी आदि अनेक महापुरुषों को स्वाध्याय का बहुत शौक था। यह प्रक्रिया अन्तर्निहित प्रतिभा को उजागर कर प्रेरणा के पथ पर सुन्दर सुमन खिला देती हैं।

इसलिए स्वाध्याय को जप, तप एवं योग कह दिया जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर विद्यार्थी जीवन में सर्वत्र कक्षा में प्रथम आते थे। जब वे बीमार पड़ गए तो कुछ दिन तक विद्यालय नहीं जा सके। सोचा कि इस बार मेरा साथी प्रथम आयेगा। स्वस्थ होने पर दिन-रात पढ़ने लगे। इसी दौरान घर पर पढ़ने वाले बच्चे आ गए। उन्हें देखते ही कहा– 'कल आना' वे चले गए। कथनानुसार दूसरे दिन आ गए। अध्ययन की तल्लीनता के बाद भी अचानक उनकी दृष्टि दरवाजे पर खड़े बच्चों पर पड़ गई। वे बोले– 'मैंने तुम्हें कहा कि कल आना, फिर भी अभी तक यहीं खड़े हो।' यह एकाग्रता ही योग, तप और जप है।

आज प्रत्येक व्यक्ति की जिज्ञासाएँ भौतिकता की ओर बढ़ रही हैं। कमाई से अधिक व्यय सुख-सुविधाओं की वस्तुओं पर हो रहा है। ऐसी स्थिति में आगे चलकर उसके सामने कई प्रकार की समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं, जो जीवन को ही नहीं बल्कि पूरे परिवार को संकटग्रस्त बना देती हैं। ऐसी परिस्थिति में सत्साहित्य का स्वाध्याय ही इस दलदल से बाहर निकाल सकता है। इस प्रकार श्रमसाध्य स्वाध्याय ही जीवन की कुंजी है। इसके द्वारा ही हम मन, कर्म व वचन से एकरूप होते हैं। यही जीवन का रहस्य तथा सफलता का मूलमंत्र है।

–दीपचंद सुथार
पृथ्वीराज का थड़ा, मालियों का मौहल्ला,
मेड़ताशहर-341510, जिला - नागौर (राज.)

स्वाध्याय सहायक कम्प्यूटर

वर्तमान समय कम्प्यूटर युग कहलाता है। जीवन के अधिकांश कार्य कम्प्यूटर के माध्यम से होने लगे हैं। कम्प्यूटर की एक महत्वपूर्ण भूमिका स्वाध्याय सहायक के रूप में भी है। स्वाध्याय के लिए सबसे सहज सहयोगी कम्प्यूटर है। शिक्षक के लिये स्वाध्याय का महत्व अधिक है। स्वाध्याय से प्राप्त ज्ञान शिक्षक के माध्यम से ही बालकों को मिल पायेगा। समाज बालक को केवल सीमित पाठ्यक्रम पढ़ने के लिए स्कूल नहीं भेजता है। समाज स्कूल के माध्यम से बालक का सर्वांगीण विकास चाहता है। कम्प्यूटर एक ऐसा सहयोगी है जो व्यक्ति को स्वाध्याय के लिए विश्व में भूत, वर्तमान व भविष्य की सभी जानकारियाँ उपलब्ध

करवाता है। 24 घण्टे में किसी भी समय कम्प्यूटर का उपयोग लिया जा सकता है। किसी भी समय कम्प्यूटर के माध्यम से सूचना व ज्ञान का आदान-प्रदान किया जा सकता है। सरकार द्वारा प्रारम्भिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, कालेज शिक्षा और शिक्षक प्रशिक्षण में कम्प्यूटर शिक्षा अनिवार्य करने की पहल की गई है। लिपिकीय स्तर पर नियुक्तियों में कम्प्यूटर प्रशिक्षण अनिवार्य कर दिया गया है। पूर्व में नियुक्त राज्य कार्मिकों को सरकारी खर्च पर कम्प्यूटर प्रशिक्षण की सुविधा उपलब्ध करवाई जा रही है। शिक्षा से जुड़ा कोई भी व्यक्ति अब कम्प्यूटर के ज्ञान से अनभिज्ञ नहीं है। राज्य के अधिकांश विद्यालयों में कम्प्यूटर के साथ इन्टरनेट की सुविधा उपलब्ध है। नैट का उपयोग स्वाध्याय में करके शिक्षक प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता है। कम्प्यूटर का उपयोग कर स्वाध्याय द्वारा ज्ञान प्राप्त कर शिक्षण कला को विकसित करने में शिक्षकों को पहल करनी चाहिए।

–महेन्द्र पाण्डे, व्याख्याता
राजकीय उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान, बीकानेर

प्रमादरहित स्वाध्याय

ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च। सत्यं च स्वाध्यायेप्रवचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवचने च। दमश्च स्वाध्याय प्रवचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजापतिश्च स्वाध्यायप्रवचने च॥

तैत्तिरीयोपनिषत् के अनुसार अध्ययन-अध्यापन करने वालों के लिए निम्न आवश्यक बातों का अनुसरण ही स्वाध्याय माना है– 1. यथार्थ आचरण। 2. सत्याचरण। 3. धर्मानुष्ठान करते हुए वेदादि-शास्त्रों का अध्ययन। 4. बुरे आचरण की ओर बढ़ने से इन्द्रियों को रोकना। 5. समस्त दोषों से मन को दूर रखना। 6. अग्नि और विद्युत को जानना। 7. पर्यावरण शुद्धि के लिए अग्निहोत्र (यज्ञ) करना। 8. अतिथियों (विद्वान, वृद्ध, असहाय जन) की सेवा करना। 9. सन्तान और राज्य का (सत्कर्मों एवं सम्यक उपभोग द्वारा) पालन करना। 10. ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए सन्तानों को पालना।

मन व इन्द्रियों को नियंत्रित करने के लिए योग आवश्यक है। योग दर्शन के दूसरे सूत्र में योग का स्वरूप बताया है कि– योगाश्चित्तवृत्तिनिरोध॥ योग चित्त (मन) की वृत्तियों को रोकता है। इन्द्रियाँ शरीर में बाहर की ओर स्थित है तथा इसके व्यापार भी बाह्य है। इन्द्रियाँ अपने विषय की ओर आकर्षित होती है। जिससे मन में विचलन पैदा होता है। योग से इन्द्रियों को विषय विरक्ति के साथ समाधि की ओर अर्थात् एकाग्रता प्राप्त करने में सहायता मिलती है। एकाग्र मन अपेक्षित स्वाध्याय के लक्ष्य तक पहुँचने में सहायक होता है। मन नियंत्रित हो जाय तो अन्तर निर्मल हो जाता है। अन्तर की निर्मलता बुद्धि को निर्मल कर कुशाग्रता प्रदान करती है। चिन्तन से सत्य का साक्षात्कार एवं ईश्वर से एकाकार प्रारम्भ हो जाता है। योग में प्रवेश से पूर्व यम– तत्राहिंसासत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहायमा।

इसके तहत मन, वचन एवं कर्मसे अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना) ब्रह्मचर्य व अपरिग्रह– पाँच कर्त्तव्यों का पालन आवश्यक है। इसी प्रकार जीवन की उन्नति के लिए नियम– शौचसन्तोषंतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः॥ के अनुसार पवित्रता (शौच) सन्तोष- प्रत्येक स्थिति में, तप-दुःखों को दृढ़ता से सहन करना, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान ईश्वर के प्रति पूर्ण आस्था रखना आवश्यक है। आचरण की पवित्रता ईश्वर का सामिप्य दिलाने के साथ निष्काम कर्म की ओर प्रेरित करती है। आस्थावान बनने से जीवन चतुष्टय के अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करना सहज हो जाता है। मनुस्मृति में मनु लिखते हैं–

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतेः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मियं क्रियते तनुः॥

स्वाध्याय मनुष्य में ब्राह्मणत्व अथवा श्रेष्ठता उत्पन्न करता है। आचार्यगण भी दीक्षान्त समारोह में शिष्यों को जिस अनुशासन की सीख देते हैं। उसका विवरण तैत्तिरीयोपनिषत् में मिलता है–

वेदमनूच्चार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर।

–सुरेश चन्द्र खटीक, प्रधानाचार्य
रा.उ.मा.वि., धानमण्डी, उदयपुर-313001

स्वाध्याय

विद्यालय के लिए ठीक ही कहा गया है–
'यहाँ रत्न मत खोज, यहाँ मानव ढलता है।
यह मंदिर ज्ञान का- जहाँ दीपक जलता है।'

अर्थात् विद्यालय ही समाज में एक मात्र स्थान है, जहाँ पर बालकों का सर्वांगीण विकास होता है। विद्यालयरूपी ज्ञान के मंदिर में बालक शिक्षा ग्रहण कर सम्पूर्ण मानवता के लिए प्रस्थान करता है। विद्यालय में शिक्षा अध्ययन के साथ-साथ, स्वाध्याय, नैतिक व चरित्र की शिक्षा भी प्रदान की जाती है।

कक्षा में शिक्षक बालकों को स्थायी ज्ञान प्राप्त करने हेतु उन्हें स्वाध्याय की प्रवृत्ति की ओर भी अभिप्रेरित करता है। बालक अपनी-अपनी प्रतिभा के अनुसार मानसिक रूप से, प्रश्नों के उत्तर, परिभाषा, सूत्र-सिद्धान्त, चित्र भावार्थ, व्याख्या, प्रायोगिक कार्य एवं शब्दार्थों को स्वाध्याय के द्वारा ही उन्हें कंठस्थ कर पाते हैं।

स्वाध्याय की प्रवृत्ति आज नई नहीं हैं, पूर्व में गुरुकुल, आश्रम, मदरसों व गुरुद्वारों में भी प्रचलित थी। शिष्य अपने गुरुजी। पंडित, मौलवी, कुशल शिक्षकों के मार्गदर्शन में निरन्तर चिंतन, मनन एवं ज्ञानार्जन का प्रयास करते थे। आज भी वही प्रणाली, विज्ञान के मौलिक युग में पुनः बालकों के लिए चरितार्थ हो रही है।

बिना स्वाध्याय के बालकों का ज्ञान अधूरा सा रहता है, उसे अपने

अर्जित ज्ञान को लिखकर, प्रयोग कर, मौखिक व चित्रांकन के माध्यम से स्वाध्याय की प्रवृत्ति से ही पुनः कसौटी पर परीक्षण करना पड़ता है।

स्वाध्याय की ताकत में अभिवृद्धि हेतु, घर पर अभिभावक, विद्यालय में सहपाठी, विभिन्न दृश्य एवं श्रव्य सामग्री, घर का वातावरण, बालकों की शैक्षिक रुचि एवं परिश्रम आदि घटक उत्तरदायी माने गये हैं। जब तक बालक स्वतः ही अपने मन को एकाग्रचित कर अध्ययन नहीं करेगा। तब तक वह स्वाध्याय की प्रवृत्ति की ओर अग्रसर नहीं होगा।

अतः स्वाध्याय के लिए घर-परिवार-शिक्षक, उपलब्ध शैक्षिक साधन मित्र-मंडली आदि सभी आयाम बालक को स्वाध्याय के लिए प्रेरणा प्रदान करते हैं।

स्वाध्याय से ही बालक विभिन्न शैक्षिक, सहशैक्षिक प्रवृत्तियों में अपनी सहभागिता प्रदान कर विभिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों में निपुणता हासिल कर सकता है। विभिन्न पाठ्यसहगामी प्रवृत्तियाँ जैसे– कविता, वादविवाद, भाषण, नाटक, एकाभिनय, अंत्याक्षरी, खेल एवं विभिन्न विद्यालय स्तर पर आयोजित प्रतियोगिताओं में सहभागिता प्रदान कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में निपुण हो सकता है।

स्वाध्याय के बल पर ही बालक, डॉक्टर, इंजीनियर, खिलाड़ी, कवि, लेखक, पत्रकार, वैज्ञानिक, ज्योतिष एवं विभिन्न संस्थानों में अपनी प्रतिभाओं का प्रदर्शन कर सकता है।

हमें कक्षा में बालकों को स्वाध्याय के प्रति रुचि व लगन उत्पन्न करने के लिए विभिन्न महापुरुषों, वैज्ञानिकों व राष्ट्र व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के श्रेष्ठतम चयनित प्रतिभाओं के उदाहरण व संस्मरण प्रस्तुत किये जाने चाहिए।

स्वाध्याय की प्रवृत्ति को सकारात्मक बनाने में, बालक का स्वस्थ शरीर, शुद्ध व सात्विक भोजन, नियमित व्यायाम, योगासन, प्रातःकालीन भ्रमण आदि घटक भी जिम्मेदार हैं।

बालकों का अध्ययन व स्वाध्याय में ध्यान केन्द्रित करने के लिए दादा-दादी व नाना-नानी की प्रेरक कहानियाँ-गीत व पर्व-त्यौहार के अवसर पर प्रस्तुत किये जाने वाले भजन-गीत व रस्म भी बालकों को अभिप्रेरित करती है।

अन्त में–

कोई भी मंजिल
तुमसे रह सकती
दूर नहीं
साथियों
पाँव बढ़ाना होगा
इतनी शर्त जरूर है।

–हरीश कुमार वर्मा, पूर्व प्राचार्य
15, न्यू त्रिमूर्ति कॉम्पलेक्स, हि.म. से.4,
वैशाली अपार्टमेंट के आगे, उदयपुर

स्वाध्याय और व्यावसायिकता

कर्मों में कुशलता लाना योग है तो व्यावसायिकता में निपुणता लाने की कुंजी स्वाध्याय है। छन्दोग्य उपनिषद में कहा गया है– त्रयो धर्म स्कन्धा यज्ञोअध्ययनंदानमिति अर्थात् धर्म के तीन स्तम्भ है यज्ञ, स्वाध्याय एवं दान। वैदिक वाङ्मय में वेद से श्रीमद्भगवदगीता स्वाध्याय के महत्त्व को स्वीकार किया गया है। स्वाध्याय के द्वारा हमारे द्वारा किये गये या किये जाने वाले कर्मों का चिन्तन कर सकते हैं।

चाहे शिक्षक हो या व्यवसायी चाहे कलाकार हो, चाहे कोई भी जीविकोपार्जन हेतु किये जाने वाले कार्य ही स्वाध्याय के द्वारा व्यावसायिक निपुणता ला सकते हैं।

स्वाध्याय का शाब्दिक अर्थ है– स्व+अध्ययन जो विश्राम के समय एकाग्रचित होकर किये गये एवं भविष्य में किये जाने वाले कर्मों में हमारा व्यवहार आचरण, कार्य कुशलता, कार्य क्षमता, ईमानदारी, कर्तव्य निर्वहन आदि में हमारी सफलता और असफलता के कारणों पर गहन चिन्तन करवाता है।

स्वाध्याय में पारायण से तथा उस पर आचरण करने से जीवन में सब प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। जब मनुष्य इन सब सिद्धियों का उपयोग ईश्वरीय कार्य में करता है, तो उसे मोक्षानन्द की प्राप्ति होती है। ज्ञान से कर्म करेंगे तब सामर्थ्य प्राप्त होगा जिससे हमें आनन्द प्राप्त होगा। ज्ञान प्राप्त करने का एक ही मार्ग है 'स्वाध्याय'।

मैंने स्वाध्याय किया मेरे व्यावसायिक क्षेत्र स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा में। शारीरिक शिक्षक होने के नाते पहला स्वाध्याय से कार्य किया प्रार्थना सभा का।

प्रार्थना में महान आध्यात्मिक शक्ति है। प्रार्थना से मन शुद्ध पवित्र एवं निर्मल होता है। पतित आत्मा भी प्रार्थना द्वारा बल प्राप्त कर नूतन तेज से उद्दीप्त हो उठती है। व्यक्ति जिस प्रकार का चिन्तन करता है उसका स्वभाव भी वैसा ही परिवर्तित हो जाता है। प्रार्थना मन की भावना को दिशा प्रदान करती है।

दूसरा क्षेत्र है शाला प्रवेश उत्सव जुलाई माह में बालकों का विद्यालय प्रवेश होता है। नया बालक हमारे आचरण को जिज्ञासापूर्वक देखता है। वैदिक संस्कृति में 'उपनयन' तथा वेदारम्भ संस्कारों के रूप में प्रचलित थी। उपनयन का शब्दार्थ है– उप = समीप, नयन = ले जाना। विद्याध्ययन के लिए शिष्य को गुरु के समीप ले जाना उपनयन कहलाता है। यही आज का शाला प्रवेश उत्सव है अर्थात् किसी कार्य को योजनापूर्वक एवं अनुकूल वातावरण निर्माण करके किया जाता है तो उसका वांछित परिणाम प्राप्त होता है। व्यावसायिक निपुणता में धर्मपालन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोअवधीत॥

जो धर्म की रक्षा करता है धर्म उसकी रक्षा करता है अतः धर्म को नष्ट मत होने दो क्योंकि नष्ट होता हुआ धर्म पलटवार करता है। शिक्षा का क्षेत्र हो या खेल का अयोग्य विद्यार्थी को योग्य विद्यार्थी से अधिक मूल्यांकन देना, खेल के निर्णायक कार्य में पक्षपातपूर्ण निर्णय देना, उसके साथ अशोभनीय व्यवहार करना उसकी आत्मा को ठेस पहुँचाना आदि वेदशास्त्रों में अधर्म की श्रेणी में माना गया। इसी श्रेणी में असत्य बोलना भी अधर्म में गिना गया है। इन सब आचरण या व्यवहार को स्वाध्याय के द्वारा दूर किया जा सकता है।

खेल के क्षेत्र में मैंने तीरंदाजी खेल को व्यावसायिक निपुणता के लिए चुना था। इस खेल के नियम एवं प्रशिक्षण के लिए गहन अध्ययन किया तो मुझे राष्ट्रीय स्वर्णपदक विजेता दल के प्रशिक्षक बनने का फल मिला तथा उस खेल की बारीकियों के बारे में ज्ञान प्राप्त हुआ है। स्वाध्याय के माध्यम से हम हमारे किसी भी व्यावसायिक क्षेत्र की महारथ हासिल कर सकते हैं अतः गहरा चिन्तन करते हुए धर्म के मार्गों को अपनाएँ तब हमें स्वतः ही आभास हो जायेगा कि स्वाध्याय की ताकत में कितनी व्यावसायिक निपुणता निहित है।

–गिरधारी लाल सेन, शारीरिक शिक्षक
राजकीय माध्यमिक विद्यालय, मनिहारी, जिला - पाली (राज.)

स्वाध्याय की महत्ता

आधुनिक अर्थप्रधान युग में चारों ओर प्रतिस्पर्धा मची हुई है। व्यक्ति अधिकाधिक धनार्जन हेतु सतत प्रयत्नशील है, चाहे वह किसी भी कार्यक्षेत्र से जुड़ा हो। उचित-अनुचित साधनों से वह धन-प्राप्ति में जुटा हुआ है इस प्रयास में वह अपने शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के प्रति भी उदासीन होता जा रहा है। धन की अप्राप्ति की अवस्था उसे विचलित कर रही है। मानसिक शान्ति के अभाव के परिणामस्वरूप वह अनेक प्रकार के रोगों जैसे– अवसाद, चिड़चिड़ापन, तनाव, आदि से ग्रस्त होता जा रहा है। मानसिक अवसाद की स्थिति में वह चाहे-अनचाहे आपराधिक प्रवृत्तियाँ अपना रहा है। सम्बन्धों की गरिमा भूल रहे हैं। रिश्ते तार-तार हो रहे हैं। कई बार व्यक्ति आत्महत्या कर बैठता है। कुत्सित मानसिकता, अनैतिकता को जन्म दे रही है, संवेदनशीलता लुप्त होती दिखाई दे रही हैं। दूरदर्शन की भी इसमें कम भूमिका नहीं है। वह उसे समाज से दूर करने में अधिक सिद्ध हो रहा है। व्यक्ति उससे लाभ के स्थान पर हानि अधिक ग्रहण कर रहा है।

ऐसे में याद आता है वैदिक उद्घोष– 'स्वाध्यायान्मा प्रमदः' अर्थात् 'स्वाध्याय में प्रमाद मत करो।' वेदों में स्वाध्याय का महत्व विस्तृत रूप से वर्णित है। स्वाध्याय व्यक्ति को मानसिक शांति प्रदान करता है। वह जो भी अध्ययन, चिंतन, मनन करता है उसे अपने जीवन में उतारता है। सत्साहित्य का अध्ययन उसे गुणों की उत्कृष्टता की ओर ले जाता है। सोचने की शक्ति ही तो मानव को अन्य प्राणियों से अलग करती है, अतः वह निरन्तर मननशील रहकर अपने कार्यों में निपुणता प्राप्त कर सकता है। स्वाध्याय से मन की स्थिरता, दृढ़ता व धैर्य में वृद्धि होती है। मन विचलित नहीं होता। वह कठिनाइयों के सागर से, कष्टों की मझधार में विवेक की पतवार से अपनी नौका को बड़ी सरलता के साथ सफलतारूपी किनारों तक पहुँचा ही देगा।

स्वाध्याय वह 'माध्यम' है जो मानव की सोच को जमीन से जुड़े रहकर भी आकाश की ऊँचाइयों तक ले जाता है अधिकाधिक अध्ययन उसकी विचारशक्ति को, उसके सोच के क्षेत्र को विस्तार देता है। जैसे-जैसे वह इस क्षेत्र में आगे बढ़ता है उसका ज्ञान सिन्धु की गहराइयों को प्राप्त करता जाता है। स्वाध्याय से समाज में एक सुसंस्कृत प्राणी का निर्माण होता है।

आज हमने अनेक प्रकार की उपाधियाँ, जैसे स्नातक, स्नातकोत्तर, शिक्षा-स्नातक, अधिस्नातक, पीएच.डी., एम.फिल., इंजीनियरिंग, सी.ए. आदि अर्जित कर ली हैं। इनके आधार पर राजकीय अथवा निजी क्षेत्र में सेवा मिल जाने पर हम अध्ययनकार्य पर पूर्ण विराम लगा देते हैं। ज्ञानार्जन के स्थान पर सेवा प्राप्ति ही हमारा मुख्य लक्ष्य बन गया। अगर यही हमारी सोच रही तो यह हमारे माता-पिता के अथक प्रयासों के साथ अन्याय होगा। वे हमें श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर व श्रेष्ठतम देखना चाहते हैं पर हमने तो ज्ञान के अथाह सागर से एक चम्मच भी नहीं भरा और मान बैठे स्वयं को सर्वज्ञ। हमारे लिए तो जीवन पर्यन्त अध्ययन करना ही श्रेयस्कर है। अध्ययन के सागर में निरन्तर गोते लगाना और मोती रूपी ज्ञान ढूँढ़कर लाना ही हितकर होगा। और इसके लिए सर्वश्रेष्ठ मार्ग है स्वाध्याय, जो हमारे जीवन में नित्य नये आयाम स्थापित करेगा।

शिक्षक के परिप्रेक्ष्य में देखा जाए, तो उनके लिए तो स्वाध्यायरत होना अत्यावश्यक है। इससे उनका ज्ञान अद्यतन, परिष्कृत, उत्कृष्ट व समसामयिक होगा। अध्यापन के नवाचारों से वह अवगत होंगे तो उनका अध्यापन और अधिक निखरेगा। उनके व्यक्तित्व, मनोबल और आत्मविश्वास में अनवरत वृद्धि होगी। तभी तो वे वास्तविक अर्थों में भावी पीढ़ी के निर्माण में सहायक होंगे। लेकिन वास्तविकता तो यह है कि आजकल हर क्षेत्र में कार्यरत व्यक्ति अध्ययनशीलता से नाता तोड़ता हुआ प्रतीत हो रहा है। शिक्षक भी इससे अछूते नहीं रहे। अपने पाठ्यक्रम को पूरा कर वह अपने कार्य की इति-श्री समझने लगे हैं। उन्हें विविध प्रकार के साहित्य, दैनिक, पाक्षिक व मासिक पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन करते रहना चाहिए और उससे प्राप्त अमूल्य जानकारियों से अपने विद्यार्थियों को अवगत कराना चाहिए। अधिकाधिक अध्ययन से हमारे शब्दकोश में वृद्धि होगी, हमारा संप्रेषण प्रभावी होगा।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अपने जीवन में स्वाध्याय को महत्वपूर्ण स्थान देकर हम हमारे ज्ञान, संप्रेषणशक्ति, आत्मबल और

सकारात्मक सोच को विकसित कर सकते हैं।

–अपर्णा दवे, अध्यापिका
रा.मा.वि., पानमोड़ी, जिला - प्रतापगढ़ (राज.)

स्वाध्याय

मुझे साहित्य में रुचि बचपन से ही रही है, परिवार में अध्ययन-अध्यापन का वातावरण रहा है। कालेज में वाणिज्य विषय में स्नातक और फिर स्नातकोत्तर भी व्यावसायिक प्रशासन ने भी मुझे साहित्य से दूर नहीं किया लेकिन शिक्षा साहित्य में मेरी कुछ विशेष रुचि नहीं थी। पर जाना था कहाँ और पहुँचा कहाँ। वाणिज्य विषय लेकर बी.एड. कर लिया फिर अध्यापक भी बन गया वह भी प्राथमिक शिक्षा में।

जैसा कि प्रायः होता है नए अध्यापकों को पहली-दूसरी कक्षा दी जाती है फिर एकल विद्यालय में तो ऐसा होता ही है। दूरस्थ आदिवासी विद्यालय में वर्णमाला को क्रमशः जानना, बार-बार दोहराना, पहचान पूछना जैसा परम्परागत शिक्षण शुरू किया उत्तर में खामोशी ही मिलती।

प्रधानाध्यापक जी से बात की पर उन्हें भी कुछ विशेष जानकारी नहीं थी। तब ताला लगी पेटीनुमा लाइब्रेरी में से शिक्षण विधा पर पुस्तकें खोजी। गिजु भाई की 'दिवास्वप्न' निकाली एक बार में ही पढ़ ली। उनका विचार 'जो मिशन की भावना से मैदान में उतरता है वही साहस की बात सोच पाता है यदि अपने देश की शिक्षा को बदल देने का मिशन हो तो आसानी से किया जा सकता है।' मैं इससे प्रभावित हुआ, पर मुझे जो चाहिए था वह इस पुस्तक से नहीं मिला, तब उनकी लिखी पुस्तक 'मोंटीसोरी पद्धति को पढ़ा जिसमें बाल सम्मान, विश्लेषण, प्रभावी व सरल शैली को समझा। साथ ही उनकी पुस्तकें प्राथमिक शाला में शिक्षापद्धति, भाषा, शिक्षा, शिक्षक, चिट्ठी आदि को पढ़ा और इसे स्थानीयता से जोड़ा।

इन सबका निचोड़ प्राथमिक विद्यार्थियों को खेल-खेल में शिक्षा, आनन्ददायी शिक्षा, सहायक सामग्री का प्रयोग, कविताएँ याद करवाना, कहानियाँ सुनाना जैसी बातों के साथ ही सरलता से शिक्षता के रूप में आया। पहले एक माह तक सिर्फ अक्षर पहचानना, फिर 15-15 दिन तक एक-एक मात्रा का ज्ञान, बार-बार पढ़वाना और शान्त भाव से, धैर्यपूर्वक एक-एक विद्यार्थी की क्षमता को समझकर व्यक्तिगत शिक्षण ने मुझे सफलता दी। पाठ्यपुस्तक के साथ ही बाजार से बगैर मात्रा के शब्द, एक-एक मात्रा के शब्द वाली पुस्तक के पृष्ठों को लेमिनेशन करवाकर पढ़ाना जैसा प्रयास भी किया। स्लेट, चॉक नहीं लाने वाले विद्यार्थियों को फर्श पर लिखवाना आदि किया। बड़ी संख्या में विद्यार्थी पुस्तक पढ़ने लगे। गाँव में आते-जाते नमस्ते करने वाले अभिभावकों की संख्या भी बढ़ गई।

यह प्रारम्भिक ज्ञान आज 22 वर्ष की नौकरी एवं प्रधानाध्यापक बनने के बाद भी उपयोगी है आज भी पहली-दूसरी कक्षा में पढ़ाता हूँ। फिर अब तो गुरुमित्र, पहर कक्ष आदि अनेकानेक सुविधाएँ, शिक्षण सामग्री, नवाचार प्रशिक्षण चल रहे हैं और मेरा शिक्षण स्तर भी उत्कृष्ट हो रहा है।

–भारत दोसी, प्रधानाध्यापक
58/5, मोहन कॉलोनी, बांसवाड़ा (राज.)

स्वाध्याय की ताकत

स्वाध्याय स्व से मिलता है, स्वाध्याय सपने जगाता है, अनोखा अहसास करवाता है, औरों से हटकर बनाता है, आत्मविश्वास बढ़ाता है, नवसृजन की संकल्पनाएँ देता है, मानसिक विकास को नये आयाम देता है, इन सबसे ऊपर एक सुखद सन्तुष्टि देता है स्वाध्याय।

आजकल हम इससे हटने लगे हैं, एक बँधी-बँधाई दिनचर्या से नीरसता पसरती जा रही है। कम्प्यूटर के सामने अपने को असहाय सा, अल्पबुद्धि समझने की भूल करने लगे हैं। गिटर-पिटर अंग्रेजी बोलने वालों के समक्ष अपने को हीन समझने लगे हैं। ... बस ... यही गलती कर रहे हैं। क्योंकि हम स्वाध्याय से दूर हो रहे हैं, उसकी ताकत को भूल रहे हैं। स्वाध्याय केवल विद्यार्थियों के लिए है... यही सोच रहे हैं, हैं ना? हमारी इस गलती का प्रभाव हमारी शिक्षण शैली पर पड़ रहा है एक रटी रटाई मशीन की तरह कोर्स पूरा करवाने में जुटे केवल किताबी ज्ञान बालकों को परोस रहे हैं। मजबूरी भी है शिक्षण के साथ अन्य जिम्मेदारियों व कार्यों को भी करना पड़ता है। फिर लम्बा चौड़ा कोर्स करें भी तो क्या?

पर यह भी सच है हम स्वाध्याय से अपने चिन्तन-मनन से अपनी मौलिकता द्वारा शिक्षण को रोचक रूप दे सकते हैं। हमें अपनी स्व की ताकत को याद करना होगा अपने अन्दर छिपे उस शिक्षक को बाहर लाना होगा जो कुछ वर्षों पूर्व था ये भी तो स्वाध्याय से ही होगा। हम उसे बिसरा चुके हैं। थोड़ा समय अपने लिये देना होगा ताकि हमारी खोई ताकत का अहसास कर सकें। हमारी मौलिक और रोचक शिक्षण प्रणाली हमें औरों से अलग बनाती है। यही जादू बालकों में प्रसिद्धि दिलाता है। भीड़ में एक चेहरा जिसे बालक खोजता है। हम अपने विद्यार्थी जीवन में झांकें तो पाएँगे एक ऐसा चेहरा जो आज भी स्मृति पटल पर जीवन्त हो जाता है। और हमें उनके जैसा बनने की ललक जगाता है।

मेरा अपना एक अनुभव है मेरा अंग्रेजी विषय से कोई विशेष वास्ता न रहा किन्तु परिस्थितिवश इस विषय को पढ़ाने का जिम्मा मिला वह भी बोर्ड कक्षाओं का मैं बिल्कुल भी निपुण नहीं थी पर इसी स्वाध्याय के बल पर मैं कई वर्षों पीछे लौट गई कक्षा आठवीं के अंग्रेजी शिक्षण में एक चेहरा उभरकर आया... नारायण जी ठोड़ीयाल ... उनकी पढ़ाई अंग्रेजी मानसपटल पर यूँ की, यूँ अंकित थी ... उसी की डोर पकड़कर पढ़ाना

शुरू किया। कई वर्षों से पढ़ा रही हूँ और शत-प्रतिशत परिणाम भी दे रही हूँ। जबकि विषय अध्यापक नहीं हूँ। कई बार निरीक्षकों द्वारा सराहना भी मिली, इन सबसे ज्यादा खुशी जब मिलती है तब बालक मेरा बेसब्री से इन्तजार करते हैं। बस मैंने अपने नये तरीके इजाद किये और चल पड़ी नई राह पर।

समय चुनौतियाँ फेंकता है, हमें उनका सामना करना पड़ता है। आज ज्ञान का विस्फोट हो रहा है, कम्प्यूटर में ज्ञान का सागर लहरा रहा है, परन्तु बालक भ्रमित है बिना पतवार की नाव में गोते लगा रहा है... हम हैं उनकी पतवार ... कितना ही ज्ञान क्यों न पसरा हो आज भी हमारी महत्ता कम नहीं हुई है... रट्टू तोते बन रहे बालकों को स्वाध्याय के माध्यम से ही बचाना है। मैंने सुना, भूल गया। मैंने देखा, कुछ याद रहा। मैंने किया, समझ गया।' मशीनों और हमारे में एक अन्तर है। अहसास का, उसी के सहारे सम्प्रेषण से ही बालक सफल होगा। हमें अपनी ताकत को कम नहीं आँकना है, इस ज्ञान के महासागर के थपेड़ों के समक्ष अपने को स्थापित करना है। इसी स्वाध्याय की ताकत ने एक भील बालक को (एकलव्य) इतिहास के पन्नों पर अमर कर दिया।

कोई सन्त अपनी ओजस्विता से छा जाता है, हजारों की भीड़ निशब्द हो उन्हें सुनने को आतुर रहती है... क्यों? यह स्वाध्याय का ही कमाल है। हमने इसे खो दिया तो समझो शिक्षत्व खो दिया। यह भी सच है कि कम्प्यूटर युग में बैलगाड़ी की चाल का कोई औचित्य नहीं, हमें एक सजग, उत्साही, नवीनता से भरा शिक्षक बनना होगा।

'ज्ञान का अब ना करो प्रदर्शन,
आज नहीं चलता यह दर्शन।
बच्चों में बच्चे बन जाओ,
सच्चे शिक्षक तब कहलाओ।'

कुछ कर गुजरने की चाह दिल में है तो... क्या ... सोचना, सोचो पर जुनून के साथ।

–शकुन्तला सोनी 'शकुन', अध्यापिका
रा.बा.मा.वि., टेकरी, उदयपुर

स्वाध्याय की ललक - दर्शाए जीवन की अनुपम झलक

'शिक्षक वही है जो आजीवन विद्यार्थी बना रहे।' डॉ. राधाकृष्णन की यह पंक्ति शिक्षक के व्यक्तित्व को सबसे अच्छा परिभाषित करती है। प्राप्त ज्ञान को सुरक्षित एवं विकसित करते रहने के लिए यह नियम बनाया गया है कि हम स्वाध्याय करें। इससे प्राप्त ज्ञान के सन्दर्भ में हमें अपनी दुर्बलता का ज्ञान होता है और उसके सन्दर्भ में नवीन क्षितिज का उद्घाटन होता चलता है। उसकी व्याप्ति में वृद्धि होती है।

'अभ्यासानुसारेण विद्या' अर्थात् विद्या अध्यवसाय द्वारा प्राप्त होती है। जब तक नदी को उसका गन्तव्य समुद्र प्राप्त नहीं होता है तब तक उसकी धारा रुकती नहीं है, जब तक देवताओं को अमृत की प्राप्ति नहीं हुई तब तक वे समुद्र का मंथन करते रहे। वास्तविक जिज्ञासु अध्येता वही होता है जो विषय का सम्पूर्ण ज्ञान न होने तक चिन्तन-मनन करता रहे व जिज्ञासाओं के शान्त होने पर ही चैन की श्वाँस ले। विषय के सन्दर्भ में उक्त प्रकार की बेचैनी ही सच्चे अध्ययन की पहचान है। स्वाध्याय का अर्थ पढ़ने और गुनने अर्थात् अपने भीतर देखते रहने से है। अध्ययन से चिन्तन होता है तथा चिन्तन-मनन से मस्तिष्क को गहराई मिलती है। अध्ययन की सार्थकता यह है कि हम रचनाकार की आत्मा तक पहुँच जाएँ और नया प्रकाश एवं नई दिशा की प्राप्ति कर सकें, मात्र शब्द-ज्ञान अध्ययन नहीं कहा जा सकता है। मात्र शब्द-ज्ञान तो मस्तिष्क के लिए भार स्वरूप हो जाता है। शब्दार्थ में निहित ज्ञान की प्राप्ति ही अध्ययन का सुफल कहा जाता है। लाउत्से ने ठीक ही कहा है कि अनेक वस्तुओं के अधूरे ज्ञान की उपेक्षा कुछ न जानना अच्छा होता है। संत कबीर ने इस तथ्य को अपनी काव्योचित भाषा में इस प्रकार व्यक्त किया है–

जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान॥

एक महान व्यक्ति ने जीवन के समस्त अनुभवों को एक ही पंक्ति में सारबद्ध किया है– **प्रबुद्धतम मन के लिए अभी भी सीखना शेष रहता है। जिस प्रकार नदी का जल प्रवाह उसके जल को स्वच्छ एवं निर्मल बनाए रखता है उसी प्रकार सीखना जीवन की जीवन्तता को व्यक्त करता है।** सीखने की इच्छा सनातन है। शिक्षक छात्रों के लिए वह मार्गदर्शक होता है, जिसके सान्निध्य में भविष्य की कार्य योजना निर्मित की जाती है। एक कहावत है– 'कम ही मस्तिष्क होते हैं जो काम के नहीं रहते, अधिकतर में जंग लग जाता है।' सतत स्वाध्याय के द्वारा मस्तिष्क को जंग लगने से बचाया जा सकता है। शिक्षक किसी भी राष्ट्र की शिक्षा व्यवस्था के प्राण-तत्व कहलाते हैं, राष्ट्र की बगिया के चतुर माली हैं जो विद्यार्थियों में संस्कारों का सृजन कर राष्ट्रीय चेतना का विकास करते हैं। स्वाध्याय की प्रवृत्ति मानसिक भोजन को रसरूप बनाकर आत्मसात करने में सहयोग करती है। इस प्रक्रिया में प्राप्त ज्ञान को भूल जाने का प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता है। इसी को लक्ष्य करके कहा जाता है कि विद्या कण्ठे, धन अण्टे। धन वही काम में आता है जो पास में, अपनी अण्टी में है, वही विद्या (ज्ञान) काम में आती है जो कण्ठस्थ है। वास्तव में सफल शिक्षक, वही है जो जीवन पर्यन्त समय के साथ चलते हुए अपने ज्ञान में वृद्धि करे तथा अपने पढ़ाने के तौर-तरीकों में प्रगतिशील विधाओं या तकनीकों को सम्मिलित करने की भावना विकसित करे।

बड़ी विडम्बना है कि आज हम शिक्षा जैसे क्षेत्र जो व्यावसायिक कार्य मानने की भूल करने लगे हैं, स्वाध्याय से परहेज कर रहे हैं। विद्वानों के साहित्य में हमें कोई लाभांश नजर नहीं आ रहा है। विद्यालय की पुस्तकें

मात्र पुस्तकालय की शोभा रह गई हैं। ये बातें हमारे पद एवं व्यवसाय के प्रतिकूल हैं। आज दुनिया के तीव्र विकास की गति के कारण ज्ञान का भंडार दिनों-दिन विशाल हो रहा है ऐसे में स्वाध्याय ही एक रास्ता है। हम विभिन्न शिक्षाविदों व उनके प्रयोगों को पढ़कर अपनी ऊर्जा की सकारात्मक खपत से काफी ज्ञान बालकों को दे सकते हैं।

स्वाध्याय के द्वारा हम अपनी विधाओं का विश्लेषण व विवेचन करने की आदत विकसित कर सकते हैं। अतः शिक्षक को आजीवन विद्यार्थी बनकर रहना ही होगा यही उसका धर्म है और कर्तव्य भी। शिक्षक को चाहिए कि वह स्वयं अध्ययनशील बने। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी कहा है कि 'एक अध्यापक कभी भी वास्तविक अर्थों में नहीं पढ़ा सकता, जब तक कि उसकी अपनी ज्योति जलती न रहे। जब तक दीपक जलना बंद कर देता है तो उसका प्रकाशित होना बंद हो जाता है। जो **शिक्षक सीखना बंद कर देता है वह शिक्षक नहीं रहता** क्योंकि सीखना और सिखाना, पढ़ना और पढ़ाना दोनों साथ-साथ चलने वाली प्रक्रियाएँ हैं। स्वाध्याय शिक्षक की प्रथम आवश्यक शक्ति है। उसमें नव प्रकाशित पुस्तकों को पढ़ने तथा शिक्षा सम्बन्धी अच्छे लेखों को पढ़ने की भावना होनी चाहिए। मनु स्मृति में उल्लेख है– 'स्वाध्याये नित्य युतुः स्यात्।' अर्थात् स्वाध्याय में नित्य तत्पर रहना चाहिए। स्वाध्याय से ज्ञान में वृद्धि होती है, विवेक जाग्रत होता है। विवेक वस्तुतः हमारा प्रेरक भी है और मार्गदर्शक भी है। एक विद्वान के अनुसार विवेक बुद्धि की पूर्णता है।

सर फ्रान्सिस बेकन का कथन है– 'अध्ययन से आनन्द मिलता है, अभिव्यक्ति में सौन्दर्य आता है तथा योग्यता बढ़ती है।' विश्व में जितना ज्ञान है वह सब पुस्तकों में निहित है। समस्त ज्ञान पुस्तकों के द्वारा ही प्रकाश में आता है। लोकमान्य तिलक ने कहा है– 'मुझे नरक में भेज दो, मैं वहाँ भी स्वर्ग बना लूँगा, यदि मेरे पास अच्छी पुस्तकें हों।' काल के विशाल सागर में पुस्तकें दीप-स्तम्भ के तुल्य हैं जो भूले-भटके राही को रास्ता दिखाती हैं। पुस्तकें ज्ञान का अपार भंडार हैं। हमारी पथ-प्रदर्शक हैं, सच्चा मित्र व अकेलेपन का साथी हैं। अच्छी पुस्तकों के अध्ययन से मानसिक प्रशिक्षण मिलता है। ज्ञान वृद्धि के लिए, ज्ञानोपासना के लिए पुस्तकों का अध्ययन एक महत्वपूर्ण आधार हैं। मिल्टन ने कहा था– 'अच्छी पुस्तक एक महान आत्मा का जीवन रक्त है।' स्वाध्याय जीवन विकास की महती आवश्यकता है। स्वामी विवेकानन्द अठारह घंटे स्वाध्याय करते थे। पुस्तकों को पढ़ने एवं पढ़ी हुई बातों पर चिन्तन करने से श्रेष्ठ विचारों का उदय होता है। डॉ. अम्बेडकर का अध्ययन के प्रति एक वाक्य– 'कम खाओ, अधिक पढ़ो' था। स्वाध्यायशीलता एवं पढ़े हुए को जीवन में रचाने-पचाने के अभ्यास ने गाँधी जी को महान् बना दिया था। एक दीप दूसरे दीप को तब तक प्रज्वलित नहीं कर सकता जब तक कि वह अपनी लौ से स्वयं प्रज्वलित न होता रहे।

आज हमारे शिक्षक वर्ग के लिए यह आवश्यक है कि वह स्वाध्याय को अपनी आदत में शामिल करे। ग्रीष्मावकाश का सदुपयोग 'स्वाध्याय' से श्रेष्ठ कुछ नहीं हो सकता। शिक्षक अपने ज्ञान द्वारा शिक्षा में संवर्द्धन एवं निर्वहन हेतु एक उत्कृष्ट मार्गदर्शक के साथ अपनी संस्कारमयी शिक्षा को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित करता है। वह ज्ञान-गरिमा का उज्ज्वल आधार है। जीवन का सर्वोत्तम उपयोग उसे किसी ऐसे कार्य में बिताना है जो जीवन के बाद भी बना रहे। भावी पीढ़ी का मार्ग प्रशस्त करने का स्वर्णिम अवसर शिक्षक के पास ही है। वह अपना ज्ञान-दीप जलाकर ज्योति प्रदान करता रहे।

'स्वाध्यायान्मा प्रमदः।'

–पूनम, अध्यापिका
जिला उद्योग केन्द्र के सामने, रीको, झुंझुनूं

स्वाध्याय -शिक्षक का मूलधर्म

स्वाध्याय - प्रत्येक मनुष्य के लिए हितकर है। स्वाध्याय मन की दुर्बलता से मुक्ति दिलाता है। स्वाध्याय का सामान्य अर्थ पढ़ना और गुनना भी है। अर्थात् अपने भीतर झाँक कर देखें कि हम क्या हैं? कैसे हैं? कहाँ हैं? किस ओर अग्रसर हैं? जीवन के मूल्यों की प्राप्ति हेतु स्वाध्याय ही पथ प्रदर्शक है। यह हमें पग-पग पर उत्पन्न दुविधाओं से मुक्त करता है। आत्मा में स्फुरण उत्पन्न करता है। जब आत्मा उद्वेलित होती है, तो कुछ नया करने की प्रेरणा मिलती है। स्वाध्याय हर मनुष्य के लिए प्राणवायु है। एक शिक्षक के लिए स्वाध्याय उतना ही आवश्यक है, जितना मृत्यु के निकट पहुँचे मानव के लिए संजीवनी।

वर्तमान युग वैज्ञानिक-युग है। नये-नये आविष्कार स्वाध्याय के आधार पर ही हो रहे हैं। गहन-मनन, मंथन और जिज्ञासा शरीर में स्फूर्ति का संचरण करते हैं। गहन-मनन के लिए स्वाध्याय जीवन-पर्यन्त आवश्यक है।

मुझे पाठ्यपुस्तक का एक-एक शब्द याद है– इस प्रकार का विचार स्वाध्याय में बाधा उत्पन्न करता है। पाठ्यपुस्तक की सामग्री को किस प्रकार से विद्यार्थी के सामने प्रस्तुत करें, ताकि वह सहज ही उसे स्वीकार कर ले और बोझ न समझकर नया ज्ञान प्राप्त करने के लिए तत्पर रहे।

स्वाध्यायी-शिक्षक न केवल पाठ्यसामग्री का ज्ञाता बन जाता है, वरन् वह उसे सारगर्भित, सहज और प्रायोगिक पृष्ठभूमि से ओतप्रोत कर देता है। स्वाध्याय अध्यापन की पूर्व तैयारी ही है। पूर्व तैयारी में विषय ज्ञान के अलावा उसे प्रस्तुत करने हेतु अन्य किस सामग्री (सहायक सामग्री– यथा चित्र, चार्ट, मॉडल, प्रयोग, खेल) की आवश्यकता पड़ेगी? इस प्रकार की पूर्व जानकारी पाठ को रुचिकर, ग्राह्य बनाने में सहायक सिद्ध होगी।

स्वाध्याय हेतु शिक्षक को निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखना होगा–

1. वह विषय का ज्ञाता होना चाहिए। इसके लिए पाठ्यपुस्तक के अलावा संदर्भ पुस्तकों, सामयिक विषय सामग्री तत्कालीन खोज, आविष्कार, अनुसंधान की जानकारी रखना नितांत आवश्यक है। वह विषय का ज्ञाता हो, इसके लिए उसे निरंतर स्वाध्याय की आवश्यकता है।

पुनरावृत्ति ज्ञान का परिमार्जन करती है। विषय की पूर्ण जानकारी का दम्भ न रखकर, विस्मरण को ध्यान में रखकर स्वाध्याय की पुनरावृत्ति अत्यावश्यक है। सूक्ष्म से सूक्ष्म जानकारी देने के लिए और स्वयं सूक्ष्म जानकारी प्राप्त करने के लिए स्वाध्याय के अतिरिक्त और कुछ भी उपयोगी नहीं है। स्वाध्याय विषय सम्बन्धित समस्या का समाधान तो करता ही है, साथ-साथ किस सहायक सामग्री के द्वारा इसका हल होगा– मार्ग प्रशस्त करता है। अवकाश के साथ स्वनिर्मित सहायक सामग्री विषय को रुचिकर बनाने के साथ-साथ सहज ग्राही बना देने में सहायक और सक्षम होती है। प्रयोगों का पूर्व अभ्यास विषय को सरल बना देता है।

भाषायी शिक्षक के लिए स्वाध्याय अत्यंत महत्वपूर्ण है। शब्दकोश की उत्तरोत्तर वृद्धि, व्याकरण की विस्तृत जानकारी, भाषा की विविध विधाओं का प्रस्तुतिकरण, वर्तनी का सही-सही उपयोग, सही उच्चारण हेतु स्वाध्याय शिक्षक के अस्त्र-शस्त्र बनकर उसकी रक्षा करते हैं। भाषा की विभिन्न विधाओं का सामंजस्य, एक रचना का दूसरे साहित्यकार की रचना से तुलनात्मक अध्ययन के लिए स्वाध्याय अत्यावश्यक है। भाषा शिक्षक कक्षा-स्तर के अनुरूप विषय को सरल, सहज-ग्राह्य बनाने में स्वाध्याय का दामन थाम कर सागर पार करने में सक्षम हो सकता है।

2. प्राथमिक शिक्षक को सभी विषय पढ़ाने होते हैं। उसे सभी विषयों की पाठ्यसामग्री के सह-सम्बन्ध का ध्यान रखना होता है। जिससे सभी विषय आपस में जुड़कर सरसता बनाये रखें। इसके लिए स्वाध्याय द्वारा ही किस विषय का किस विषय से कहाँ सम्बन्ध जोड़ा जाये, पूर्व में ही पता लग जाता है। सहसम्बन्ध, सहायक सामग्री का चयन, खेलकूद, भ्रमण, सर्जनशक्ति का विकास सभी का समन्वय केवल स्वाध्याय द्वारा ही हो पाएगा।

3. स्वाध्याय में लेखनी व कागज का उपयोग भावी योजना के प्रारूप बनाने हेतु उतना ही आवश्यक, जितना विषय से सम्बन्धित पुस्तक व सन्दर्भ पुस्तकें।

4. स्वाध्याय को बोझ के रूप में न मानकर भावी पथ-प्रदर्शक समझना ही श्रेयकर होगा।

5. स्वाध्याय को पूर्ण रुचिकर बनाने हेतु समय-विभाजन आवश्यक है। प्राथमिक कक्षाओं में सभी विषयों को समान महत्व देते हुए समय-विभाजन करना चाहिए। सह-सम्बन्ध का ध्यान भी रखना चाहिए। किसी एक विषय का स्वाध्याय अन्य विषयों को अरुचिकर बना देगा।

6. दृश्य-श्रव्य उपकरणों– रेडियो, दूरदर्शन और कम्प्यूटर का उपयोग स्वाध्याय में सहायक सिद्ध होगा।

7. विभिन्न पत्र-पत्रिकाएँ भी स्वाध्याय का स्रोत बन सकती हैं।

शिक्षक, जिसके लिए अनवरत ज्ञान प्राप्ति अत्यावश्यक है, स्वाध्याय द्वारा ही सकारात्मक रुख अपनाकर लक्ष्य की प्राप्ति करने में सफल हो पाएगा। स्वाध्याय शिक्षक की सफलता की कुंजी है।

–मुरारी लाल कटारिया, सेवानिवृत्त व्याख्याता
554, शास्त्री नगर, दादाबाड़ी, कोटा-324009

स्वाध्याय से आती है शिक्षण में निपुणता

हमारे वेदों एवम् नीति शास्त्रों में स्वाध्याय पर विशेष जोर किया गया है। वैदिक काल में तो यह हमारी गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का अभिन्न अंग था। शिष्य गुरु के सान्निध्य में अध्ययन करते फिर स्वाध्याय एवम् चिन्तन-मनन करते। यह बात पूर्ण रूप से सत्य है कि निरन्तर स्वाध्याय करने से हमारे मस्तिष्क में ज्ञान का अक्षय भण्डार हो जाता है। स्वाध्याय के महत्व को कवि वृन्द ने अपनी रचना में प्रकट करते हुए कहा है– करत-करत अभ्यास ते, जड़मति होत सुजान।/रसरी आवत जात पे, सिल पर परत निसान॥

आप कितनी भी डिग्रियाँ ले लें, अच्छे अंक प्राप्त कर लें, ये सब आपकी औपचारिक योग्यता के मापदण्ड हो सकते हैं लेकिन आपकी असली योग्यता के नहीं। आप जब तक किसी भी विषय में गहराई से नहीं उतरेंगे आपका उस विषय पर अधिकार नहीं हो सकता। यदि आप पारंगत होना चाहते हैं तो यह सब स्वाध्याय और चिन्तन मनन से ही सम्भव है।

स्वाध्याय से मुझे कितना लाभ मिला है इस सन्दर्भ में मैं अपने अनुभव आपमें बाँटना चाहूँगी।

मेरा परिवार आर्य समाजी था। मेरी माँ नित्य हवन करती थीं तथा उसके पश्चात् कोई न कोई धार्मिक पुस्तक अवश्य पढ़तीं। उन्होंने मुझे दयानन्द सरस्वती जी का एक प्रेरक प्रसंग सुनाया था कि स्वामी जी के नित्य ही शौच के बाद वापिस आते ही उनका एक शिष्य उनके हाथ धुलवाता। स्वामी जी मिट्टी से लोटे को अच्छी तरह माँजते तथा अपने हाथ धोते ऐसे ही एक दिन उनके शिष्य ने हाथ धुलवाते हुए स्वामी जी से पूछा– स्वामी जी आप तो सब वेद शास्त्रों के ज्ञाता हैं फिर आप नित्य स्वाध्याय क्यों करते हैं?' स्वामी जी ने शिष्य के प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया तथा लोटे को बिना स्वच्छ किये ही एक ओर रख दिया। अब स्वामी जी नित्य अपने हाथ पैर तो धोते पर लोटे को नहीं माँजते। शिष्य देखता पर कहता कुछ नहीं। दस-पन्द्रह दिन ऐसे ही निकल गये। एक दिन उससे नहीं रहा गया, वह बोला स्वामी जी यह लोटा आप माँजते क्यों नहीं? लोटा कितना गन्दा हो गया, कितनी धूल गन्दगी जम गई है। इसने तो अपनी असली चमक ही खो दी। स्वामी जी मुस्कुराये, बोले– यह तुम्हारे प्रश्न का उत्तर है। यदि तुम नित्य स्वाध्याय नहीं करोगे, चिन्तन मनन नहीं करोगे, ज्ञान पिपासु नहीं बनोंगे तो जो स्थिति लोटे की है वो ही स्थिति तुम्हारे मस्तिष्क की हो जाएगी। तुम्हारे मस्तिष्क पर भी अज्ञानता की गर्त छा जाएगी।

बचपन से सुने इस प्रसंग ने मन, मस्तिष्क पर बहुत प्रभाव डाला। जिसके फलस्वरूप पढ़ाई के साथ-साथ ज्ञानवर्धक पुस्तकें पढ़ना, समाचार पत्र पढ़ना, साहित्यिक पत्र पत्रिकाएँ पढ़ना मेरी दिनचर्या में शामिल हो गया था। उसका मुझे फल भी मिला।

मेरी बी.एड. की परीक्षा थी उस समय 10+2+3 शिक्षा प्रणाली लागू नहीं हुई थी लेकिन सुना था कि इस प्रणाली को आगामी वर्षों में लागू

किया जायेगा। इस विषय में छात्रों को अधिक जानकारी भी नहीं थी, न ही शिक्षक महोदय ने इस विषय को गम्भीरता से लिया था। जिस दिन मेरी परीक्षा थी उससे एक-दो दिन पूर्व एक पत्रिका में 10+2+3 शिक्षा प्रणाली के सन्दर्भ में एक विशेष लेख निकला। आदत के अनुसार मैंने उसे पढ़कर नोट कर लिया। परीक्षा के लिए जाने से पूर्व मैंने उसे सरसरी निगाह से पढ़ लिया। मैंने सोचा पढ़ने में क्या हर्ज है। शायद इसमें से परीक्षा में कुछ आ जाये।

जब मेरे हाथ में प्रश्नपत्र आया तो मैं एकदम उछल पड़ी। क्योंकि प्रश्नपत्र में पहला प्रश्न 20 अंक का था तथा उसे करना अनिवार्य था तथा उसमें 10+2+3 का पाठ्यक्रम एवम् विशेषताएँ पूछी गईं थीं। उस दिन स्वाध्याय की प्रवृत्ति मेरे काम आई थी। मुझे स्वाध्याय की ताकत का अहसास हो गया था। यह सत्य है कि स्वाध्याय से जहाँ विषयवस्तु की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है वहीं सृजनात्मक शक्ति का विकास भी होता है।

स्वाध्याय की प्रवृत्ति ने मुझे पग-पग पर लाभ पहुँचाया। चाहे हिन्दी व्याख्याता के पद पर चयन हो, चाहे शिक्षण कार्य हो। हम जितना अधिक स्वाध्याय करेंगे। हमारा आत्मविश्वास मजबूत होगा।

जहाँ तक स्वाध्याय की ताकत और व्यावसायिक निपुणता की बात है तो कोई भी क्षेत्र हो, स्वाध्याय से लाभ ही प्राप्त होता है। जैसे– आप शिक्षक हैं कक्षा में जाते हैं। अभी-अभी छात्र पाठ से इतर प्रश्न पूछ लेते हैं। यदि आप में स्वाध्याय की प्रवृत्ति होगी तो आप उनकी शंका का तुरन्त समाधान कर देंगे, अन्यथा आपको जवाब देते नहीं बनेगा। तब आपकी छात्रों के समक्ष क्या स्थिति होगी, इसलिए यदि हमें व्यावसायिक निपुणता हासिल करनी है तो स्वाध्याय को अपनी ताकत बनाना होगा तथा छात्रों को भी स्वाध्याय का महत्व बताते हुए उन्हें स्वाध्याय के लिए प्रेरित करना होगा।

–अलका सक्सेना, व्याख्याता (हिन्दी) रा.बा.उ.मा. विद्यालय, धौलपुर (राज.)

स्वाध्याय : चिन्तन, मनन एवं सृजन क्षण

शिक्षित होने के लिए विद्यार्जन के साथ-साथ हर प्रकार से समर्थ बनाना है। विद्या का अर्थ वास्तविक ज्ञान से तथा समर्थ का तात्पर्य जीवन के संघर्षों से जूझने की क्षमता पैदा करना है।

बालक एक क्रियाशील प्राणी है। अध्यापक बालक को उचित वातावरण देता है। ताकि उसकी ऊर्जा का समुचित उपयोग हो सके। उनकी चित्तवृत्तियों पर सर्वाधिक ध्यान देता है। ज्ञान थोपने के बजाय आयु, स्तर के अनुसार, रुचि के अनुसार सिखाता है। शिक्षक बालक में जिज्ञासा उत्पन्न करता है।

आदर्श अध्यापक तकनीकी कौशल द्वारा बालक के अन्दर पनप रहे चिन्तन, मनन तथा अन्तर्दृष्टि को बाहर निकाल कर सर्वांगीण विकास करता है। स्वयं समस्या का हल करने हेतु प्रेरित करता है। जिससे आत्मनिर्भरता की भावना विकसित होती है। आत्मविश्वास बढ़ता है। स्वतंत्र चिन्तन एवं रचनात्मक कार्य हेतु परिवेश प्रदान करता है।

शिक्षा का अर्थ केवल अध्ययन ही नहीं अपितु चिन्तन, मनन एवं सृजन का समन्वित रूप है। शिक्षा मानव को ज्ञान-विज्ञान से परिचित कराती है। शिक्षा के दौरान प्रेरक प्रसंग, ओजस्वी देश प्रेम से ओतप्रोत कहानियाँ, स्वाध्याय, पुस्तकालय, पुस्तकें, मेले, विज्ञान मेले, प्रदर्शनी, सन्दर्भ पुस्तकें, आधुनिक ज्ञान के प्रति नई सोच, चिन्तन एवं अभिव्यक्ति के लिए प्रेरित करते हैं। स्वाध्याय अर्थात् मनन करना इसके बिना विषय की गहराई में पहुँचना असम्भव है। ज्ञान की गहराई और गम्भीरता ही विद्यार्थी एवं शिक्षक में अनुसंधानात्मक सोच प्रदान करती है। स्व के समझने व जीवन के प्रति सही दृष्टिकोण विकसित करने की आवश्यकता है। सिद्धान्त को व्यवहार से जोड़ना एवं स्वतंत्र चिन्तन की क्षमता का विकास करना है। बालकों में भरपूर ऊर्जा के साथ तीव्र लालसा एवं क्रियाशीलता होती है। बालक इस सम्पूर्ण ऊर्जा का उपयोग रचनात्मक कार्यों में कर सकता है। स्वाध्याय द्वारा तार्किक एवं उत्तरदायित्वपूर्ण अभिवृत्ति विकसित की जा सकती है। स्वाध्याय द्वारा स्वतंत्र चिन्तन एवं मनन द्वारा तर्क शक्ति विकसित करना है।

प्रत्येक बालक की अपनी विशेषता होती है। बालक सृजनात्मक शक्ति की बन्द पोटली है। शिक्षक को ही उस पोटली को खोलकर उसकी शक्ति का अहसास करवाना है। उसे उचित दिशा देनी है। वर्ष भर बालक ऊब जाता है ग्रीष्मावकाश में वह अध्ययन से हटकर कार्य करना पसन्द करता है। ग्रीष्मावकाश में अभिरुचि और सद्वृत्तियों को प्रदर्शित एवं विकसित करने का अवसर होता है।

ग्रीष्मावकाश का उपयोग किन सृजनात्मक कार्यों में किया जाये। प्रत्येक व्यक्ति की अभिरुचियाँ, मानसिक एवं भावनात्मक स्तर के अनुरूप भिन्न-भिन्न होती हैं। साथ ही आयु स्तर, सामान्य एवं विशिष्ट बालकों की मनःस्थिति में भी काफी अन्तर होता है, जिससे उनकी रुचियों एवं वृत्तियों में भी भिन्नता होती है।

कई स्वयंसेवी संस्थाएँ एवं व्यावसायिक संस्थाएँ अभिरुचि शिविर संचालित करते हैं। जैसे– संगीत, पेंटिंग, नाटक, नृत्य, खेल, पाक कला, मल्टीमीडिया, इलेक्ट्रोनिक्स, कम्प्यूटर, हस्तशिल्प, डिजाइनिंग, मेहन्दी, रंगोली, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, कुकिंग, कहानी, गीत, कविता, लेख, निबन्ध, अन्य गद्य पद्य विधा में साहित्यिक लेखन, गायन, वादन, चित्रकला, संगीत, टिकिट संकलन, मृणशिल्प, कोलाज, रंगोली, बागवानी, पशुपालन, वृक्षारोपण, सब्जी उत्पादन, साक्षरता, पुस्तैनी व्यवसाय एवं कला का विकास पर स्वयं की रुचि से अपना समय सृजनात्मक कार्य में लगाकर ग्रीष्मावकाश का सदुपयोग कर अपनी कल्पनाशीलता, सृजनशीलता का परिचय दे सकता है तथा प्रशिक्षण प्राप्त कर व्यावसायिक कुशलता प्राप्त कर सकता है। ऐतिहासिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक पर्यटन द्वारा भी चिन्तन शक्ति को बढ़ा सकता है।

सद्साहित्य का पठन करके भी मनोरंजन एवं ज्ञान दोनों उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है, जिन्होंने समय का सदुपयोग किया है वे अन्य सभी से अग्रणी रहे हैं। अवकाश दुगुने उत्साह से अन्य गतिविधियों से जुड़ने का अवसर है। अवकाश रुचि परिवर्तन का नाम है। सृजन का नाम है। व्यावसायिक कुशलता अर्जित करने का नाम है।

गत दिनों एक प्रतिष्ठित पत्रिका में शशि थरूर का साक्षात्कार पढ़ने का अवसर मिला। उन्होंने अपनी वर्षगाँठ पर 365 दिनों में 365 पुस्तकें पढ़ने का प्रण लिया और उसका पालन भी किया वो भी श्रेष्ठ पुस्तकें पढ़कर। कभी-कभी तो वे पुस्तकों को लाइब्रेरी से घर लेकर पहुँचने से पहले ही पढ़ लेते थे। इसी समय प्रबन्धन के कारण वे सबसे कम उम्र के 'अण्डर सेक्रेटरी जनरल' बन सके। सफलता यूँ ही लॉटरी में या रास्ते में नहीं मिल जाती। सफलता के लिए परिश्रम के साथ-साथ समय का सदुपयोग करना है।

–गायत्री शर्मा, अध्यापिका, जयपुर

प्रतिध्वनि

तेरा तुझको अर्पण

शिविरा पत्रिका के 52वें वर्ष का यह अन्तिम अंक है। इस वर्ष की शुरुआत गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर विशेषांक से हुई थी जो स्वाध्याय विशेषांक के रूप में पूर्ण हो रही है। हमारा सदैव यह प्रयास रहा है कि सुधिपाठकों को शिक्षण व अधिगम से सम्बन्धित सामयिक व उपयोगी सामग्री उपलब्ध करवाई जाए। शिविरा की अपनी विशिष्ट थाती रही है; इसके सम्पादकों की साधना से राजकीय क्षेत्र में प्रकाशित होने वाली चोटी की गिनीचुनी पत्रिकाओं में शिविरा का नाम आता रहा है। कदाचित शिविरा जैसी प्रकाशकीय निरन्तरता तथा प्रतिमानों में रहते हुए सामग्री के प्रस्तुतिकरण का उदाहरण शायद ही और कहीं मिले। ऐसी प्रतिक्रियाएँ शिविरा के पाठकों, रचनाकारों एवं शुभचिन्तकों से सुनने को मिलती रहती हैं। कहना न होगा, इससे प्रसन्नता भी होती है और अतिरिक्त मेहनत, प्रतिबद्धता एवं समर्पण के साथ बेहतर करने की प्रेरणा भी मिलती है।

शिविरा के 52वें वर्ष में यों तो सभी अंक सामग्री व संयोजन की दृष्टि से अपने आपमें विशिष्ट रहे हैं तथापि टैगोर विशेषांक (मई-जून, 2011), गाँधी विशेषांक (अक्टूबर, 2011), शिक्षा का अधिकार विशेषांक (जनवरी, 2012) तथा स्वाध्याय विशेषांक (मई-जून, 2012) निश्चय ही उल्लेखनीय रहे हैं। शिक्षक दिवस एवं राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के सन्दर्भों के साथ सितम्बर, 2011 एवं फरवरी/मार्च 2012 के अंकों को तद्नुसार प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास किया। यह सब हमारे आदरजोग पाठकों, रचनाकारों, कलाकारों, चित्रकारों की कृपा का फल है।

हमें इस बात को लेकर सन्तोष है कि इस वर्ष के दौरान शिक्षा, दर्शन एवं साहित्य क्षेत्र की स्वनामधन्य हस्तियों ने शिविरा के लिए अपनी अमूल्य रचनाएँ लिखीं और यथासमय हमें उपलब्ध करवाई। इस कड़ी में भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारी, मनीषी विद्वान आदरजोग श्री अनिल बोर्दिया, डॉ. के.के. पाठक एवं श्री श्यामसुन्दर बिस्सा के प्रति हम विनम्रता से आभार प्रकट करते हैं। उनकी प्रशासनिक व्यस्तता का इल्म होते हुए भी हम निवेदन करने से नहीं शरमाए तथा शिविरा को अपनी स्वयं की पत्रिका मानकर वे निरन्तर कृपा बरसाते रहे। इस अंक में पाठक साहब का आलेख हमारे बालहठ का परिणाम कहा जा सकता है। पूरी रात जगकर लिखा पाठक सर का यह लेख लाखों पाठकों को जगाएगा, इसमें कोई संशय नहीं है। एक बार पुनः आभार।

इसी कड़ी में डॉ. विजय शंकर व्यास, डॉ. नन्द किशोर आचार्य, श्री शुभू पटवा, श्री तेजकरण डण्डिया, श्री शिवरतन थानवी, श्री चतरसिंह मेहता, श्री भवानी शंकर व्यास, डॉ. दाऊदयाल गुप्ता, डॉ. श्रीलाल मोहता, डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, श्री रूपनारायण काबरा, श्री वेदव्यास, श्री श्याम महर्षि जैसे उद्भट विद्वानों की कलम से प्रसूत अत्यन्त उपयोगी रचनाएँ छापने का सौभाग्य शिविरा को इस वर्ष में मिला। इतना ही नहीं, पूर्व राष्ट्रपति एवं महान वैज्ञानिक शिक्षक डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, प्रोफेसर कृष्ण कुमार, श्री आत्म प्रकाश मिश्र, गुरुदेव श्री राम शर्मा आचार्य, कविता राव जैसी महान विभूतियों के आलेखों का पुनर्मुद्रण भी शिविरा के विशाल पाठक परिवार के हित में हम कर सके। इन महानुभावों के अलावा सैकड़ों लेखकों ने अपनी रचनाएँ भिजवाकर हमें कृतार्थ किया है। स्वाध्याय विशेषांक हेतु 60 से भी अधिक उपयोगी रचनाएँ रिकार्ड समय में हमें मिलीं। हम सभी रचनाकारों के प्रति अपना विनम्र आभार प्रकट करते हुए आशा करते हैं कि उनकी यह कृपा भविष्य में सतत बनी रहेगी।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की रचनाओं में से शिक्षा सम्बन्धी चुनिन्दा आलेखों को शृंखलाबद्ध प्रकाशित करने की योजना के तहत उनकी पुस्तक 'बापू की सीख' के आलेख नियमित रूप से प्रतिमाह प्रकाशित किये जा रहे हैं।

स्वाध्याय की महिमा विशेषांक निकालने का विचार कई महीनों से बन रहा था। वस्तुतः स्वाध्याय महिमा का श्रीगणेश तो हमारे वर्तमान शिक्षा शासन सचिव श्री भास्कर ए. सावन्त ने शिक्षा आयुक्त रहते माह अगस्त 2011 में कर दिया था। तब उन्होंने न केवल शिक्षकों के नाम एक पाती जारी की थी; अपितु स्वयं ने व्यक्तिशः शिविरा का वार्षिक चन्दा जमा करवाकर एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया था। सावन्त सर द्वारा शिक्षकों के नाम लिखी वह पाती शिविरा के स्वाध्याय विशेषांक के सन्दर्भ में अधिक सामयिक हो गई है। सुधि पाठकों के लिए इसे शिविरा के इसी अंक में पृष्ठ सं. 8 पर प्रकाशित किया जा रहा है। मई-जून का अंक स्वाध्याय को समर्पित करने के पीछे निहित उद्देश्य यह है कि इस अंक में स्वाध्याय की महिमा को पढ़ने-जानने से जागृत उद्वेलना को पठन-पाठन के जरिये शान्त करने का सुअवसर ग्रीष्मावकाश के रूप में हमारे गुरुजन को मिल जाए।

और अन्त में, शिविरा के लाखों पाठकों के प्रति हार्दिक आभार, जिन्होंने अपनी प्रिय पत्रिका को न केवल पढ़ा और रचनात्मक सहयोग दिया अपितु समय-समय पर पाठकीय प्रतिक्रिया के माध्यम से इसे और बेहतर बनाने के लिए अपने उपयोगी सुझाव हमें भिजवाए। सच तो यह है कि कोई पत्र/पत्रिका अन्ततः उसके पाठक परिवार की ही होती है। उनकी कृपा में ही पत्रिका व सम्पादकों का हित निहित रहता है। हम हमारे सुधि पाठकों की कुशलता व उन्नति की कामना करते हुए सफलता व सुनाम उन्हें अर्पित करते हैं– ***त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये।*** तेरा तुझको अर्पण क्या लागे मोरा। इत्यलम्।

–ओमप्रकाश सारस्वत, व.सं.
opsaraswat58@gmail.com

''मई-जून का अंक स्वाध्याय को समर्पित करने के पीछे निहित उद्देश्य यह है कि इस अंक में स्वाध्याय की महिमा को पढ़ने-जानने से जागृत उद्वेलना को पठन-पाठन के जरिये शान्त करने का सुअवसर ग्रीष्मावकाश के रूप में हमारे गुरुजन को मिल जाए।''

प्रकाशक, मुद्रक, सम्पादक हर सहाय मीणा द्वारा डिपार्टमेंट ऑफ एज्यूकेशन गवर्नमेंट ऑफ राजस्थान, बीकानेर के लिए माध्यमिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर से प्रकाशित एवं कोटावाला ऑफसेट, 82, सुदर्शनपुरा, इण्डस्ट्रियल एरिया, जयपुर से मुद्रित। **© प्रधान सम्पादक : हर सहाय मीणा**

अलवर : राजकीय उ.प्रा. विद्यालय, नं. 4, दीवानगी का बाग में आयोजित वार्षिकोत्सव में बालिकाओं को पुरस्कृत करते अतिथिगण।

सिरोही : राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, वेलांगरी की बालिकाओं को साइकिल वितरण की गई।

श्रीगंगानगर : राजकीय उ.मा. विद्यालय, 31 पी.एस. के प्रधानाचार्य श्री सन्तोख सिंह ने अपनी सेवानिवृत्ति के अवसर पर विद्यालय को 35000 रुपये लागत का जेनरेटर भेंट किया।

चूरू : राजकीय माध्यमिक विद्यालय, बैरासर छोटा की छात्रा सुनिता की दुर्घटना में मृत्यु हो जाने पर विद्यार्थी सुरक्षा दुर्घटना बीमा की राशि दिवंगत छात्रा की माँ को प्रदान की गई।

सीकर : राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय, छावनी, नीमकाथाना में नशा मुक्ति अभियान के अन्तर्गत पोस्टर प्रदर्शनी एवं सेमिनार का आयोजन किया गया। इस अवसर पर नशे के दुष्परिणामों से उपस्थित अभिभावकों एवं बालिकाओं को अवगत करातीं गाइडर श्रीमती निर्मला देवी।

डाक पंजीयन संख्या
RJ/JPC/M-29/2011-13

शिविरा पत्रिका (मासिक) मई-जून, 2012
प्रकाशन तिथि : 2 मई, 2012 पृष्ठ 52
प्रेषण : हर माह की 5, 6 तारीख

समाचार-पत्र पंजीयन संख्या
10350/66

राजस्थान के वरिष्ठ साहित्यकार एवं कलाविद् डॉ. प्रेमचन्द गोस्वामी का 14 मार्च, 2012 को निधन हो गया। शिविरा की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि स्वरूप श्री गोस्वामी की तूलिका से निर्मित तंत्र आधारित चित्र प्रस्तुत है।
फोटो सौजन्य : श्री योगेन्द्र सिंह नरूका, व्याख्याता (चित्रकला), राजकीय उ.मा. विद्यालय, सोनवा (टोंक)।